चूसने लगी।

पास के कमरे से बिटिया की मा ने पुकारा - 'फिर तू वहां धरना देकर बैठी है ? चल, उठ, इधर आ।'

इन्दिरा पुरखिन ने कहा - 'रहने दो वहू, मेरे पास बैठी है, कुछ कर नही रही, रहने दो।'

फिर भी बिटिया की मा ने डाट बताते हुए कहा : 'चुप बैठी है सही, पर किसीके खाते समय वह इस तरह बैठे ही क्यो ? मुझे यह सब अच्छा नही लगता, मैं कहती हू चली आ…'

बिटिया डरकर चली गई।

इन्दिरा पुरखिन के साथ हरिहर का रिश्ता दूर का था। वह उसकी ममेरी वहिन लगती थी। हरिहर राय के पुरखो का आदिस्थान पास का गाव जसडा विष्णुपुर था। हरिहर के पिता रामचन्द्र राय कम उम्र मे ही विधुर हो गए थे। उन्हे इस बात का दुःख था कि दूसरी शादी के लिए पिताजी कुछ कान-पूछ नही हिला रहे हैं। साल-भर किसी तरह शरमा-शरमी मे काटकर जब उन्होने देखा कि पिताजी इस तरफ कोई ध्यान ही नही दे रहे है, तब रामचन्द्र ने निराश होकर प्रत्यक्ष और परोक्ष मे तरह-तरह के हथियार चलाने शुरू किए। दोपहर के समय कही कुछ नही पर स्वस्थ रामचन्द्र खाने के बाद बिस्तरे पर छटपटाने लगे। किसीने आकर पूछ लिया कि भाई क्या हाल है, तो फौरन ही रामचन्द्र यह सुर अलापने लगते 'आगे नाथ न पीछे पगहा, अब कौन बैठा है जो मेरी देख-भाल करे। जोरू न जाता खुदा से नाता, अब मरें चाहे जीए, कोई पूछनेवाला नही है।'

नतीजा यह हुआ कि निश्चिन्दिपुर गाव मे रामचन्द्र की दूसरी शादी हो गई। शादी के कुछ ही दिनो बाद पिताजी का स्वर्गवास हो जाने के कारण रामचन्द्र ने जसडा विष्णुपुर का वूदोवास उठा दिया और यही बस गए। उस समय उनकी उम्र बहुत कम थी।

इस गाव मे आने के बाद रामचन्द्र ससुर साहब की देखरेख मे पाठशाला मे सस्कृत पढने लगे। आगे चलकर उनकी गिनती इस इलाके के अच्छे पडितो मे हो गई। पर वे कभी काम-काज मे मन ही न



लगाते। इसमे भी सन्देह है कि वे इस लायक थे भी या नही। उनके बाल-बच्चे साल मे नौ महीने ससुराल मे पडे रहते थे। वे स्वय मुहल्ले के पतिराम मुखर्जी के पास के अड्डे मे जमे रहते थे, बस दोनो जून खाते समय ससुराल पहुच जाते थे। यदि कोई पूछता 'पडितजी, आपके बाल-बच्चे हैं, उनका भविष्य भी तो देखना है।' तो वे कह देते थे : 'सोचने की कोई बात नही है। ब्रज चक्रवर्ती के धान के खलिहान के नीचे बीन-बानकर ही खाएगे, तो भी दो पुश्तें मजे मे निकल जाएगी।'

यह कहकर वे इसी चिन्ता मे डूब जाते थे कि किस तरह छक्का-पजा मारकर विपक्षी के दात खट्टे कर सकेंगे।

ब्रज चक्रवर्ती के खलिहान की नित्यता के सम्बन्ध मे उन्हे जो आस्था थी, वह कितनी गलत थी इसकी कलई ससुर साहब के मर जाने के बाद फौरन ही खुल गई। न तो उनके पास इस गाव मे कोई जमीन थी और न नकदी ही ज्यादा थी। इधर-उधर से बटुर-बटार कर दो-चार यजमान हाथ लग गए। किसी ढग से गृहस्थी चलने लगी और लडके का पालन-पोषण होने लगा। उनके पहले उनके एक दूर के रिश्ते के भाई की शादी भी उनकी ससुराल मे ही हुई थी। वे भी तब से यही जम गए थे। उनसे रामचन्द्र को बडी सहायता मिलती थी। उस भाई का लडका नीलमणि राय कमिसरियट मे नौकर था, नौकरी के कारण उसे बराबर प्रवास मे रहना पडता था। इसलिए उसने भी अन्त तक यहा की बूदोबास उठा दी। वह बूढी मा को अपनी नौकरी की जगह ले गया और अब यहा पर उनका कोई नही था।

सुना जाता है कि पूरब के एक नामी-गरामी कुलीन ब्राह्मण के साथ इन्दिरा पुरखिन की शादी हुई थी। जैसा कि कुलीनो मे होता था, पति महोदय साल-छ महीने मे एक बार इस गाव का चक्कर लगाते थे। एक-आध रात यहा काटकर राहखर्च और कुलीन ब्राह्मण की दस्तूरी वसूली कर, अपनी कापी मे चिह्न बनाकर कुली के सिर पर माल रखा-कर अगले नम्बर की ससुराल की ओर रवाना हो जाते थे, इसलिए इन्दिरा पुरखिन को पति की याद भी अच्छी तरह नही है। मा-बाप

दोनो के मर जाने पर वे भाई के आश्रय में दो मुट्ठी अन्न पर गुज़ारा कर रही थी। पर वाह रे नसीब, वह भाई भी कम उम्र मे ही चल बसा। हरिहर के पिता रामचन्द्र ने थोड़े दिन बाद यहा मकान बनाया और तब से इन्दिरा पुरखिन इस गृहस्थी का अग बन गई। यह कोई आज की बात नही है। इसको हुए युग बीत गए।

उसके बाद बहुत साल निकल गए। शाखारी तालाब मे न मालूम कितनी बार फूल खिले और मुरझा गए। चक्रवर्ती खानदान के खुले मैदान मे सीतानाथ मुखर्जी ने कलमी आमो के बाग लगाए। अब वे पेड़ भी बड़े हो चले। न जाने कितने नये घर आबाद हुए और कितने उजड भी गए, कितने गोलोक चक्रवर्ती, ब्रज चक्रवर्ती, मर-खप गए। इच्छामति नदी की चचल स्वच्छ जलधारा अनन्त काल-प्रवाह के साथ होड करती हुई गाव की नील की कोठी के न जाने कितनी जानसन, टामसन और उनके मजदूरो को तिनके तथा लहरो के फेन की तरह बहा ले गई। पर इन्दिरा पुरखिन अब भी जीवित हैं।

बगला सन् १२४० साल (१८३४ ई०) की वह छरहरी, हसमुख, तरुणी अब ७५ साल की बुढिया हो चुकी है। गाल पिचक गए हैं, कमर थोड़ी-सी झुक गई है, दूर की चीज़ें अब पहले की तरह साफ-साफ नज़र नही आती। कोई आहट होती है, तो वह हाथ उठाकर मानो आख को धूप से बचाती हुई कहती है— कौन है ? नवीन ? बिहारी ? नहीं, अच्छा तुम राजू हो !

इन्दिरा पुरखिन की आखो के सामने देखते-देखते कितना परिवर्तन हो गया। ब्रज चक्रवर्ती की उस जमीन पर, जहा अब जगल खड़ा है, शरदपूर्णिमा के दिन लक्ष्मीपूजा के लिए गाव के सारे लोग पत्तल बिछाकर न्योता जीमते थे। बडी चोपाल पर पासे-चोपड का कितना बड़ा अड्डा सुबह-शाम जमता था। अब वहा बास की कोठिया हैं। जब पूस के महीने मे नवान्न के उपलक्ष्य मे चावल की तरह-तरह की मिठाइया बनती थी, तब ढेंकी मे पक्का एक मन चावल कूटा जाता था।

आख बन्द करते ही इन्दिरा पुरखिन के सामने यह सारा दृश्य नाच उठता है। उसी राय बाड़ी की मझली बहू लोगों को साथ मे लेकर



चावल कुटाने आई थी। ढेंकी बराबर हचके के साथ ऊपर से नीचे और नीचे से ऊपर जा रही थी, सोने का कगनवाला सुन्दर हाथ एक बार सामने आता था, फिर फौरन ही पीछे हट जाता था, जगद्धात्री की तरह उनका रूप था और उसी तरह का स्वभाव और चरित्र भी।

जब इन्दिरा पुरखिन नई-नई विधवा हुई, तब हर द्वादशी के दिन सवेरे वे अपने हाथ मे कलेवा सजाकर उन्हें खिला जाती थी। वे सब लोग कहा चले गए ? उस युग का कोई भी तो जिन्दा नही है, जिसके साथ सुख-दु ख की दो बातें की जा सकें।

उसके बाद इस गृहस्थी मे जिसने उसे पहले-पहल आश्रय दिया था वे रामचन्द्र मर गए। उनका लडका हरिहर तो अभी उस दिन पैदा हुआ। वह पनघट के रास्ते मे कूदता-फादता खेलता रहता था। एक बार वह मुखर्जी के इमली के पेड की अधपकी इमली खाने गया था, उसीमे उसके हाथ-पैर टूट गए तो दो-तीन महीने तक बिस्तरे पर पडा रहा था। यह भी तो अभी उस दिन की बात है। कम उम्र मे ही बड़ी धूमधाम से उसकी शादी हो गई। वह पिता की मृत्यु के बाद दस साल की नई ब्याही हुइ जोरू को नैहर मे छोडकर रफू-चक्कर हो गया। आठ-दस साल तक उसका कही अता-पता नही मिला। जब कभी एकाध चिट्ठी आ जाती थी, या कभी-कभार बुढिया के नाम से दो-चार रुपये का मनीआर्डर भेज देता था। न मालूम कितने दिन इस घर को अगोरते बिना खाए पडोसियो के यहा से माग-जाचकर दिन कटते थे।

बहुत दिनो के बाद हरिहर ने इधर छ-सात साल से गृहस्थी मे मन लगाया था। उसके एक लडकी भी हुई थी, जो अब छ· साल की होने को आई। बुढिया सोचती थी कि बचपन की वह गृहस्थी फिर सभल गई। अपने सीमित जीवन मे उसने और कोई सुख नही चाहा था। और भी किसी प्रकार का सुख-दुख हो सकता है, इसपर उसने कभी सोचा भी नही था। वह तो बेचारी इतने से ही खुश थी कि बचपन से जिस प्रकार का दुखी जीवन बिताती आई है, उसमे कही कोई सास दिखाई पड़ जाए, कही कोई मोड़ नजर आए। उसके

लिए चरम सुख की कल्पना यही थी।

वह हरिहर की नन्ही-सी लड़की को एक घडी के लिए भी आखो से ओझल नही होने देती थी। उसके अपनी भी एक लड़की थी, जिसका नाम विश्वेश्वरी था। छोटी उम्र मे ही शादी हो गई और शादी के कुछ दिनो वाद ही वह गुज़र गई।' हरिहर की वेटी मानो चालीस साल बाद मृत्यु के उस पार से विश्वेश्वरी की जगह अपनी अनाथ मा की गोद भरने के लिए लौट आई थी। चालीस साल से बुझा हुआ तथा सोया हुआ उसका मातृत्व, इस लडकी को पाकर पुनरुज्जीवित हो गया था। केवल यही नही, कभी तो वह एकाएक व्याकुल भूख का रूप धारण कर लेता था। इस लडकी के चेहरे की भोली-भाली हसी मे धीरे-धीरे झेंप का भी एक पुट आने लगा, मानो उसने जन्म लेकर लोगो को विपत्ति मे डाल दिया है और उसके लिए उसे वहुत ही अफसोस हैं।

पर उसने जो चाहा था, सो नही हो सका। हरिहर की वहू यों देखने मे तो गोरी-चिट्टी थी, पर थी वड़ी कर्कशा। बुढिया उसे फूटी आंखों भी नही सुहाती थी। वह तो यही सोचती थी कि यह न जाने कौन है, कहा की है, इससे कोई रिश्ता ढूढे नही मिलता, वैठे-वैठे रोटिया तोड़ा करती है।

वह छोटी-छोटी वातों पर वुढ़िया से दिन मे कई-कई बार उलझ जाती थी। कई वार झगड़ा वढने पर वुढिया अपने पीतल के लोटे को काख के नीचे दवाकर और कपडो की पोटली लटकाकर कहती थी · 'नई वहू, मैं चली, फिर जो मैंने कभी इस घर मे पैर रखा तो मेरा···'

घर से निकलकर वुढिया झुझलाहट मे वांस की कोठी में वैठकर सारा दिन काट देती थीं। सध्या समय हरिहर की नन्ही-सी बिटिया पता लगाकर उसके पास पहुच जाती और उसका आचल पकड़कर घसीटने लगती थी . 'उठो फूफीजी, मा से कहूगी कि तुम्हे न डाटे। आओ फूफीजी !'

इस प्रकार बिटिया का हाथ पकड़कर बुढ़िया सध्या के अंधकार में घर लौट आती थी। सर्वजया मुह फेरकर कहती थी : 'आ गई



न ! जाएगी तो कहा जाएगी ? इस चूल्हे के अलावा जगह भी कहा है ? हालत तो यह है, पर अकडपने की हद नही ।'

ऐसा कई बार हुआ है और बीच-बीच मे होता ही रहता है ।

हरिहर के घर के पूरब की जमीन पर फूस के छप्परवाली एक कोठरी बहुत दिन से बिना मरम्मत के पडी है । इसी कोठरी मे बुढिया रहती है । बास की अरगनी पर मैली-कुचैली बेकिनारे की दो फटी साड़िया टगी हैं । उनमे जगह-बेजगह गाठ बाधकर जोडने की चेष्टा की गई है । अब बुढिया सुई मे तागा नही डाल पाती, सो कपडे सीने की सामर्थ्य जाती रही है । अब जब कपडा ज्यादा फट जाता है, तो गाठ बाध लेती है । एक तरफ एक फटी चटाई और कुछ उधडी हुई कथडिया हैं । एक पोटली मे दुनिया-भर के चीथडे गठियाए हुए हैं । ऐसा मालूम होता है कि कथडी सीने की सामग्री के रूप मे उन्हे बहुत दिनो से बटोर-बटारकर रखा गया है, पर कभी जरूरत नही पडी और अब जबकि जरूरत पडी तो कथडी सीने लायक आख मे जोत नही रही । फिर भी वे चीथडे सहेजकर रखे हुए हैं । हा, भादो की वर्षा के बाद धूप निकलने पर बुढिया उन्हे खोलकर बीच-बीच मे धूप मे डाल देती है । बेंत की सदूकची मे एक पोटली मे बधी हुई लाल किनारे की कुछ फटी साडिया हैं । ये बुढिया की लडकी विश्वेश्वरी की यादगार हैं । पीतल की चादर का एक लोटा, एक मिट्टी का सकोरा तथा मिट्टी की दो हडिया भी हैं । पीतल के लोटे मे भुना चावल रहता है । वह रात को इमामदस्ते मे कूटकर उसका सत्तू बनाकर बीच-बीच मे खाती है । मिट्टी की छोटी हडियो मे से किसीमे थोडा-सा तेल है, तो किसीमे जरा-सा नमक पडा है और किसीमे जरा-सा खजूर का गुड़ है । सर्वजया से मागने पर चीजें मिलती नही हैं इसलिए बुढिया इन्हे छिपाकर शादीवाली बेंत की सदूकची मे सजोकर रख देती है ।

सर्वजया शायद ही कभी इस कोठरी मे आती हो । पर सध्या के समय उसकी बिटिया कोठरी के दालान मे फटी कथडी के बिस्तरे मे घुसकर बडी देर तक फूफी से एकाग्र होकर कहानिया सुनती है । थोडी देर तक इधर-उधर की कहानिया सुनाने के बाद बिटिया कहती

है : 'फूफी, डाकुओंवाली वह कहानी तो सुनाओ…।'

गाव के एक गृहस्थ के यहां कोई पचास साल पहले डाका पड़ा था, यह उसीकी कहानी है। इसके पहले यह कहानी बीसियों दफे कही जा चुकी थी, पर बीच मे कई दिनो का अतरा हो जाता है, तो फिर से वह कहानी कहनी पडती है। बात यह है कि बिटिया छोड़ती ही नही। इसके बाद वह फूफी से तुकबन्दिया सुनती है। इन्दिरा पुरखिन को उस जमाने की बहुत-सी तुकबन्दियां याद थी। जब उनकी उम्र कम थी तो वे घाट या रास्ते मे अपनी सहेलियो को कविताएं तथा तुकबन्दियां मुहज़बानी सुनाती थी और इन्दिरा पुरखिन की तारीफ के पुल बंध जाते थे।

उसके बाद इस प्रकार की धैर्यवान् श्रोता और कोई नही मिली। कही ज़ग न लग जाए इस डर से वह अपनी सारी कविताओ और तुकबन्दियो को आजकल प्रतिदिन सन्ध्या समय भतीजी को सुनाने के लिए तैयार रहती है। वह रस ले-लेकर सुनाती है :

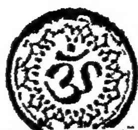
'ओ ललिते चापा कलिते एकटा कथा सुन से
राधार घरे चोर ढुके से…'

यहां तक बोलकर वह रुक जाती थी और मुस्कराती हुई प्रतीक्षा-भरी दृष्टि से भतीजी की ओर ताकती थी। बस, बिटिया भी जोश के साथ पदपूर्ति करती हुई कहती थी : 'चुलो बाधा एक मिनसे…'

वह 'मि' पर अकारण ज़ोर डालकर नन्हे-से सिर को ताल देने के ढग से झुकाकर पद का उच्चारण समाप्त करती थी। बिटिया को इसमे बहुत मज़ा आता था।

फूफी भतीजी को भुलावे मे डालने के लिए ऐसी तुकबन्दिया सुनाकर पदपूर्ति के लिए छोड़ देती थी, जिन्हे शायद दस पन्द्रह दिन से सुनाया नही गया, पर बिटिया ऐसी चालाक है कि वह झट पदपूर्ति कर देती है, भुलावे मे नही आती।

थोडी रात हो जाने पर जब मा खाने के लिए बुलाती है तो वह उठकर चल देती है।



एक आदमी आया। वह उस पुराने अमरूद के नीचे सध्या समय आकर खड़ा हुआ, ससुराल से आया था, हाथ मे एक पत्र था। चिट्ठी पढने के लिए कोई आदमी नही था। भाई गोलोक, सो भी पिछले साल मर गया था। इसलिए वह बडे चाचा के चौपालवाले पासे के अड्डे मे अपना पत्र लेकर पहुची। उस दिन की बात आज भी याद है। सझला ताऊ मझला ताऊ, व्रज चाचा, उस मुहल्ले के पतित राय के भाई यदुराय और गोलोक का साला भजहरि था। सझले ताऊ ने पत्र पढा। फिर आश्चर्य के साथ उन्होने पूछा 'इन्दिरा, यह चिट्ठी कौन लाया ?'

इसके बाद इन्दिरा पुरखिन को घर लौटकर उसी समय सुहाग का चिह्न, हाथ की लोहे की चूडी तथा प्रथम यौवन के शौक की वस्तु—मां-बाप के दिए हुए चादी के कगनो को खोलकर, माथे का सिंदूर पोछकर नदी मे डुबकी लगानी पडी। कितने दिनो की बात है यह। सब स्वप्नवत् हो गया, फिर भी ऐसा मालूम होता है जैसे कल ही की बात हो।

निवारण की बात याद आती है। व्रज चाचा का लडका निवारण। सोलह साल का लडका। कितना गोरा-चिट्टा था और कैसे सुन्दर बाल थे। उसका चौपाल अब जगल से ढक गया है, और बास की झाडियो का हिस्सा बन चुका है। उससे लगे हुए कमरे मे वह भयकर बुखार मे पडा रहा और दो-तीन दिनो तक ऐसा मालूम होता रहा कि अब गया, तब गया। हाय वह लड़का हर समय पानी-पानी करता था, पर ईशान वैद्य ने पानी देने से मना किया था, हिदायत यह थी कि वह सौफ की पोटली को धीरे-धीरे चूसे। निवारण चौथे दिन रात को मर गया। मरने से थोडे पहले तक वह पानी-पानी की रट लगा रहा था, फिर भी उसे एक बूद पानी नही दिया गया था। उस लडके के मर जाने के बाद पाच दिनो तक बडी चाची को कोई पानी तक नही पिला सका। पाच दिन के बाद जेठ रामचन्द्र चक्रवर्ती ने अपने भाई की बहू के कमरे मे जाकर उसके सामने हाथ जोडकर कहा : 'बेटी, तू अगर चली गई, तो मेरी दशा क्या होगी। इस बुढापे मे मैं कहा जाऊगा ?'

वडी चाची खानदानी अमीर घराने की लड़की थी, जगद्धात्री की तरह उनका चेहरा था; इस इलाके मे वैसी सुन्दर बहू किसीके यहा नही थी। उन्होने पति के पैर का धोवन बिना पिए कभी पानी तक नहीं पिया था, उस ज़माने की गृहिणी थी, खाना पकाकर घरवालों को तथा रिश्तेदारो को खिलाती थी, फिर तीसरे पहर कुछ मामूली खाना खा लेती थी। वह दान, पूजा-पाठ, अन्न बाटने मे स्वयं अन्नपूर्णा थी। वह स्वयं पकाकर लोगो को खिलाना पसन्द करती थी। इसलिए जेठ की बात से मन के किसी कोमल पर्दे पर चोट पड़ी, उसके बाद वह उठी, उसने पानी लिया, पर अधिक दिनो तक जीवित नही रहीं। वेटे की मृत्यु के डेढ साल के अन्दर ही उन्होने वेटे का अनुसरण किया।

—मां, ज़रा पानी दे, ज़रा-सा दे दे।

—पानी नही पीते वेटा, वैद्यजी ने मना किया है। पानी नही पीते।

—मा, इतना-सा दे। बस एक घूट…मैं तेरे पैरो पड़ता हूं…

दोपहर मे पेडो पर आश्रय लेकर वैठनेवाली चिड़ियों के चहचहाने से पचास साल के उस पार से बास का पटपट शब्द सुन पड़ता था।

बिटिया बोली: 'फूफी, तुझे नीद आ रही है? चल सोने के लिए चल।'

बुढिया ने हाथ के दा[१] को हटाकर कहा: 'लो देखो, फिर ऊघ-लग रही है, पर अब समय निकल गया, अब इनको खतम कर लू, ज़रा बड़ावाला औज़ार तो ले आ।'

बच्चा लगभग दस महीने का हो गया। दुबला-पतला, बहुत-ही नन्हा-सा मुखडा। नीचे के दो दात निकले थे। वह जब-तब वजह-बेवजह दूधवाले दो दांत निकालकर हसता है। लोग कहते हैं: 'बहू, तुम्हारे बच्चो की हसी बिल्कुल बयाना देकर बनाई हुई है।'

बच्चे को ज़रा छेड दो, तो वह हसना शुरू कर देता है, पागल की तरह खुद-बखुद हसता ही चला जाता है। उसकी मां कहती है: 'मुन्ना, रहने दो, आज बहुत हसे हो, कल के लिए भी कुछ रहने दो।'

---

१. नारियल आदि काटने के लिए एक प्रकार का छोटा-सा खड्ग।



कई बार ऐसा होता है कि हरिहर बाजार के हिसाब या लिखने-पढ़ने में व्यस्त है, इतने मे सर्वजया आकर कहती है : 'अजी, जरा बच्चे को सम्हालो। मुन्नी न जाने कहां चली गई है और ननद जो घाट गई हैं। मैं नहाने जाऊं या इसे ओगरती रहूं ?'

हरिहर कहता है : 'न-न-न-न यहा यह सब गड़बड़झाला नहीं चलेगा। मुझे बहुत ही जरूरी काम करने हैं।'

इसपर सर्वजया तैश में आकर लड़के को सामने बिठाकर चल देती है। हरिहर हिसाब लिखते-लिखते एकाएक देखता है कि उसका लड़का चप्पल मुंह में दिए है। हरिहर चप्पल छीन लेता है और कहता है : 'यह अच्छी मुसीबत रही, यहां काम पडा है।'

एकाएक एक गौरैया आकर आगन में बैठी। मुन्ना पिता के मुह की ओर ताकते हुए उस तरफ आश्चर्य के साथ हाथ हिलाकर कहता है : 'जे-जे-जे-जे।'

अब हरिहर की नाराजी टिक नही पाती और बरबस ममता उमड़ पड़ती है।

३

इन्दिरा पुरखिन को लौटे हुए छ-सात महीने हो गए, पर इस बीच मे सर्वजया ने उसके साथ एक दिन भी अच्छी तरह बातचीत नही की। आजकल उसे यह भी मालूम होता है कि उसकी लड़की इस बूढी, सात पीढी चाटकर बैठी हुई डाइन को उससे कहीं अधिक चाहती है। ईर्ष्या तो होती ही है, क्रोध भी आता है। इसने कोख की बेटी को गैर बना दिया। वह दोनों जून बात-बात मे बुढिया को अपना रास्ता देखने का इशारा करती है। पर यह रास्ता किधर है, होश आने से लेकर अब तक सत्तर साल की बुढिया को इसका कुछ पता नही मिला। इतने दिनों बाद उसका पता कैसे लगेगा, यह बुढिया सोच नही पाती।

जाड़ा पड़ने लगा। बुढिया उस मुहल्ले के गांगुली भवन मे जाकर बूढे रामनाथ गागुली से बोली : 'भैया राम, अब जाडा बहुत पड़ने

लगा है, कुछ ऐसा ओढना नहीं है कि सवेरे-शाम ओढ़-आढकर बैठें। तुम मुझे एक दिलवा दो…'

राम गागुली बोले : 'अच्छा दीदी, एक दिन आना। इस महीने मे तो कुछ होना-हवाना नही है, अगले महीने कोशिश करूगा।'

बहुत दिनो की दौड-धूप के बाद एक दिन उसने कुष्टिया की बनी-हुई लाल छीट की एक सूती चादर थमाते हुए कहा : 'लो दीदी, बडी गरम चीज है। दाम साढ़े नौ आने हैं, इससे अच्छी चीज नवाब-गज मे नही मिल सकती। मैं बुधवार को लाया था। खोलकर देखो न कैसा है ?'

बुढिया को अपने सौभाग्य पर विश्वास नही हो रहा था। वह खुशी से एक झलक हसकर उसे खोलकर ओढते हुए बोली : 'वाह, बहुत सुन्दर है, कैसा गफ कपडा है ! भैया, तुम जीते रहो। कन्हाई और बलाई जीते रहे। बड़ी उमर पाए। उस अन्नदा से एक चादर मागते तीन साल हो गए। वादा करके भी उसने नही दी। अब शौक मिटा लूं। अब हू ही कितने दिन की ?'

ज्योही उसने खुशी के मारे सर्वजया को वह चादर दिखलाई, त्योही तडाक से उत्तर मिला : 'देखो ननद जी, तुम्हे मैं साफ-साफ बताए देती हू, इस घर मे रहकर तुम इधर-उधर मागते फिरो, यह नही हो सकता। जो भीख ही मागनी है, तो और कही कूच कर जाओ। यहा यह सब नही चलने का।'

बुढिया वह बात पी गई। इस प्रकार की कई बातें उसे दिन मे दस बार पचानी पडती हैं। उसे वह पुरानी तुकबन्दी भूली नही। लात खाय पुचकारिए, होय दुधारू धेनु।

पर दुर्गा बहुत खुश हुई थी, बोली : 'फूफी, कै पैसे की है ? कैसी लाल है ! है न।'

फूफी ने आश्वासन देते हुए कहा : 'मैं मरूगी तो विरासत मे तेरे लिए छोड जाऊगी। तू बडी होकर इसे ओढ़ना।'

नई चादर की माड की सोधी गन्ध बुढ़िया को बहुत अच्छी मालूम होती थी। सवेरे चादर लपेटकर झाड़ू लगाते समय बीच-बीच मे अपनी तरफ देखती जाती, और पनघट के रास्ते मे अकारण खड़ी



रहती है। राह से गुजरनेवाली निरीह बहू-बेटियो को पुकारकर कहती है . 'कौन है ? राजी की अम्मा ? आज इतनी अबेर क्यो हो गई ?'

अधिक भूमिका न बाधकर वह मुस्कराकर अपनी तरफ दृष्टि आकर्षित करने की कोशिश करते हुए बोली : 'उस मुहल्ले के रामनाथ ने, समझी न, दिया है। इस चादर का दाम है साढे नौ आने।'

दो-एक शरारती लडकिया कह देती हैं · 'दादी, लाल चादर मे खूब खिल रही हैं। कही दादी की शादी तो नही हो रही है ?'

उस मुहल्ले की दासी मालकिन ने आकर हसते हुए कहा 'बहू, मैं दो पैसे लेने के लिए आई हू, कल इन्दिरा फूफी मुझसे एक जगली शरीफा ले आई थी, इस करार पर लिया था कि आज मैं दाम ले जाऊ…'

सर्वजया गृहस्थी का काम-काज कर रही थी, अवाक् होकर बोली : 'तुम्हारे पास से जगली शरीफा ले आई ?'

दासी मालकिन बडी रोजगारिन है। मामूली इमली, आमडा मे लेकर जरा-सा साग तक वह पैसा लिए बिना नही देती। दासी का हसमुख चेहरा कडा पड़ गया, बोली : 'लाई है या नही, यह अपनी ननद से पूछ लो। क्या सवेरे-सवेरे दो पैसे के लिए मैं झूठ बोलूगी ? मैं चार पैसे से कम मे देती नही हू, पर मैंने कहा, जाने दो बुढिया है तबियत चल गई है तो दो पैसे ही ले लूगी…'

क्रोध के मारे सर्वजया के मुह से कोई बात नही निकली। जगली शरीफा तो चारो तरफ इतना पैदा होता है कि ढोर भी खाकर अघा जाते हैं। गवई गाव मे कोई उसे मोल लेकर खा सकता है, यह सर्वजया की समझ मे नही आया।

ठीक इसी समय बुढिया न जाने कहा से आ टपकी। सर्वजया जैसे उसपर झपट पडी, बोली 'कब्र में पांव लटकाकर बैठी हो, कम से कम यह तो होना चाहिए कि जिसका खाती हो, उसके पैसे पर कुछ रहम खाओ। और सो भी तुम खरीदने गई तो जगली शरीफा खरीदा। तुम्हे बैठा-बैठाकर आज शरीफा, तो कल अनार कहा तक खिलाया जाए ? अगर शौक है तो अपने पैसे से पूरा करो, दूसरे के

सिर पर शौक करते तुम्हे शरम नही आती ?'

बुढ़िया का चेहरा फक हो गया था, जरा हसने की कोशिश करते हुए बोली : 'दे, दे, वह मैंने सोचा पका हुआ शरीफा है, सो खा लूं, अब दिन कितने हैं। दे दो पैसे...'

सर्वजया पहले से चौगुनी चीखकर बोली : 'पैसा बहुत सस्ता है न ? अपना लोटा-कटोरा है, उन्हें बेचकर पैसे दे दो।'

कहकर वह पीछे के दरवाजे से घाट की तरफ चली गई। दासी थोड़ी देर खड़ी रहकर बोली :'मैं कान पकड़ती हूं, नाक रगड़ती हूं, अपनी चीज बेचकर ऐसी ख्वारी कभी नहीं हुई। इन्दिरा फूफी, मैं तुमसे कहती हू कि अगर तुम्हारे पल्ले पैसा नहीं है, तो वह वाला शरीफा लेना ठीक नही रहा, इस तरह उधार पर चीज न लिया करो। तुम लोगों का झगड़ा है, सो तुम भुगतो। मैं गरीब हूं, उस जून आऊंगी तब पैसा चुकता कर देना।'

दासी के पीछे-पीछे बिटिया मकान के बाहर के आंगन तक आई। वह बोल रही थी : 'फूफी पुरनिया ठहरी, एक शरीफा लाई है, तो क्या हो गया ? पुरनिया है तो क्या खाने की इच्छा नही होती दासी फूफी ? बहुत बढ़िया शरीफा था, मैंने भी आधा खाया था। क्या फूफीजी तुम्हारे घर में पेड़ है ?'

बाद को उसने चिल्लाकर कहा : 'सुनो दासी फूफी, मेरे पास एक पैसा है, गुड़ियों के बक्स में है। मां घर मे ताला लगाकर गई है, जब लौटेगी तो तुम्हे चुपके से दे आऊंगी, पर कहीं मा को बता न देना।'

दोपहर के कुछ पहले इन्दिरा बुढ़िया मकान छोड़कर जा रही थी। बायें हाथ में एक छोटी-सी पोटली थी, जिसमें मैले कपड़े थे; दाहिने हाथ मे पीतल को चद्दर वाला लोटा लटक रहा था, बगल मे एक पुरानी चटाई थी, जिसकी फटी हुई किनारी से सीकें झूल रही थी।

मुन्नी बोली : 'फूफी, मत जाओ; फूफी, तुम कहां जाओगी ?'

उसने दौड़कर चटाई के पीछे वाला हिस्सा पकड लिया, बोली : 'तू जाएगी तो मैं रोऊंगी, हां देख लेना...'

सर्वजया ने बरामदे से कहा : 'जाना हो तो चली जाओ, पर ऐसे



ढंग से क्यो जा रही हो कि गृहस्थ का अकल्याण हो ? मैं बाल-बच्चेदार स्त्री हू; इतने दिनों तक जिसका खाया-पह, उसका सगुन-असगुन भी तो देखना चाहिए। ऐसे मौके पर बिना खाए जा रही हो तो मालूम होता है कि तुम गृहस्थ का अकल्याण चाहती हो। यही तुम्हारी मंशा है न ? ऐसा मन नही पाया होता, तो तुम्हारी आज यह दशा क्यो होती ?'

पर बुढ़िया नही लौटी। मुन्नी रोते-रोते बहुत दूर तक साथ गई।

बुढ़िया गांव के उस मुहल्ले के नवीन घोपाल के घर जाकर ठहरी। नवीन की बहू ने सारी बात सुनकर अचम्भा दिखाते हुए कहा : 'चाची, ऐसा तो कभी सुनने मे नही आया। तो रहो तुम, यहीं रहो।'

दो महीने तक वहा रहने पर बुढिया उस जगह को भी छोड़कर तीनकौड़ी घोषाल के यहां पहुची और वहा से पूर्ण चक्रवर्ती के घर। हर घर मे वही माजरा नजर आता था। पहले खूब स्वागत और आवभगत होती थी और उसके बाद लोग तरह-तरह से अपनी नाराजी दिखाते थे। ख्वाहमख्वाह यह सलाह दी जाती थी कि झगड़ा निपटा लो और घर लौट जाओ। बुढिया और भी दो-एक घरो में गई, मन में बराबर यह आशा रहती थी कि और नही तो हरिहर उसे बुलावा भेजेगा, पर तीन महीने हो गए, कोई भी बुलाने नही आया। इसी आस में वह उस मुहल्ले के दो-एक चक्कर भी काट आई, पर मुन्नी से भेंट नही हो पाई।

लोग हमेशा के लिए किसीको रखना नही चाहते। पूरब के मुहल्ले की चिंता ग्वालिन की झोपड़ी अधगिरी हालत मे पड़ी थी। सबने मिल-मिलाकर उसे बुढिया के लिए ठीक कर दिया और यह तय हुआ कि सब लोग थोड़ी-थोड़ी सहायता देंगे। कोठरी बहुत ही छोटी थी, दीवार भी ढग की नही थी, मुहल्ले से दूर बांस के जगल में थी। लोगो से सुनने मे आता था कि सर्वजया ने कहा है, 'लोग इसकी जिद देखें, अब इस घर मे उसका रहना नही हो सकता। जिसने सगुन-असगुन नही देखा, बच्चो के प्रति जिसको मोह नही है, उसे मैं इस घर की देहली भी लांघने नही दे सकती। वह जाकर ढोरो के मरघट

मे मरे ।'

जिन लोगो ने सहायता करने की ठानी थी, उनमे से पहले-पहल कुछ ने उत्साह से सामान जुटाया, पर बाद को उनका जोश भी ठडा पड़ गया । बुढिया सोचती थी कि हाय, उस दिन मैंने नाहक इतना गुस्सा किया और चली आई । बहू ने मना किया और मुन्नी इतना रोई, हाथ पकड़कर खीचती रही, पर मैं नही मानी ।

पिचके हुए गाल आसुओ से भर गए । मन ही मन बोली, 'इतना दुख मुझे बदा था । हाय यदि मेरी बेटी जिन्दा होती !'

चैत की सक्रान्ति है । दिन-भर धूप तेज रही । सन्ध्या समय थोडी-थोड़ी हवा चल रही थी । गुसाई मुहल्ले मे चडक उत्सव का ढोल अभी बज रहा था । अभी मेला खत्म न हुआ था ।

धूप मे इस घर, उस घर का चक्कर लगाने तथा दुश्चिन्ता के कारण प्रतिदिन सन्ध्या समय बुढिया को थोड़ा-थोडा बुखार आने लगा है । वह चटाई बिछाकर बरामदे मे चुपचाप पड़ी हुई है, सिर के पास मिट्टी की छोटी हडिया मे पानी रखा है । बात यह है कि इस बीच मे पीतल के चद्दर के लोटे को चार आने में गिरवी रखकर चावल मोल लिया गया है । बुखार मे प्यास लगती है, तो वह हडिया से पानी उड़ेलकर पी लेती है ।

—फूफी···

बुढिया कथडी छोड़कर एकदम से उठ बैठी । बरामदे की सीढी से मुन्नी आ रही थी और उसके पीछे उसीके मुहल्ले के बिहारी चक्रवर्ती की बेटी राजी थी । मुन्नी ने साफ कपड़े पहन रखे थे । उसके कपड़े में कुछ पोटलियां-सी बधी थी । बुढिया अधिक बोल नही सकी । उसने बडे आग्रह से दुबले-पतले हाथो को बढाकर उसे अपनी ज्वर से तपती छाती से लगा लिया ।

—फूफी किसीसे कहना मत । किसीको कानो कान खबर न होने पाए । मैं चडक का मेला देखकर चोरी से आई हू । राजी भी मेरे साथ आई है । यह देखो, चड़क के मेले से तुम्हारे लिए क्या-क्या लाई हू ।

मुन्नी ने पोटली खोलकर दिखाई ।



वोली . 'मीठी खीलें, तुम्हारे लिए दो पैसे की मीठी खीलें और दो कदमें लाई हू। मुन्ने के लिए एक लकडी का गुड्डा लाई हू।'

वुढ़िया अव अच्छी तरह उठ बैठी। चीजो को हिला-डुलाकर देखने के बाद वोली 'देखो, देखो, मेरी रानी विटिया मेरे लिए क्या-क्या लाई है। तुम रानी बनो, गरीव फूफी पर इतनी दया। देखू जरा मुन्ने का काठ का गुड्डा देखू ! वाह, वहुत ही सुन्दर है, कितने पैसे लिए ?'

इसी तरह कुछ देर तक वातचीत के वाद मुन्नी वोली : 'फूफी, तुझे क्या हो गया है ? तेरा वदन तो जल रहा है ?'

—दिन-भर मारे-मारे फिरने से ऐसा हो गया है, इसलिए मैंने कहा कि ज़रा पड़ रहू।

वच्ची होने पर भी दुर्गा फूफी के धूप मे घूमने का कारण समझ गई। उसने दुख और भूख से दुवली फूफी के शरीर पर स्नेह से हाथ फेरा, फिर वोली : 'तू जरूर घर आ जा फूफी, सन्ध्या समय कहानी नही सुनने को मिलती है, कल जरूर आना, क्यो आएगी न ?'

वुढिया की वाछें खिल गई, वोली 'क्या वहू ने तुझसे कुछ कहा है ?'

राजी वोली : 'फूफीजी, चाचीजी ने तो कुछ भी नही कहा। चाचीजी नही चाहती कि हम लोग यहा आए। हम लोग कुछ कहे तो, वे नाराज होती हैं, पर तुम लौटकर आओ, तो चाचीजी कह-कहाकर ठडी पड जाएगी।'

मुन्नी वोली 'फूफी, कल तू जरूर आना। मा कुछ नही कहेगी, तो मैं अव घर जाती हू। अच्छा ? किसीसे न कहना, पर कल सवेरे आ जाना।'

सवेरे उठकर वुढिया ने महसूस किया कि तवियत हलकी है। जरा दिन चढते ही वह छोटी पोटली मे दो फटे कपडे और मैला अगोछा वाधकर घर की तरफ चली। रास्ते मे घोपी वैष्णव की वीवी मिली तो वोली : 'वहनजी, घर जा रही हो ? लगता है इतने दिनो मे भाभीजी का क्रोध कम हो गया है।'

वुढिया की वाछें खिल गई, वोली : 'कल सन्ध्या समय दुर्गा

बुलाने आई थी। बहुत रोती-धोती रही। बोली . मां ने पुकारा है, चलो फूफी घर चलो। तो मैंने कहा . आज मुझसे जाया न जाएगा, तू जा, कल सवेरे चली आऊंगी, पर वह मानती थोड़े ही थी रोती ही रही, इसलिए सवेरे ही सवेरे जा रही हू···'

बुढ़िया घर मे घुस गई लेकिन वहां कोई दिखा नही। कल सारी रात बुखार के बाद इतनी दूर आने से वह बहुत थक गई थी, वह पोटली उतारकर अपनी कोठरी के बरामदे की सीढियों पर बैठ गई।

थोड़ी ही देर बाद पीछे के दरवाज़े से सर्वजया नदी से स्नान करके लौटी। इधर निगाह पडते ही बुढिया को देखकर वह कुछ देर तक आश्चर्य से ठिठककर खडी रही। बुढिया हंसकर बोली : 'बहू, अच्छी तो हो। इतने दिन बाद आ गई कि तुम लोगों को छोड़कर इतनी उमर मे कहा मारी-मारी फिरू।'

सर्वजया आगे बढकर बोली : 'तुम यहा पर क्या समझकर आई हो ?'

उसके रग-ढग और लहजे से बुढिया का जी मुरझा गया और हसने का उत्साह ठडा पड़ गया। अपनी बात का उत्तर पाए बिना सर्वजया फिर बोल उठी . 'मैंने तुमसे उसी दिन कह दिया था कि इस घर मे तुम्हारा गुज़ारा किसी तरह नही हो सकता, फिर कौन-सा मुंह लेकर आई हो ?'

बुढिया को जैसे काठ मार गया। मुह से और कोई बात निकली नहीं। फिर वह एकाएक रो पड़ी और बोली : 'बहू ऐसा न कहो, मुझे ज़रा-सी जगह दे दो। अब अन्तिम समय में कहां जाऊं ? फिर बाप-दादो की ज़मीन पर···'

—अब बाप-दादो की ज़मीन की दुहाई न दो, तुम्हें तो इसकी भलाई सोचकर नीद नही आती होगी। जाओ अभी दफा हो जाओ, नही तो मैं ऐसा उत्पात मचाऊंगी कि बस···

बुढ़िया को यह कतई आशंका नही थी कि परिस्थिति इस प्रकार होगी। जैसे डूबता हुआ आदमी तिनके का सहारा ढूढ़ता है, उसी तरह बुढ़िया ने सहारा मिलने की आशा में उद्देश्यहीन ढग से इधर-उधर ताका, आज उसे सचमुच ही ऐसा मालूम हुआ जैसे बहुत दिनो



का आश्रय सचमुच ही पैरो के तले से खिसक रहा है और किसी तरह उसे बचाया नही जा सकता।

सर्वजया बोली : 'जाओ ननदजी, दिन चढ रहा है, अब फजूल बैठी मत रहो। मुझे काम-काज करना है। मैं तुम्हें यहां रख नही सकती···'

बुढिया पोटली लेकर फिर बडी मुश्किल से उठी। दरवाजे के बाहर जाते हुए उसकी निगाह आगन झाड़ने की झाड़ू पर पड़ी, जो इस समय दीवार के कोने मे ओढकाई हुई खडी थी। आज तीन-चार महीनों से उसे किसीने छुआ नही। इस जमीन की घास, कितनी मुसीबतों के बाद लगाया हुआ वह नीबू का पेड, यह अत्यन्त प्रिय झाड़ू, मुन्नी-मुन्ना, ब्रज फूफा की जन्मभूमि, उसके सत्तर साल के जीवन मे इनके अलावा न तो कुछ था और न वह किसी चीज को जानती-बूझती थी। आज ये सब हमेशा के लिए बिछुड रहे हैं।

संहजन के पेड़ के पास से पोटली बगल मे दाबे जाते देखकर राय घराने की मालकिन बोली . 'दादी, लौटकर कहा जा रही हो ? घर नही जाना है ?'

जब इसका कोई उत्तर नही मिला, तो वह बोली : 'मालूम होता है, अब कान से बिल्कुल हाथ धो बैठी हो ?'

शाम के समय किसीने उस मुहल्ले से आकर सर्वजया से कहा 'मालकिनजी, शायद आप लोगो की बुढिया की अब आखिरी घडी नजदीक आ गई है। वह दुपहर से पालित लोगो के खलिहान के पास पडी हुई है, आगे उससे चला नही गया। एक बार जाकर देख तो आओ। क्या मालिक घर पर नही हैं ? न हो उन्हीको एक बार भेज दो।'

पालित खानदान के बडे-से छप्पर के नीचे खलिहान की बगल मे इन्दिरा पुरखिन अपनी अन्तिम घडिया गिन रही थी, यह बात सही है। हरिहर के घर से लौटते समय खलिहान के पास आकर उसकी तबियत बिगड गई और धूप में और आगे न जाकर वह यही लेट गई। जब पालित घराने के लोगो ने यह देखा, तो उन्होने उसे चौपाल मे उठाकर रखा, पीठ और सीने पर तेल की मालिश की गई, पखा झला गया और जब सब कुछ करने पर भी मालूम हुआ

कि, अब चलाचली का वेला है, तब उसे उतारकर जमीन पर लिटा दिया गया।[1] उस मुहल्ले के बहुत-से लोग उसे घेरे हुए खड़े थे। कोई कह रहा था : 'तो धूप मे निकलने की क्या जरूरत थी ? कितनी भयकर धूप थी ?'

कोई कह रहा था . 'अभी सब ठीक हो जाएगा, शायद गश आ गया है।'

विशू पालित ने कहा : 'गश नही है। अब बुढ़िया नही जीने की। शायद हरिहर ताऊ घर पर नही हैं। खबर तो भेज दी गई, पर इतनी दूर कौन आता है ?'

खबर पाकर दीनू चक्रवर्ती का बड़ा बेटा फणी पंडित, मामला क्या है, देखने के लिए आ गए। सबने कहा : 'आओ पडितजी ! बड़ी तकदीर से आ गए हो, जरा मुह में गगाजल डाल दो। देखो तो क्या मामला है ? यह ब्राह्मणो का मुहल्ला है फिर ऐसा कैसे हो सकता है कि मरते समय गगाजल न मिले।'

फणी पडित ने अपनी लाठी विशू पालित को थमाते हुए बुढिया के सिरहाने बैठ गए, फिर आचमनी से मुह मे गगाजल डालते हुए पुकारा · 'फूफीजी···'

बुढिया ने आखें खोलकर फटी हुई आंखो से देखा। उसके मुह से कोई जवाब सुनाई नही पड़ा। फणी पंडित ने फिर पूछा : 'आप कैसी हैं फूफीजी ? क्या तबियत खराब है ?'

जब इसपर भी कोई उत्तर नही आया तो उसने गगाजल मुह मे दे दिया।

पर पानी भीतर नही गया। तब विशू पालित ने कहा · 'पडितजी एक बार और···'

थोडी देर बाद फणी पडित ने बुढिया की आखें बन्द करा दीं, बस क्या हुआ कि आख में जो पानी जमा था, वह पिचके हुए गालो से बहकर नीचे गिर गया।

इन्दिरा पुरखिन की मृत्यु के साथ-साथ निश्चिन्दिपुर गाव में एक

---

१. बंगाल में यही कायदा है।



युग का अन्त हो गया ।

४

इन्दिरा पुरखिन की मृत्यु के बाद चार-पाच साल निकल गए ।

सवेरे का समय था। आठ या नौ बजे होगे हरिहर का लडका आगन मे बैठकर अपने आप खेल रहा था । उसके पास टीन का एक छोटा-सा बक्स है जिसका ढक्कन टूटा हुआ है । उसने बक्स का सारा माल-टाल औंधाकर फर्श पर डाल दिया है—एक रग उडा हुआ काठ का घोड़ा, एक आने मे आनेवाला पिचका हुआ टीन का भोपू, कुछ कौड़िया जिन्हे उसने मा के अनजान मे लक्ष्मी पूजा की कोडी टकी हुई छोटी-सी टोकरी से खोल लिया था, जिन्हें हमेशा छिपा रखता है; एक दो पैसेवाली पिस्तौल, कुछ सूखी फलिया। ये फलिया देखने मे अच्छी लगती हैं इसलिए दीदी कही से बटोर लाई थी । उसने उनमें से कुछ तो उसे दे दी हैं और कुछ गुडिया वाले अपने बक्स मे रख दी हैं। खपरे के कुछ टुकडे भी थे । गगा-यमुना नाम के एक खेल मे इन खपरो का निशाना बहुत सही बैठता है, इस विश्वास से उसने इन्हे बडे प्रेम से बक्स में सजोकर रखा है । ये उसकी अमूल्य निधि हैं । इन सारी चीजो मे से उसने अभी उठाकर कई बार भोपू बजाया था, फिर उसके सम्बन्ध मे सारी दिलचस्पी नष्ट हो जाने के कारण उसे एक किनारे रख दिया था। काठ के घोडो को भी हिला-डुलाकर देख चुका था। अब भी कठघरे के कैदी की तरह वह एक तरफ पडा है । इस समय वह गगा-यमुना खेल मे लगनेवाले खपरे के टुकड़ो को हाथ मे लेकर मन ही मन ऐसी कल्पना कर रहा था, मानो बरामदे पर गगा-यमुना खेल के घर बने हैं और वह खपरो को फेंककर आजमा रहा था कि निशानी कैसी बैठती है ।

इतने मे उसकी दीदी दुर्गा ने आगन के कटहल वाले पेड के नीचे से पुकारा 'अपू, ओ अपू !'

वह इतनी देर घर मे नही थी, पता नही कहा से अभी-अभी आई । उसके पुकारने के ढग मे सावधानी थी । आहट पाकर अपने

यन्त्रचालित ढग से लक्ष्मी की टोकरी से खोली हुई कौड़ियों को जल्दी मे छिपा दिया, फिर बोला · 'क्या बात है दीदी ?'

दुर्गा ने हाथ का इशारा करते हुए कहा : 'इधर आ, सुन।'

दुर्गा की उम्र इस समय दस-ग्यारह की होगी। देखने मे दुबली-पतली है, रंग अपू की तरह साफ नहीं है, कुछ दबता हुआ है। हाथ मे काच की चूड़ियां हैं, मैली धोती पहन रखी है, बाल रूखे हैं, हवा मे उड़ रहे हैं। मुखडा अच्छा है और अपू की तरह आंखें बड़ी-बड़ी हैं। अपू पास आते हुए बोला : 'क्या है ?'

दुर्गा के हाथ में नारियल का कटोरीनुमा आधा छिलका था। उसने उसे नीचा करके दिखलाया कि उसमे अमिया की कुछ फांकें थी। उसने आवाज नीची करते हुए कहा : 'मां घाट से तो नही आई ?'

अपू ने सिर हिलाते हुए कहा : 'नहीं !'

दुर्गा ने चुपचाप कहा : 'जरा तेल और नमक ला सकेगा ? मैं अमियों को बनाऊंगी…'

अपू ने खुशी के साथ कहा : 'कहा मिली ?'

दुर्गा बोली : 'पटली के बाग में नीचे पड़ी हुई थीं, जरा नमक और तेल तो ले आ।'

अपू ने दीदी की ओर देखते हुए कहा. 'जो मैं तेल की हंडिया छू लूं, मां मारेगी। मेरा कपड़ा बासा जो है ?'

—तो जल्दी से जा। अभी मां के आने मे बहुत देर है। कपड़े धोने गई है। जल्दी कर !

अपू बोला : 'मुझे नारियल की कटोरी दो। उसीमे डाल लाऊंगा। तू पीछे दरवाजे पर खडी होकर देखती रह कि मां आ तो नही रही है।'

दुर्गा ने धीरे से कहा : 'कही फर्श पर तेल-वेल न गिरा देना। सावधानी से लेना, नही तो मा को पता चल जाएगा। तू बहुत अनाड़ी है न, तभी कह रही हूं।'

अपू के घर से बाहर आने पर दुर्गा ने उसके हाथ से नारियल वाली कटोरी ले ली और वह अमियो को अच्छी तरह चुपड़ने लगी। जब यह काम हो गया तो बोली : 'ले हाथ पसार।'



—दीदी तू इतना सारा खा लेगी ?

—इतना सारा कहा है ? यह कोई ज्यादा है ? अच्छा ले, दो फाकें और ले ले। देखने में तो बहुत अच्छा लग रहा है। एक मिर्चा ला सकता है ? लाएगा तो एक फाक और दूंगी।

—मैं मिर्चा कैसे उतारूं ? मा तख्ते पर रख देती है, मैं तो वहा पहुच ही नही पाता।

—तो रहने दे, फिर उस जून लाऊंगी। गढे के किनारे पटली के आम मे जो अमिया लगी हैं वे दोपहर की धूप मे झड जाती हैं···

दुर्गा के घर के चारो ओर जंगल हो जगल था। हरिहर राय का किसी रिश्ते का भाई नीलमणि राय पर साल मर गया। उसकी स्त्री अब अपने बच्चों को लेकर नैहर मे रहती है। इसलिए बगलवाला घर भी जंगल से ढंक गया है। पास मे और कोई घर नहीं है। पाच मिनट के रास्ते पर भुवन मुकर्जी का घर है।

हरिहर के घर की भी बहुत दिनो से मरम्मत नही हुई। सामने का आगन टूटा हुआ है। दरारो मे जंगली काटे तथा पेड निकले हैं। घर के सब दरवाजों और जगलो के किवाड टूटे हुए हैं। वे नारियल की रस्सी से सीकचों के साथ बंधे हुए हैं।

पीछे का दरवाजा धडाक से खुला और थोड़ी ही देर मे सर्वजया की आवाज आई · 'दुर्गा, ओ दुर्गा !'

दुर्गा बोली 'मा बुला रही है। जा देख आ। उस फाक को खा ले। मुह पर बुका हुआ नमक लगा है, उसे पोछ ले।'

मा ने एक बार फिर पुकारा। दुर्गा ने सुन भी लिया पर इस समय दुर्गा के लिए उत्तर देना संभव नहीं था, क्योकि उसका मुह भरा हुआ था। वह जल्दी-जल्दी अचार खाने लगी। अभी बहुत बाकी है, देखकर वह कटहल के पेड के तने की आड में हो गई और मरभुखो की तरह फाकें निगलने लगी। अपू भी उसके बगल में खडे होकर अपने हिंस्से को तेजी के साथ निगल रहा था क्योकि अब चबाने का मौका नहीं था। खाते-खाते उसने दीदी की तरफ ताककर आत्मबोध-सूचक हसी हस दी। दुर्गा ने खाली नारियल को एक तरफ फेंककर भिरंडा कच्चा पौधे का घेरा पार करके नीलमणि राय के घर की तरफ

जगल मे दौड लगाई। भाई की तरफ देखकर वोली . 'मूरख, मुह क्यों नही पोछता। नमक जो लगा हुआ है।'

वाद को दुर्गा बिल्कुल भोली-भाली सूरत बनाकर मकान के अन्दर घुसती हुई वोली : 'मा, क्या वात है ?'

—कहा मारी-मारी फिर रही है ? अकेली जान, क्या-क्या सम्हालू। सवेरे से कपड़े धोते-धोते गत वन गई। इतनी वडी लड़की है, पर तुझसे गृहस्थी के कामकाज मे कोई मदद नही मिलती। तुझसे यह भी तो नही होता कि एक लोटा पानी ही भर दे। वस दिन-भर इधर से उधर आवारागर्दी करती फिरती है और वह वन्दर कहा है ?

अपू ने आकर कहा : 'मां भूख लगी है।'

—ठहरो, ठहरो। जरा दम तो लेने दो। जब देखो तब भूख ही लगी रहती है और यह लाओ—वह लाओ। दुर्गा, जाकर यह तो देख कि बछडा क्यो रभा रहा है ?

कुछ देर वाद सर्वजया रसोईघर के फर्श पर बैठकर हसिया से खीरा काटने लगी। अपू पास आकर वैठते हुए बोला : 'और थोड़ी लस निकाल दो, नही तो कड़वा लगता है।

दुर्गा हाथ फैलाकर अपना हिस्सा लेते हुए कुछ सकोच के साथ वोली . 'मा भुने चावल और नही हैं।'

अपू खाते-खाते बोला : 'ओह, चवाते नही वनता, अमिया खाकर दात खट्टे जो हो···'

दुर्गा के तेवर के कारण उसकी बात बीच ही मे रुक गई। मा ने पूछा : 'तुझे भला अमिया कहा से मिल गई ?'

अपू मे यह हिम्मत नही थी कि सच्ची वात वता दे इसलिए उसने दीदी की तरफ प्रश्नमूलक दृष्टि से देखा। सर्वजया ने लडकी की तरफ देखकर कहा . 'तू फिर वाहर गई थी ? क्यो क्या बात है ?

मुसीवत की मारी दुर्गा वोली : 'उससे पूछ न लो। मैं तो अभी कटहल के नीचे खडी थी। तुमने जब पुकारा तब मैं वही पर···'

इतने मे स्वर्ण ग्वालिन गाय दुहने आई, इसलिए वात वही पर दब गई। मा वोली : 'जा, बछडे को पकड। बेचारा बछडा रभा-रभाकर मरा जा रहा है और सोना, तुम इतनी देर से आया करोगी



तो काम कैसे चलेगा ? जरा जल्दी नही आओगी तो यह बछडा कब तक बधा रहेगा ?'

दीदी के पीछे-पीछे अपू भी दूध दुहना देखने के लिए गया। उसने बाहर बरामदे मे पैर रखा ही था कि दुर्गा ने उसकी पीठ पर एक धौल जमाते हुए कहा 'मूरख बन्दर कही का'—फिर मुह बिराकर बोली—'आम खाकर दात खट्टे हो गए, फिर किसी दिन आम दू तो देख लेना! खाक दूगी। अभी, आज ही फिर आम लाकर बनाऊगी। बडे-बडे गदरा गए हैं, गुड की तरह मीठे हैं। तुम्हे दूगी और तुम खा लेना। गावदी कही का ! जो जरा भी अकल हो तो काम बनता।'

दोपहर के कुछ बाद हरिहर काम-काज समाप्त कर घर लौटा। वह इन दिनो गाव के अन्नदा राय के यहा गुमाश्ता है। उसने पूछा: 'मैं अपू को नही देख रहा हू।'

सर्वजया बोली : 'अपू तो कमरे मे सो रहा है।'

—दुर्गा शायद······?

—वह खाकर बाहर गई सो गई। वह घर मे रहती ही कब है ? बस खाने से ही नाता है ! जब भूख लगेगी तो आएगी। कही किसीके बाग मे आम या जामुन के नीचे घूम रही होगी। चैत मास की धूप है। देखो न अब फिर बुखार लगने ही वाला है। इतनी बडी लडकी है, क्या समझाऊ। उसके कानो पर तो जू भी नही रेंगती, चाहे जितना बक जाऊ। एक कान से सुना और दूसरे से निकाल दिया।

थोडी देर बाद हरिहर खाने बैठा, तब उसने कहा 'आज मैं दशघरा गाव मे तकादे मे गया था। वहा एक अच्छा-खासा मोटा असामी मुझसे मिला, जिसके घर मे पाच-छः खलिहान हैं। उसने मुझे दडवत करते हुए कहा 'महाराज, आप मुझे पहचान तो रहे हैं?'

मैंने कहा 'नही साहब, मैं तो ···'

उसने कहा 'जब बडे पडितजी जीवित थे, तो वे हमारे यहां पूजापाठ के लिए हमेशा पधारते थे। आप लोग हमारे गुरू ठहरे। अब हम लोगो ने तय किया है कि घर भर आपसे दीक्षा ले लें। आप आज्ञा दें तो मुझे भरोसा हो जाए। आप ही दीक्षा क्यो नहीं देते ? दो-एक दिन बाद सोच-समझकर जवाब दीजिएगा।'

सर्वजया दाल की कटोरी हाथ मे लेकर खड़ी थी, अब वह कटोरी ज़मीन पर रखकर सामने बैठ गई। बोली : 'तो इसमे बुराई क्या है? दीक्षा दे दो न। कौन लोग हैं?'

हरिहर ने आवाज़ धीमी करते हुए कहा : 'किसीसे कहना मत। सद्गोप हैं। तुम्हारे पेट मे तो बात पचती नही।'

—मैं भला किसीसे कहने जाऊगी? सद्गोप तो सद्गोप ही सही। इतनी तकलीफ हो रही है। रायबाडी के केवल उन आठ रुपयों का भरोसा है, सो भी दो-तीन महीना अतरा देकर मिलते हैं, और इधर कर्ज़ में सिर डूबा हुआ है। कल पनघट के रास्ते मे सझली पडिताइन मिली थी, बोली : वहू मैं बन्धक बिना रखे उधार नही देती, पर तुमने बहुत कहा था सो दे दिया, अब पाच-पाच महीने हो गए, अब मेरे बस की बात नही है।…उधर राधा वैष्णव की बहू तो मुझे जैसे फाडे खा रही है। दोनो जून तगादे पर आती है। मुन्ना पर कपड़े नहीं हैं। दो-तीन जगह से सी चुकी हू, फिर भी मेरा राजा बेटा हंसता-खेलता रहता है। मेरी तो हालत यह है कि मन करता है कि एक तरफ को निकल जाऊ।'

—वे और एक बात कह रहे थे। कहते थे कि गाव मे कोई ब्राह्मण नही है, इसलिए यदि आप यहा आकर बस जाए, तो जगह-ज़मीन देकर बसा दें। गाव में ब्राह्मणो का एक घर हो जाए, ऐसी हम सबकी इच्छा है। कुछ धान वाली ज़मीन भी देने को तैयार हैं, पैसो की कमी नही है। आजकल किसानो के घर मे ही लक्ष्मी बधी हुई है, बाबू लोग तो फटीचर हो गए हैं।

जोश के मारे सर्वजया की ज़बान रुक-सी गई, बोली : 'अभी-अभी चल देना चाहिए। तो तुम राज़ी क्यो नही हुए? कह देते कि बस हम आ ही रहे हैं। इस गाव मे उस तरह के एक बड़े आदमी का साया तुमपर कहा है? बस बाप-दादो की ज़मीन से चिपटकर…'

हरिहर हसकर बोला : 'पगली कही की। फौरन राज़ी थोड़े ही होना चाहिए। नीच जाति के हैं, यह सोचेंगे कि पडितजी के घर मे चूहे डड पेल रहे हैं। इस तरह से अपनी हेठी होती है। इतनी जल्दी काम नही होता। चुपचाप मजुमदार महाशय से ज़रा सलाह कर लू,



और अभी चलो, कहने से चल थोड़े ही सकते हैं। फौरन ही सब साले आकर रुपये मागने लगेंगे और न दे पाओ तो जाने न देंगे, इसलिए ज़रा सलाह-मशविरा तो कर लू।'

इस बीच में दुर्गा कही से दबे पांव आई और बाहर के दरवाज़े की आड़ से सावधानी से झाका, तो उसे मालूम हुआ कि सब लोग सतर्क हैं, इसलिए वह उस छोर की दीवार के पास से बाहर के आगन मे पहुंच गई। बरामदे का दरवाज़ा धीरे-धीरे ढकेलकर देखा तो वह बद था। इधर खुले आंगन मे खड़ा रहना संभव नही था क्योकि आसमान से आग बरस रही थी। इसीलिए वह वहां से उतरकर आगन के कटहल के पेड़ के नीचे खडी हो गई। धूप मे फिरते रहने के कारण उसका चेहरा लाल हो रहा था। उसने आंचल मे कोई चीज़ सहेजकर गठियाई हुई थी। वह आई इसलिए थी कि यदि बाहर का दरवाजा खुला हुआ मिल जाए और मां सोई हुई हो, तो कोठरी के अन्दर चुपचाप घुसकर ज़रा सो लेगी, पर पिता के, विशेषकर मा के सामने सदर दरवाजे से दाखिल होने का साहस उसे नही हुआ।

आंगन मे उतरकर कटहल पेड़ के नीचे खडी होकर वह क्या करेगी, यह निश्चय न कर सकने के कारण हतोत्साह होकर इधर-उधर ताक रही थी। बाद को वह वहा पर बैठकर गठियाई हुई चीज निकालकर उसीमे लग गई। कुछ सूखी जगली फलिया थी, जिनका वह बीज निकालने लगी। थोड़ी देर बाद वह उन्हें एक-दो-तीन-चार करके गिनने लगी, तो छब्बीस बीज निकले। बाद को वह तीन-तीन बीज हथेली के उलटे तरफ रखकर उन्हे उछाल-उछालकर 'आचा-पांचा' करने लगी। मन ही मन मनसूबा बाधने लगी कि उन्हे अपू को दूगी और इन्हे गुडिया के बक्स मे रख दूगी। ये बीज कितने चिकने मालूम हो रहे हैं। आज ही पेड से गिरे हैं। खैरियत हुई कि मैं पहुंच गई, नही तो गायें चट कर जाती। उधर की लाली गाय बिल्कुल राक्षसी है। हर जगह पहुच जाती है। उस दफे कुछ ले आई थी। अब काफी बीज जमा हो गए।

उसने खेल बन्द करके सारे बीज फिर कपड़े मे गठिया लिए। फिर न जाने क्या सोचकर रूखे बालो को हवा मे उड़ाते-उडाते बडी

खुशी से फौरन ही घर से निकल गई ।

५

कई महीने बीत गए हैं ।

सर्वजया भुवन मुकर्जी के घर के कुए से पानी भर लाई । पीछे पीछे अपू मा का आचल पकडकर उस घर से आया । सर्वजया घड उतारकर बोली · 'तू इस तरह पीछे क्यो लगा है ? घर का काम-काज खतम कर लूगी तभी न पनघट मे जाऊगी ! काम करने नहीं देगा क्या ?'

अपू बोला 'काम तुम उस जून कर लेना । तुम घाट मे चलो।

बाद को मा की सहानुभूति आकर्षित करने की आशा से उसने बहुत ही करुण स्वर मे कहा : 'अच्छा मुझे क्या भूख नही लगती ? आज चार दिन से खाने को नही मिला ।'

—नही मिला तो मैं क्या करू ? धूप मे फिर-फिरकर बुखा बुला लेगा, बात कहू तो कोई सुनता नही । सारे काम पूरे करूगी तभी न घाट मे जा पाऊगी । मैं बैठी तो नही हू । बेटा, इस तरह बदमाशी नही करते । तुम लोगो के कहने पर मैं नही चल सकती···

अपू ने मा का आचल और भी कसकर पकड़ लिया, बोला .'मैं तुम्हे काम-काज करने ही नही दूगा । काम तो रोज करती रहती हो, एक दिन न किया तो न सही । अभी घाट में चलो, नही मैं नहीं सुनूगा, करो तो काम कैसे करती हो ?'

सर्वजया लडके की तरफ देखकर हसती हुई बोली : 'इस तरह ज़िद नही करते बेटा । अभी काम खतम होता है । थोडा धीरज धरो नहाने जाऊगी और फौरन ही आकर भात चढा दूगी । आचल छोड़ दे, परवल की पत्तियों के कितने पकौड़े खाएगा ?'

एक घण्टा बाद अपू बडे उत्साह के साथ खाने बैठा ।

गिलास उठाकर उसने गट्ट-गट्ट करके आधा पी डाला, फिर दो-चार कौर खाकर कुछ भात पत्तल के इधर-उधर बिखेरकर बाकी



—तू खा कहा रहा है ? अब तक तो भात-भात और परवल की पत्तियों के पकोड़ो की रट लगा रहा था, पर अब तो सब कुछ पड़ा है, फिर खाया क्या तूने ?

सर्वजया एक कटोरी दूध-भात सानकर लडके को खिलाने बैठी। बोली : 'मुह तो खोल, क्या तकदीर पाई है ? न मिठाई है न पकवान। बस भात खाए जा, पर लड़के की हालत यह है कि रोज भात खाते वक्त मुह बनाता है, खाएगा नही तो जिएगा कैसे ? यह सब जीने के लच्छन नही है। तुम लोग बस मुझे जलाने के लिए आए हो। वैसे मुह मत घुमा। नही बेटा, मुह खोल दो। बस दो-चार कौर ही तो हैं। उस जून टूनू के घर मे मनसादेवी का विसर्जन होगा। अच्छा तुझे नही मालूम ? जल्दी जल्दी खाकर चल, हम सभी…'

दुर्गा घर आई। कही से चक्कर लगाकर आई थी। पैर धूल से भरे थे और माथे के सामने बालो का एक गुच्छा लगभग चार-पाच अगुल ऊचा हो रहा था। वह अक्सर अपनी इच्छा के अनुसार फिरती रहती है। मुहल्ले के हम-उमर बच्चो के साथ उसका खास मेल-जोल या खेल का सम्पर्क नही है। कहा किस झाडी मे वैचीफल पका, किसके बाग मे कौन-से पेड के कच्चे आमो मे जाली पडने लगी है, किस बास की झाडी के नीचे कौन-सा बेर मीठा है। यह सब उसके नख-दर्पण मे है। वह राह चलते वक्त हर समय रास्ते के दोनो तरफ सतर्क दृष्टि डालती हुई चलती है कि कही कोई काचपोका तो नहीं बैठा है। यदि कही भटकटैया का पक्का फल देखने मे आता, तो उसे खेल का बैगन बनाने के लिए तोड़ लेती थी। कई बार रास्ते मे रुककर तरह-तरह के खपडो को फेंककर देखती थी कि किसमे गगा-यमुना खेल का निशाना अच्छा बैठता है। जो खपडा परीक्षा मे अच्छा साबित होता था, उसे वह बड़े प्रेम से अपने आचल मे गठिया लेती थी। वह हर समय गुडिया के बक्स और खेल की सामग्रियो के विषय मे बहुत व्यस्त रहती थी।

उसने घर के अन्दर पैर रखकर अपराधी दृष्टि से मा की ओर देखा। सर्वजया बोली : 'आ गई ? आ भात तैयार है। खाकर मेरे पुरखो का तार, फिर कही जाना हो तो चली जाना। वैसाख के दिन

है, सब घर मे लड़किया इन दिनो सन्ध्या का व्रत और शिवपूजा कर रही है और इतनी बडी बेघड़ी है, दिन-रात डाव-डाव घूमती है। मुह अन्धेरे की निकली है अ र अव दोपहर को आई है। जरा बालो की दशा तो देखो, न तेल डालना, न कघी करना। कौन कहेगा कि ब्राह्मण की लडकी है। मालूम होता है कि चमार-पासी के घर की है। और मैं कहे देती हू कि तेरी शादी भी उन्हीमे होगी। पुटकी मे क्या खजाना बाध रक्खा है, खोल।'

दुर्गा ने डरते-डरते पुटकी खोलते हुए कहा . 'राय चाचा के घर के सामने कालकासून्दे पेड़ पर'—कहकर घूट निगलते हुए बोली : 'बहुत-सी बेने बहू[1]...'

बेने बहू के नाम से दिल न पसीजता हो, ऐसे भी सगदिल जीव ससार मे बहुत हैं। सर्वजया आगबबूला होकर बोली . 'तेरी बेने बहू की ऐसी की तैसी। दुनिया-भर का कूड़ा-कबाड रात-दिन गठियाकर फिर रही है। आज मैं तेरे गुड़िया वाले बक्स को बास के जगल के गढे मे डाल न दू तो...'

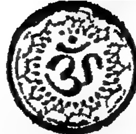
सर्वजया की बात समाप्त होने के पहले ही एक घटना हुई। आगे-आगे भुवन मुकर्जी के घर की सझली मालकिन, पीछे-पीछे उनकी बेटी टूनू और देवर का लडका सतू और उसके पीछे और चार-पांच लडके-बच्चे सामने के दरवाजे से भीतर घुसे। सझली मालकिन किसी तरफ न ताककर, मकान के किसी व्यक्ति के साथ बात-चीत बिना किए धमधम करती हुई सीधे भीतर के बरामदे मे चढ गई। फिर उसने अपने लड़के की ओर ताककर कहा 'कहां है गुड़िया का बक्स, निकाल ला। देखू तो उसमे...'

इस घर का कोई कुछ कह नही पाया था कि टूनू और सतू ने मिलकर दुर्गा के टीनवाले गुड़िया के बक्स को कमरे से निकालकर बरामदे मे रखा और टूनू ने बक्स खोलकर कुछ देर खोजने के बाद गुड़ियो की एक माला निकालते हुए कहा : 'मा, देखो यह मेरी वाली माला है, उस दिन खेलने गई थी, बस चुरा लाई।'

सतू ने बक्स के एक किनारे से खोजकर कुछ अमिया निकाली,

---

१. एक पक्षी।



फिर बोला 'देखिए ताईजी, यह हम लोगो के सोनामुखी पेड के आम तोड़कर लाई है।'

ये सारी घटनाए इतना अकस्मात् हो गईं, तथा इनका रग-ढग इस घर के लोगों को इतना रहस्यमय मालूम पडा कि किसीने चू तक न की। इतनी देर बाद सर्वजया जैसे आपे मे आई और बोली . 'क्या है चाचीजी ? क्या है ?' कहकर वह रसोईघर के बरामदे से व्यग्र होकर उतर आई।

—देखो न, अपनी लडकी की करतूत जरा देखो। वह उस दिन हमारे यहा खेलने गई थी। बस मौका लगाकर टूनू की गुडिया के बक्स से गुड़िया की माला चुरा लाई है। लडकी कई दिनो से उसके पीछे परेशान हो रही है। इसके बाद सतू ने खबर दी कि गुडिया की माला तो दुर्गा दीदी के बक्स मे है। देखो, जरा अपनी लड़की को देखो। देखने मे तो सीधी-सादी है, पर है पक्की चोर। और देखो न अभी आम मे जाली पड़ने न पाई कि उन्हे चुराकर ले आई है और बक्स मे रख दिए है।—एक साथ दो चोरियो का बोझ एकाएक पड़ जाने के कारण दुर्गा दीवार से उठकर पसीने-पसीने हो रही थी। सर्वजया ने पूछा : 'क्या तू यह माला उनके घर से लाई है ?'

दुर्गा कुछ कह न पाई थी कि सझली बहू बोली · 'नही लाई तो क्या मैं झूठ बोल रही हू ? और इन आमो को नही देखती ? सोनामुखी पेड़ के तो आम तुम पहचानती हो। क्या यह भी झूठ है ?'

सर्वजया झेपकर बोली : 'नही सझली चाची, मैंने यह थोड़े ही कहा कि आप झूठ बोल रही हैं। मैं तो उससे पूछ रही थी।'

सझली मालकिन हाथ झमकाकर तेजी के साथ बोली, 'चाहे पूछो या न पूछो, मैं यह कहे देती हू जब उसने इस उमर मे चोरी करने की विद्या सीख ली है, तो आगे चलकर यह जैसी होगी वह जाहिर है। चल सतू, अमियो को बांध ले, इस कम्बख्त लड़की के मारे कोई बाग के आम देख तो ले। टूनू, तूने माला तो ले ली न ?'

सब कुछ देख-सुनकर सर्वजया तैश मे आ गई। झगडे मे वह पीछे रहनेवाली नही थी, बोली · 'संझली चाची, मैं गुड़िया की माला की बात नही जानती, पर इसने अमियां तोड़ी हैं या नीचे गिरी हुई

उठा लाई है, यह कोई इनपर लिखा नही है और यह मान भी लिया, ले ही आई है तो बच्ची ही ठहरी···'

सझली मालकिन तिलमिला गई, बोली 'बातें तो बहुत बढ़-बढ़कर मार रही हो, अगर हमारे आमो मे नाम नही लिखा है तो बताओ वह तुम्हारे किस बाग से इन्हे लाई है ? रुपयो पर भी तो नाम नही लिखा था, फिर तुमने उन्हे हाथ पसार कर ले कैसे लिए ! आज साल-भर से ऊपर हो गया, अब देती हू, तब देती हू, करके टालती रहती हो। मैं उस जून आऊगी। रुपये लौटा देना। मैं कहे देती हूं कि अब मुझसे नही रुका जाएगा, रुपयो का जुगाड़ कर रखना।'

सझली मालकिन अपने दल-बल के साथ दरवाजे के बाहर चली गई। सर्वजया को सुनाई पड़ा कि रास्ते मे किसीके प्रश्न के उत्तर मे वह काफी चिल्लाकर कह रही है : 'इस घर की लड़की ने टूनू के बक्स से गुड़िया की माला चुराकर अपने बक्स मे छिपा रखी थी, और देखो न इन आमों को। पास मे ही बाग पडता है, चाहे जितना तोड़ लेती है, यही बात मैं कहने गई तो मुझे जली-कटी सुना रही है। (इसके बाद सझली बहू ने सर्वजया की बात करने के ढग की नकल उतारते हुए कहा)···और यह कोई इनपर लिखा नही है और यह मान भी लिया जाए कि ले ही आई है तो बच्ची ही ठहरी। (आवाज नीची करके) मा भी कोई कम चोर थोड़े ही है ? आखिर लड़की को यह सिच्छा कहां से मिली ? घर-भर चोर है···'

अपमान और दु ख के मारे सर्वजया की आंखो मे आसू आ गए। उसने लोटकर दुर्गा के रूखे बालों का झोटा पकडकर दाल-भात-सने हाथो से ही उसकी पीठ पर घूसे और तमाचे जडते हुए कहा : 'न जाने कहा की आफत आई है। मर जाए तो पिंड छूटे। मर जाए तो मेरी छाती जुडा जाए। निकल, घर से बाहर निकल ! दूर हो, अभी निकल जा !'

दुर्गा मार खाते-खाते भय के मारे पीछे के दरवाजे से दौड़कर चली गई। उसके रूखे झोंटे से टूटे हुए दो-एक बाल सर्वजया के हाथ में रह गए।

अपू खाते-खाते अवाक् होकर सारी घटना देख रहा था। यह



उसे नही मालूम था कि दीदी गुड़िया की माला चुराकर लाई अथवा नही। इसके पहले उसने गुड़िया की माला कभी नही देखी थी, पर यह उसे मालूम था कि अमिया चुराई हुई नही थी। कल शाम को दीदी जब उसे साथ लेकर टूनू के बाग मे आम बीनने गई थी, तो सोनामुखी पेड के नीचे कुछ अमियां पड़ी हुई थी, दीदी ने उन्हीको बटोर लिया था। कल से कई बार दीदी कह चुकी थी . 'ओ अपू, अब इन अमियो को बनाना है, ठीक है न।'

पर मा की असुविधाजनक उपस्थिति के कारण यह प्रस्ताव कार्यान्वित नही किया जा सका था। दीदी की इतनी चाव की चीज अमियों को ले भी गए और तिसपर दीदी इस प्रकार पिटी भी। दीदी के बाल उखाड लेने के कारण मा पर उसे बहुत क्रोध आया। जब उसकी दीदी के माथे पर के रूखे बालो का गुच्छा हवा से उडता है, तभी न जाने क्यों उसे दीदी पर बड़ी ममता होती है। ऐसा मालूम होता है जैसे दीदी का कोई नही है, वह अकेली न जाने कहा से आ गई है, कोई उसके साथ नही है। उसके मन मे बस यही बात आती है कि वह कैसे दीदी के दु खो को दूर करे और उसके अभावो को पूरा करे। वह उसे जरा भी तकलीफ मे नही रहने देना चाहता।

खाने के बाद अपू मा के डर के मारे कोठरी मे ही बैठने लगा, पर उसका मन रह-रहकर बाहर की ओर दौड़ रहा था। जरा दिन ढलने पर वह टूनू , पटली, नेडा, एक-एक करके सबके घर खोज डाले, पर दीदी का कही पता नही लगा। राजकृष्ण पालित की स्त्री घाट से पानी ला रही थी उससे उसने पूछा . 'ताई, तुमने मेरी दीदी को देखा है ? उसने आज भात नही खाया, कुछ नही खाया, मा ने उसे आज बहुत मारा है, मार खाकर कही चली गई है। क्या तुमने उसे देखा है, ताई !'

वह मकान के बगल मे जाते-जाते सोचने लगा कि शायद वह बास की झाडी मे हो। उसने वहा भी अच्छी तरह खोज की। वह पीछे के दरवाजे से घर मे आया, पर घर मे कोई नहीं था। उसकी मा शायद घाट पर या दूसरी जगह कही गई थी।

घर पर सन्ध्या की छाया पड़ने लगी थी। सामने दरवाजे के

पास वास की जो झाड़ी झुक गई है, उसकी एक लटकी हुई सूखी खपच्ची पर उसकी वह परिचित बड़ीपूछ वाली पीली चिड़िया आकर वैठी थी। प्रतिदिन वह सन्ध्या से कुछ पहले आकर इस खपच्ची पर वैठती है। यह उसका नित्य का नियम है। और भी तरह-तरह की चिडिया चारो तरफ के जंगल मे चहचहा रही है। नीलमणि राय का गिरा हुआ घर पेड़-पत्तो की घनी छाया से ढंक गया है। अपू ने आगन मे खडे होकर दूर के उस पीपल की चोटी की ओर देखा। पेड़ की चोटी पर अभी तक जरा ज़रा लाल धूप पड रही थी। सवसे ऊपर की फुनगी पर सफेद-सी कोई चीज़ हिल-डुल रही थी, शायद वगुला हो या किसीकी कटी हुई पतग झूल रही हो।

सारे आकाश पर जैसे छाया और अन्धकार उतर रहा है। चारो तरफ सुनसान है, कही कोई नही है। नीलमणि राय के गिरे हुए घर मे अरवी की झाडी के वहुत हरे नये पत्ते चमक रहे थे। उसका मन एकाएक रो पडा—उसे गए कितनी देर हो गई अभी तक घर नही आई कुछ खाया-पिया नही। दीदी आखिर कहा गई ?

भुवन मुकर्जी के घर के लड़के-वच्चे आगन मे दौड-दौडकर लुका-छिपी खेल रहे थे। रानी उसे देखकर दौडकर आई . 'भाई, देखो अपू आया है, वह हमारी तरफ रहेगा—आ जा अपू !'

अपू ने अपना हाथ छुडाकर कहा : 'मैं नही खेलूगा रानी दीदी, तुमने दीदी को देखा है ?'

रानी ने पूछा . 'दुर्गा ? नही, उसे तो नही देखा। कही वह मौलश्री के नीचे तो नही है ?'

उसे मौलश्री की वात याद ही नही पड़ी थी। वहा दुर्गा अक्सर रहती है, यह वात सही है। वह भुवन मुकर्जी के घर से सीधे मौलश्री के नीचे पहुचा। शाम हो गई है। मौलश्री का पेड तरह-तरह की लताओ से लिपटा हुआ अघेरा घुप्प होकर खडा है। कही कोई नही था; हा, कोई पेड पौधों की आड़ मे भी रह सकता है। उसने चिल्लाकर पुकारा : 'दीदी, ओ दीदी ?'

अघेरे पेड पर कुछ वगुले पख फडफडा रहे थे। अपू ने डरते-डरते ऊपर की तरफ देखा। मौलश्री से जरा दूर पर गढे के किनारे खजूर



का पेड़ है। इन दिनो गधपके खजूरो का समय है, वहा भी दीदी कभी-कभी रहती है। पर अन्धेरा हो गया है, गढे के दोनो तरफ बांस की झाडिया हैं, उसे वहा जाने का साहस नही हुआ।"मौलश्री पेड के तने के पास से हटकर उसने दो-एक वार नाम लेकर पुकारा। सॅवड़ के जगल मे से कोई जानवर उसकी आहट पाकर खसखस शब्द करता हुआ गढे की तरफ भाग गया।

घर के रास्ते मे लौटते-लौटते वह एकाएक ठिठककर खडा हो गया। सामने ही वह तेंदुआ का पेड था। एक तो सन्ध्या का समय और तिसपर तेंदुवे के पेड के नीचे से गुजरना। उसके रोगटे खडे हो गए। उसे नही मालूम कि उसे इस पेड के नीचे से गुज़रने मे भय क्यो लगता है। कोई कारण नही है, फिर भी भय लगता है और कारण नही है इसलिए भय भी अधिक लगता है। जो मन पर बोझ न होता और वह इस प्रकार अन्यमनस्क न होता, तो वह हर्गिज़-हर्गिज़ इस रास्ते नही आता।

अपू थोड़ी देर तक अघेरे मे तेंदुवे के पेड की ओर ताकता रहा। घर लौटने का एक और रास्ता है, जरा घूमकर पटली के मकान के आगन से जाने पर तेंदुवे के पेड की इस अज्ञात विभीषिका से छुटकारा मिल सकता है।

पटली की दादी सध्या समय आगन मे बैठकर घर के बाल-बच्चो को कहानी सुना रही थी। पटली की मा रसोईघर मे 'री। आगन मे चौखट से लगकर विघू मल्लाहिन मछली के पैसो का तकाजा दे रही थी। अपू बोला · 'दादी, मैं दीदी को खोजने गया था, मौलश्री के पास से आते-आते···'

दादी बोली · 'दुर्गा अभी-अभी घर गई है। अभी तो गई है, दौडकर जा, शायद अभी घर नही पहुची होगी···'

वह बिना कुछ कहे घर की तरफ दौड पडा। पीछे से पटली बहिन चिल्लाकर बोली : 'अपू, कल सवेरे जरूर आना! हम लोगो ने गगा-यमुना खेल के लिए नये घर बनाए हैं। ढेंकी घर के पीछे नीम के नीचे है। दुर्गा से भी कहना।'

पर घर के पास आकर वह एकाएक ठिठककर खडा हो गया·

दुर्गा कातर स्वर मे चिल्लाती हुई घर से दौडकर वाहर आ रही थी। उसके पीछे-पीछे उसकी मा कोई चीज हाथ मे लिए खदेडती आ रही थी। दुर्गा तेंदुवा पेड की ओर भागी। मा भागती हुई बेटी से चिल्लाकर बोली : 'जा चली जा, हमेशा के लिए चली जा। फिर कभी इस घर मे पैर न रखना। आफत कही की। मर जाए तो सप्तपर्ण पेड के नीचे दे आऊ।'

सप्तपर्ण के नीचे गाव का मरघट है। सारी वात सुनकर अपू का सारा शरीर पत्थर की तरह भारी और वोझिल हो गया। उसकी मा भीतर मकान मे घुसकर अभी मिट्टी के दीये को वरामदे के किनारे से उठा ही रही थी कि वह दवे पाव घर मे दाखिल हुआ। उसकी मा उसे देखते ही वोली · 'यह तो वता, इतनी रात तक तू कहां था ? आज ही तूने पथ्य पाया है।'

अपू के मन मे तरह-तरह के प्रश्न उठ रहे थे—दीदी फिर क्यो पिटी ? वह इतनी देर तक कहा थी ? दोपहार के समय दीदी ने क्या खाया होगा ? क्या उसने फिर कोई चीज चुराई है ? पर वह डर के मारे कुछ न कहकर यात्रिक गुडिया की तरह मा के कहे के अनुसार कोठरी मे गया। वाद को डरते-डरते दीए की वत्ती सरकाकर अपनी छोटी पुस्तको को निकालकर वाहर पढने वैठ गया। यद्यपि वह इस समय तीसरी किताव पढता था, पर उसकी कितावो के गट्ठर मे मोटी-मोटी दो न जाने कौन अग्रेजी कितावें, वैद्य की दवाओ की सूची, एक दाशराय की पाचाली जिसके कुछ पन्ने गायव हैं, १३०३ साल का पाचाग है। उसने वहुत जगहो से माग-जाचकर इनका सग्रह किया था, और यद्यपि वह इन्हे पढ नही सकता है, पर उन्हे प्रतिदिन एक वार खोलकर देख तो लेता ही है।

वह थोडी देर तक दीवार की तरफ देखकर कुछ सोच रहा था। वाद को फिर एक वार वत्ती सरकाकर फटी हुई दाशराय की पाचाली खोलकर अन्यमनस्क ढग से पन्ने उलट रहा था, इतने मे सर्वजया एक कटोरी मे दूध लेकर आई और वोली - 'ले, अव पी तो ले।'

अपू विना किसी चू-चपड के कटोरी उठाकर दूध पीने लगा। दूसरे दिन उसे इतनी आसानी से दूध पीने पर राजी नही किया जा



सकता था। पर थोडा-सा पीकर उसने कटोरी से मुह हटा लिया। इसपर सर्वजया वोली : 'यह क्या ? सारा दूघ पी डालो इतना-सा दूघ भी नही पियोगे, तो जियोगे कैसे ?'

अपू ने विना कुछ कहे फिर दूध की कटोरी को मुह से लगा लिया। सर्वजया ने देखा कि वह कटोरी से मुह तो लगाए हुए है, पर घुटक नही रहा है और उसका कटोरी समेत हाथ काप रहा है। वाद को कुछ देर कटोरी मुह से लगाए रहकर उसने एकाएक कटोरी मुह से उतार दी और मा की तरफ ताककर डर के मारे रो उठा।

सर्वजया ने आश्चर्य के साथ कहा 'क्या हुआ ? क्या जीभ दात के नीचे आ गई ?'

मा की बात अभी खतम नही हो पाई थी कि अपू भय-डर की वाधा न मानकर चिल्लाकर रो पडा . 'दीदी के लिए वहुत सोच हो रहा है···'

सर्वजया थोडी देर चुप रहने के वाद लडके के पास आकर उसके शरीर पर हाथ फेरते हुए शान्त स्वर मे वोली : 'रोओ मत, इस तरह मत रोओ। वह पटली या नेडा के घर मे वैठी होगी, आखिर अन्धेरे मे कहा जाएगी ? क्या वह कम दुष्ट लडकी है ? दोपहरी के समय जो निकली सो दिन-भर शकल नही दिखाई। न खाना, न पीना, उस मुहल्ले के पालित के वाग मे वैठी थी। वहा वैठकर कच्चा आम और जामरुल खाती रही। अभी वुलावा भेजती हू। इस तरह न रोओ नही तो फिर वुखार आ जाएगा। नही वेटा, मत रोओ।'

वाद को उसने आचल से लडके के आसू पोछ दिए और वाकी दूध पिलाने के लिए सामने कर दिया। वोली : 'राजा वेटा, मुह तो खोलो। वे आते ही वुला लाएगे। एकदम पागल है। कही का एक पागल आया है। और एक घूट वस हो गया।'

रात वहुत हो गई थी। उत्तर की कोठरी के तखत पर अपू और दुर्गा लेटी हुई थी। अपू की वगल मे मा के सोने के लिए जगह खाली पडी है। अभी मा रसोई के काम से फारिग नही हुई। पिताजी खाना खाकर वगल के कमरे मे तम्वाकू पी रहे हैं। वही घर आने पर मुहल्ले से दुर्गा को खोज लाए थे।

घर आने के वाद से दुर्गा ने किसीसे कोई वात नही की थी। वह खाना-पीना खतम कर चुपचाप लेटी हुई थी। अपू ने दुर्गा की देह छूकर पूछा : 'दीदी, मा ने सन्ध्या समय काहे से मारा था ? क्या वाल भी नोच लिए थे ?…'

दुर्गा ने कुछ नही कहा।

उसने फिर से पूछा : 'दीदी, तुम क्या मुझसे नाराज़ हो ? मैंने तो कुछ भी नही कहा।'

दुर्गा ने धीरे से कहा : 'नही किया ? फिर सतू को कैसे मालूम हुआ कि गुडिया की माला मेरे वक्स मे है ?'

अपू प्रतिवाद करने की उत्तेजना मे बिस्तरे मे उठकर बैठ गया, बोला : 'नही मैं सच कहता हू, तुम्हारा वदन छूकर कहता हूं, मैंने उसे नही दिखाया। मैं यह भी नही जानता था कि तुम्हारे वक्स मे वह चीज है। कल सत शाम के समय आया था और हम लोग उसकी लाल वडी गेंद लेकर खेलते थे। उसके वाद क्या हुआ कि सतू तुम्हारी गुड़ियो के वक्स को खोलकर देख रहा था। मैंने उसे मना किया कि तुम दीदी की गुडियो का वक्स मत छूओ। इससे दीदी मुझपर नाराज होगी। मालूम होता है उसने उसी समय देख लिया।'

वाद को उसने दुर्गा के वदन पर हाथ फेरते हुए कहा : "दीदी, वहुत चोट लगी है न ? मा ने कहा मारा ?'

दुर्गा वोली : 'मा ने कनपटी पर ऐसा मारा कि खून निकल आया अब तक छरछरा रहा है। देख, हाथ से टटोलकर देख, यह रहा…

—अच्छा यहा ? यहां तो वहुत कटा है। जरा दीए का तेल लगा दू ?

—रहने दे कल शाम के समय पालित के बाग मे जाऊंगी। समझा। कमरख पके हैं। इतने बड़-बड़े हैं। किसीको वताना मत। तू और मैं चुपचाप जाएगे। मैंने आज दोपहर को दो तोडकर खाए थे। गुड की तरह मीठे हैं।

सर्वजया घर मे नही थी। उसने मुहल्ले से आकर देखा कि लड़का और लडकी दोनो मकान के भीतर की ओर दरवाजे के पास खड़े हैं। पास जाने पर दुर्गा ने चुपके से कहा : 'मा, हम लोगो ने एक चीज



पड़ी पाई है। गढ पोखर मे हम लोग सिंघाड़े तोड़ने गए थे। वहां यह जंगल मे गड़ा हुआ था।'

अपू बोला : 'मा, मैंने देखकर दीदी को बताया।'

दुर्गा ने कपडे की खूट से उस चीज को मा के हाथ मे देते हुए कहा · 'मां, देखो तो यह क्या है ?'

सर्वजया उसे लौट-पौटकर देखने लगी। दुर्गा ने फुसफुसाकर कहा : 'मा, क्या यह हीरा नही है ?'

सर्वजया भी हीरे के सम्बन्ध मे अधिक ज्ञान नही रखती थी। उसने सन्देह-भरे स्वर मे कहा : 'तूने कैसे जाना कि यह हीरा है ?'

दुर्गा बोली : 'मजुमदार लोग बहुत बड़े आदमी थे। उनके घर के खडहर मे किसीने मुहरें पाई थी, फूफी सुनाया करती थी। यह एकदम पोखर के किनारे जगल मे गडा हुआ था। धूप पडने से चमक रहा था, मा यह जरूर ही हीरा है।'

सर्वजया बोली . 'पहले वे आ जाए, तो उन्हे दिखाऊ।'

दुर्गा बाहर के आंगन मे आकर खुशी-खुशी भाई से बोली : 'जो यह हीरा निकला, तो देखना हम लोग बडे आदमी हो जाएगे।'

अपू बिना समझे-बूझे बेवकूफ की तरह ही-ही करके हसने लगा।

लडका-लडकी के चले जाने पर सर्वजया ने उस चीज को निकालकर बड़े ध्यान से देखा। गोल-सी अजीब तरह से कटी हुई और एक तरफ नुकीली जैसे सेंदुरकी डिबिया के ढक्कन का ऊपरी हिस्सा हो। अच्छी चमकती हुई चीज थी। सर्वजया को ऐसा प्रतीत हुआ जैसे उसमे बहुत तरह के रग देख पा रही है। इतना तो निश्चित है कि यह कांच नही है। कभी उसने ऐसा काच देखा है, यह उसे याद नहीं पडा। एकाएक उसके सारे बदन मे जैसे कोई बिजली छू गई हो, उसके मन के एक किनारे पर विभिन्न सन्देहो की बाधाओ को ठेलकर एक बहुत बडी दुराशा जैसे डरते-डरते अगडाई लेने लगी, सचमुच ही यदि यह हीरा निकला तो ?

हीरे के सम्बध मे उसकी धारणा पारस पत्थर या साप के सिर की मणि के ढग की थी। कहानियो मे जरूर इनका अस्तित्व होता है, पर वास्तविक जगत मे ये कम पाए जाते है, और यदि कभी पाए जाए

तो शायद एक टुकड़ा हीरे के बदले संसार का सारा ऐश्वर्य मिल सकता है। थोडी देर बाद एक पोटली हाथ में लेकर हरिहर घर लौटा।

सर्वजया बोली : 'अजी सुनो, इधर तो आओ, देखो तो यह क्या है।'

हरिहर ने हाथ मे लेकर कहा : 'कहां मिली ?'

—दुर्गा गढ पोखर में सिंघाडे ढूढने गई थी, वही उसे मिली है।

—क्या चीज़ है, देखू तो भला।

हरिहर ने उसे थोडा उलट-पुलटकर देखते हुए कहा : 'काच है. नही तो पत्थर-वत्थर कुछ होगा। इतनी छोटी-सी चीज़ है, कुछ समझ मे नही आता।'

सर्वजया के मन मे ज़रा क्षीण आशा की रेखा दिखाई पडी। काच होता तो क्या उसका पति पहचान न पाता। बाद को उसने चुपके से मानो इसलिए कि कही पति-विरोधी युक्ति न देने लगे, डरती-डरती बोली : 'कही हीरा तो नही है। दुर्गा कह रही थी कि मजुमदार की गढी मे जाने कितने लोगो ने कितनी चीज़ें पाई हैं। जो हीरा हुआ तो ?'

—इस तरह हीरा कहीं रास्ते मे पडा मिलता तो फिर चिंता क्या थी ? तुम भी क्या हो···

हरिहर के मन में यह धारणा हुई कि यह काच है, पर अगले ही क्षण उसके मन ने कहा : 'हो भी सकता है। कौन जाने ? मजुमदार लोग बड़े आदमी थे। सभव है कि कभी उनके गहनो या किसी चीज़ मे यह जडा हुआ हो। किसी तरह मिट्टी मे गड गया हो। कहावत ही है कि यदि भाग्य मे नही तो गुप्त धन हाथ मे आ जाने पर भी पहचान मे नही आता। क्या गरीब ब्राह्मण की कहानी उस पर भी घटेगी ?'

उसने कहा : 'अच्छा ठहरो मैं इसे गागुली बाडी मे दिखाकर आता हूं।'

रसोई करते-करते सर्वजया मन ही मन मनाती रही : 'दुहाई ठाकुरजी, कितने लोग कितनी चीज़ें पडी हुई पा जाते हैं। घर पर



ठाकुरजी।'

उसकी छाती धक-धक हो रही थी।

थोडी देर बाद दुर्गा आकर आग्रह के साथ बोली · 'मा, पिताजी अभी तक घर नही लौटे ?'

साथ ही साथ हरिहर मकान मे प्रवेश करते हुए बोला 'उह, हमने उसी वक्त कहा था। गागुलीजी के दामाद सत्यबाबू कलकत्ता से आए है। उन्होने देखकर कहा कि यह एक तरह का बिल्लौरी काच है जो झाड-फानूस मे काम आते है। जो राह चलते हीरे-जवाहरात मिल जाते तो फिर·· तुम भी जैसी हो।'

६

वैसाख के दिन थे। लगभग दोपहर का समय।

सर्वजया मसाला बाटते-बाटते दाहिने हाथ के पास रखी हुई फूलो की एक डोलची मे (बहुत दिनो से इस डोलची का फूलो से कोई नाता नही रखा गया था, अब मसाले रखने के काम आती थी) मसाला खोजते हुए बोली 'फिर जीरा और मिर्च की पोटली कही गायब कर दी ? अपू, तूने नाक मे दम कर रखा है। क्या पकाने नही देगा ? मेरा क्या, थोडी देर बाद तू ही कहेगा कि मा भूख लगी है।'

पर अपू का कही पता नही था।

—दो तो बेटा मेरे लाल। क्यो परेशान करते हो। देख नही रहे हो कि दिन ढल रहा है।

अपू ने रसोईघर के भीतर से दरवाजे के पास से चोरी से देखा। मा की आख उधर पडते ही उसने अपने शरारत की हसी-भरे मुखडे को, घोघा जैसे खोल के अन्दर छिप जाता है उसी तरह, दरवाजे की आड मे छिपा लिया। सर्वजया बोली · 'देखो तो, अजीब बात है। दोपहर के समय क्यो तंग कर रहे हो बेटा। दे दो।'

अपू ने फिर हसते हुए छिपकर मुह बढाया।

—लो मैंने देख लिया। अब छिपने से क्या फायदा, दे जाओ,

अपू सोचता है कि मा को कैसा चकमा दिया। मा के साथ इस खेल मे मजे भी हैं। सर्वजया जानती है कि जो उसने यह दिखाया कि वह भी खेल में हिस्सा ले रही है तो दिन-भर यह तूफान चल सकता है, इसलिए उसने झिडकते हुए कहा : 'तो फिर पड़ा रहा पकाना-धकाना। अपू, तुम इस तरह शरारत कर रहे हो, खाने को मांगोगे तो फिर मजा मालूम होगा।'

अपू ने हसते-हसते गुप्त स्थान से निकलकर मा के सामने मसाले की पोटली रख दी।

मां बोली : 'जा थोडी देर बाहर खेल। चलकर देख तो तेरी दीदी कहां है। तेंदुवे के नीचे खडा होकर जरा चिल्लाकर पुकार तो सही। आज उसके नहाने का दिन है। उस कमबख्त लड़की का कही पता भी तो मिले। जा तो राजा, उसे ढूढ तो ला।'

पर उसमे मा की आज्ञा मानने की कोई प्रवृत्ति दिखाई नही पड़ी। वह मसाला पीसती हुई मा के पीछे जाकर कुछ करने लगा।

—उ हू······उ······उम······

सर्वजया ने पीछे लौटकर देखा कि छप्पर की बाती पर रखे हुए वड़ी देने के पुराने टाट को उतारकर उसे ओढ़ते हुए अपू घुटनो के बल चल रहा है।

—देखो-देखो, लडके की बदमाशी न देखो। अरे ओ कमबख्त! उसमें तो दुनिया-भर की धूल है। फेंक-फेंक, पता नही उसमे कोई कीडा-मकोड़ा भी छिपा बैठा है या नही। न जाने कितने दिनो से वहीं पडा है।'

अपू ने पहले से गम्भीर लहजे मे कहा· 'उहू ·····उ······ उम'

—कहने पर बात थोडे मानता है। मेरे मुन्ना, मेरे लाल। उसे फेंक दे। मेरे हाथ मे मसाला लगा हुआ है। शरारत मत करो।

अब टाट ओढी हुई मूर्ति घुटनो के बल दो कदम आगे बढ आई। सर्वजया बोली · 'क्या तू मुझे छुएगा? राजा बेटा मुझे मत छुओ, ओह! मैं डर के मारे मर रही हू, मुझे बहुत ही डर लग रहा है।'

अपू ही ही करके हसकर टाट को खोलकर एक तरफ रखते हुए





उठ खड़ा हुआ। उसके बाल, मुह, भौंहें, कनपटी सब धूल से भर गई थी। अजीव-सा चेहरा बनाकर वह सामने के छोटे-छोटे दातों के खेल मे किट-किट कर रहा था।

—अब कहा जाऊ ? क्या करू ? अरे पागल, तू तो धूल मे सनकर एकदम भूत बन गया है और सो भी उस पुराने टाट की धूल। बिलकुल पागल है।

धूल लिपटे हुए बिलकुल अबोध पुत्र के प्रति सर्वजया का हृदय करुणा और ममता से पसीज गया। पर अपू ने बासी धोती पहन रखी थी। नहा-धोकर उसे छूआ नही जा सकता, इसलिए वह बोली 'ले, वह अगोछा ले, पहले उससे धूल झाड ले। जाने कैसा लडका है ?'

थोडी देर बाद लडके को रसोईघर के पहरे मे बैठाकर वह पानी लेने के लिए पोखर मे जा रही थी, तो उसने देखा कि दुर्गा घर मे आ रही है। चेहरा धूप से लाल हो रहा है, बाल बिखरे हुए थे, फिर भी धूल सने पैरो मे आलता लगा हुआ था। एकदम से मा के सामने पड जाने पर उसने खूट मे बधे आमो को दिखलाकर कहा 'मैं पुण्य पोखर व्रत के लिए राजी के घर मे चने के पेड लेने लगी थी। आम तोडे गए हैं। उसी का हिस्सा बाट हो रहा था, तभी राजी की फूफी ने दिए।'

'लड़की की हालत तो देखो ! सारी देह खोसी हो रही है, बाल देखो तो बुखार आ जाए, व्रत के सोच मे तो तुझे रात को नींद न आती होगी'—कहकर लडकी के पैरो की तरफ देखकर बोली 'फिर से तूने लक्ष्मी-पूजा की टोकरी से आलता लगाया है ?'

दुर्गा ने आचल से मुह पोछकर बिखरे हुए बालो को सम्हालकर कहा . 'यह लक्ष्मी-पूजा की टोकरी का आलता नही है। कभी नही है। उस दिन मैंने पिताजी से हाट से एक पैसे का आलता मगाया था। उसीके दो पत्ते मेरी गुडिया वाले बक्स मे पड़े थे न ?'

हरिहर चिलम हाथ मे लेकर रसोईघर के बरामदे मे आग लेने के लिए आया।

सर्वजया बोली 'मैं घडी-घडी तुम्हारे लिए आग कहा से लाऊ ? बास की आग भला कितनी देर रहती है ? जो सुन्दरी पेड़ की लकडी का बन्दोबस्त कर देते, तो बात और थी।'

कहकर उसने आग देने के लिए रखे हुए पीतल के टूटे कलछुल से आग उठाकर नाराजगी के साथ सामने कर दी। फिर कुछ नरम पड़ती हुई बोली : 'क्या रहा ?'

—सब ठीक-ठाक था। घर-भर दीक्षा लेने के लिए तैयार थे, पर एक झखेड़ा खडा हो गया। महेश विश्वास की ससुराल की जायदाद मे कुछ गडबड़झाला हो गया हैं, इसलिए वह वही चला गया। असली मालिक तो वे ही हैं न ? इसलिए मामला कुछ टल गया। फिर इधर असाढ महीने से अकाल भी पडने लगा है।

—और यह जो कहा था कि बसने को ज़मीन देगा, सो उसका क्या हुआ ?

—उसी बखेडे के कारण सब गडबड़ा गया। असली बात तो दीक्षा लेना है, जो वही टल गया, तो फिर बसने की बात कैसे चलाऊ ?

सर्वजया ने बडी-बडी आशाए बाध रखी थी, खबर सुनकर उसे बडी ठेस लगी। बोली : वहा न सही, और कही देखो न ! घर का जोगी जोगिया आन गाव का सिद्ध, यहा कोई टके सेर भी नही पूछता। आम, कटहल का समय है पर घर मे न आम है न कटहल। आज लड़की किसीके घर से दो अधसड़े आम लाई है'—कहकर वह मकान के पश्चिम की ओर देखकर बोली : 'हमारी नाक पर से रोज टोकरियो आम तोडकर लोग ले जाते है और हमारे बच्चे टुकुर-टुकुर देखते रहते है। क्या यह कोई कम कष्ट है ?'

बाग की बात उठने पर हरिहर बोला : 'वह क्या कम धोखेबाज है ? साल मे हस-खेलकर पचीस रुपये मिल जाते थे, सो उसने पाच रुपये मे लिखा लिया। मैंने उसे जाकर इतना समझाया कि चाचाजी हमारे बाल बच्चे है, उस बाग मे आम और जामुन बीनकर बड़े हो रहे है। इसके अलावा मेरे पास कुछ है भी तो नही। मैंने यह भी कहा कि भगवान की इच्छा से आपको कोई कमी नही है। दो बडे-बड़े बाग है, जिनमे आम, जामुन, नारियल, सुपारी सभी कुछ लगते हैं, आप मेरा बाग छोड दीजिए। इसपर क्या बोला, जानती हो ? बोला कि नीलमणि भैया बडी मुसीबत मे पडे थे, इसलिए उन्होने भुवन मुकर्जी के सामने तीन सौ रुपये के लिए हाथ पसारे थे। असली बात यह थी



कि भाभी को भोली-भाली पाकर इसने अपना उल्लू सीधा कर लिया।'

—भोली-भाली नही तो क्या है ? सुनती हू कि उसने कहा है कि रिश्तेदार के हाथ बाग गया तो कुछ भी नही मिलेगा। फल-फूल तो यो ही खा लेंगे। इससे अच्छा है कि कुछ कम मे भी बन्दोबस्त हो जाए, तो जो भी रकम तय होगी वह मिलेगी तो सही।

हरिहर बोला 'तो यहा हम भी वह रकम दे ही सकते थे, पर यहा तो कानोकान खबर ही नही लगने दी कि वह बाग का बन्दोबस्त कर रही है। भाभी को हलुवा-पूडी खिलाकर अपने काबू मे करके चुपके से लिखा लिया।'

शाम को एकाएक अन्धेरा करके कालवैशाखी की आधी आई। बड़ी देर से बदली हो रही थी, फिर भी आधी कुछ पहले ही आ गई। अपू के घर के सामने की झाडी के बास दीवार पर से आधी से उधर गिर जाने के कारण मकान जैसे कुछ खुला दिखाई देने लगा। धूल, बास के पत्ते, कटहल के पत्ते, सरपत चारो तरफ से उडकर आगन मे जमा हो गए। दुर्गा आम बीनने के लिए दौड पडी। अपू भी दीदी के पीछे-पीछे दौडा। दुर्गा दौडते-दौडते बोली 'जल्दी दौड। तू सिन्दूरी आम के नीचे रह, मैं सोनामुखी पेड के नीचे जाती हू। दौड़ ! दौड !!'

धूल चारो तरफ भर गई थी। बडे-बड़े पेडो की डालें आधी से टेढी पड जाने के कारण पेड की चोटिया नगी मालूम पड रही थी। पेडो पर सन-सन, साय-साय हवा चल रही थी। बाग मे सूखी डालें, घास-पत्ते, बास के छिलके उडकर गिर रहे थे। बास की सूखी पत्तिया अपने नुकीले हिस्सो को ऊपर की ओर रखकर आसमान मे चढ रही थी। कुक्सिमा पेड के रोए की तरह परवाले सफेद-सफेद फूल पता नही ढेर के ढेर कहा से उड़कर आ रहे थे। हवा के मारे कान बहरे हो रहे है।

सोनामुखी आम के पेड के नीचे पहुचकर अपू ने बडे उत्साह से चिल्ला-चिल्लाकर छलागें मारते हुए कहा 'दीदी यह गिरा, एक उधर गिरा, एक इधर गिरा।'

वह जितना चिल्लाने लगा, उसके अनुपात से आम बटोर नहीं सका। आधी तेज होती जा रही थी। आधी की आवाज मे आम

गिरने की आवाज अब सुनाई नही पड रही थी। और यदि सुनाई भी पडी तो यह पता नही लगता था कि आम किधर गिरा। दुर्गा ने इतनी देर मे आठ-नौ आम बटोरे, पर अपू इतनी दौड़-धूप के बाद केवल दो ही आम बटोर सका था। उन्हीको वह खुशी के साथ दिखाते हुए बोला : 'देखो दीदी, ये कितने बड़े है, फिर उधर एक गिरा, उस तरफ...'

इतने मे भुवन मुकर्जी के घर के लडके-बच्चे रोला मचाते हुए आम बटोरने आ रहे है, यह सुनाई पड़ा। सतू ने चिल्लाकर कहा : 'दुर्गा दीदी और अपू आगे से बटोर रहे हैं...'

वह गिरोह सोनामुखी पेड के नीचे आ पहुचा। सतू बोला · 'हमारे बाग मे तुम आम बीनने क्यो आए हो ? उस दिन मां ने मना कर दिया था न ? देखू तुमने कितने आम बटोरे है ?'

बाद को उसने अपने गिरोह की ओर देखकर कहा : 'देखा टूनू, सोनामुखी के कितने आम बटोरे हैं ? जाओ दुर्गा दीदी, हमारे बाग से चली जाओ, नही तो मा से चलकर कह दूगा।'

रानी बोली · 'इन्हे क्यो भागा रहे हो ? वे भी बीनें और हम लोग भी बीनें।'

—नही हरगिज नही। जो वह यहा रहेगी तो सब आम उसी के पल्ले पडेंगे। फिर वह हमारे बाग मे आनेवाली होती कौन है ? नही जाओ दुर्गा दीदी। हम तुम्हे यहा रहने नही देंगे।'

और कोई मौका होता तो दुर्गा आसानी से हार नही मानती, पर उस दिन इन्ही लोगो की शिकायत पर मा से पिटी थी इसलिए उसने फिर झगडा मोल लेने का साहस नही किया। इसलिए बहुत आसानी से हार मानकर उसने कुछ मन मारकर कहा . 'अपू, चल हम लोग चलें।'

बाद को एकाएक, चेहरे पर बनावटी खुशी लाकर बोली . 'चल अपू, हम लोग उस जगह चलें। यहा बीनने नही दिया, तो सिगट्टे से। समझा न ? वहा तो इनसे भी बडे-बडे आम हैं। वहा खूब मजे से से आम बीनेंगे, चल आ !'

उसने ऐसा दिखाया कि यहा रहने के कारण वह नुकसान ही



उठा रही थी और चला जाना उसके हक मे अच्छा ही हुआ, और फिर वह पहले से अधिक उत्साह के साथ अपू के आगे-आगे रागचीता के घेरे में एक जगह सास पाकर वहा से बाग के बाहर निकल गई।

रानी बोली 'क्यो भाई, उन्हे भगा क्यो दिया ? सतू भैया, तुम बहुत डाह करते हो।'

बात यह है कि दुर्गा ने जो आत्मविश्वास दिखलाया था, रानी पर उसका बडा असर हुआ था।

अपू यह नही समझा था कि इन बातो मे क्या रहस्य है, इसलिए वह बाग के घेरे के बाहर आकर पूछ बैठा 'दीदी, बड़े-बड़े आम कहा लगे हैं ? क्या पूटू के बाग मे सलते खागी (पलीता खोर) आम के नीचे चलें ?'

दुर्गा ने अभी तय नही किया था कि कहा चलें, इसलिए सोचते हुए बोली : 'चल गढ पोखर के किनारे के बाग मे चल। उधर सब बड़े-बड़े पेड हैं। चल।'

गढ पोखर यहा से पन्द्रह मिनट ऐंड़े-बैडे रास्ते मे होकर न जाने कितने जगल पार करके पहुचा जा सकता है। वहा बहुत पुराने आम और कटहल के पेड थे, जिनके नीचे नीचे तरह तरह की जगली काटो की झाडिया, जंगली चालता[1] होने के कारण दुर्गम बना हुआ था। बस्ती तथा आबादी से दूर होने के कारण इन घने जगलो मे आम बीनने शायद ही कोई आता था। रस्सियो की तरह मोटी बहुत पुरानी गिलोय की लताए पेडो पर लटकती दिखाई पडतीं थी। इन बडे-बड़े पुराने पेड़ो के नीचे की काटेदार घनी झाडियो मे गिरे हुए आम ढूढना टेढो खीर तो है ही, साथ ही साथ घने काले बादल घिरे होने तथा बाग के अन्दर जगली पेडो की बहुतायत होने के कारण अन्धाधुन्ध हो रहा था। कुछ अच्छी तरह सुझाई नही पडता था। फिर भी हठीली दुर्गा ने आठ-दस आम ढूढकर ही दम लिया।

एकाएक वह बोल उठी . 'अरे अपू ! पानी आ गया···'

साथ ही साथ आंधी कुछ नरम पड़ी। गीली मिट्टी की सोंधी

---

१. एक प्रकार का खट्टा फल।

गन्ध फैल गई और थोडी देर बाद ही पेडों के पत्तो पर तड़तड के साथ मोटी-मोटी बूदें पड़ने लगी।

—चल, हम लोग उस पेड के नीचे खडे हो जाए। यहा पानी से बचे रहेगे।

देखते-देखते चारो तरफ धुधला हो गया और मूसलाधार पानी पडने लगा। पानी की बूदो से पेड के पत्ते फट-फटकर गिरने लगे। ताजी गीली मिट्टी की गन्ध और भी जोर से आने लगी। आधी कुछ नरम पडी थी। पर वह पहले से बढ गई। दुर्गा जिस पेड के नीचे खडी थी, यों शायद वहा पानी न आता, पर पुरवैया की बौछारों से पेड के नीचे भर गया। घर से बहुत दूर इस तरह आंधी-पानी का सामना हुआ, इसीलिए अपू डरकर बोला ' दीदी, बड़े जोर का पानी है।'

दुर्गा ने उसे पास बुलाते हुए कहा : 'तू मेरे पास आ'—कहकर उसे आचल से ढककर बोली . 'पानी अभी बन्द होता है। यह अच्छा ही हुआ कि पानी बरसा; हम लोग फिर सोनामुखी पेड के नीचे जाएगे, ठीक है न ?'

दोनों चिल्लाकर कहने लगे .

नेबूर पाताय करमचा,

हे विष्टि धरेजा

[नीबू के पत्ते पर कमरख, हे वृष्टि, तू ठहर जा]

कड—कड़—कड···। विशाल जगल के घने अंधेरे के सिर को जैसे इधर से उधर तक चीरकर एक पल के लिए चारो तरफ रोशनी हो गई। सामने के पेड की फुनगियो पर जगली तोरई के गुच्छे झूल रहे थे। अपू डर के मारे बहन से चिपटकर बोला : 'ओ दीदी।'

—डरता क्यो है ?······राम राम कह, राम राम राम, नीबू के पत्ते पर कमरख, हे वृष्टि, तू ठहर जा। नीबू के पत्ते पर कमरख, हे वृष्टि तू ठहर जा।

जाडे के मारे अपू के दांतो से दात बज रहे थे। दुर्गा ने उसे अपने और भी पास खीच लिया और अन्तिम उपाय के रूप मे बार-बार जल्दी-जल्दी आवृत्ति करने लगी : 'नीबू के पत्ते पर कमरख, हे



वृष्टि, तू ठहर जा। नींबू के पत्ते पर कमरख, हे वृष्टि, तू ठहर जा। नींबू के पत्ते पर कमरख……डर के मारे उसका गला काप रहा था—'हे वृष्टि, तू ठहर जा।'

सन्ध्या होने मे देर नही थी। आधी-पानी रुके कुछ समय हो गया है। सर्वजया बाहर के दरवाजे पर खडी थी। रास्ते मे रुके हुए पानी मे छप-छप शब्द करती हुई राजकृष्ण पालित की लडकी आशालता पोखर घाट की ओर जा रही थी। सर्वजया ने पूछा 'बेटी, तुमने दुर्गा और अपू को तो नही देखा ?'

आशालता बोली 'नही चाची! वे कही गए हैं'—कहकर खुश-खुश बोली : 'कैसी जोर की बारिश हुई है कि मेढको के पौबारह हो गए।'

—वे दोनों आधी के पहले, आम बीनने जा रहे है, यह कहकर चले थे, तब से नही लौटे। आधी-पानी भी ठहर गया, दिन भी टल गया, फिर वे गए कहा ?

सर्वजया चितित होकर घर लौट आई। वह सोच रही थी कि क्या करे, इतने मे पीछे का दरवाजा ढकेलकर सिर से पैर तक भीगी हुई दुर्गा एक पक्का नारियल हाथ मे लेकर और पीछे-पीछे अपू नारियल का बडा-सा पत्ता घसीटते हुए घर मे आए। सर्वजया जल्दी से लडकी, लडके के पास दौड आई और बोली - 'मेरा क्या होगा ? भीगकर तुम दोनो का बुरा हाल हो रहा है। जब पानी पड रहा था, तो कहा थे ?'

लडके को पास खीचते हुए सिर पर हाथ रखकर बोली 'सिर बहुत भीग गया है।'

बाद को खुशी के साथ बोली 'दुर्गा, नारियल कहा मिला ?'

अपू और दुर्गा दोनो ने ही दबी आवाज मे कहा 'मा, चुप-चुप, संझली ताई बाग मे जा रही है, अभी-अभी गई है। उनके बाग के घेरे के किनारे जो नारियल का पेड है, उसीके नीचे यह पडा था। हम भी निकले और सझली ताई साथ ही साथ बाग मे गई।'

दुर्गा बोली : 'उन्होने अपू को तो जरूर देखा है और मुझे भी शायद देखा है।'

वाद को दवी जबान से पर वडे उत्साह के साथ वोली 'विलकुल पेड की जड मे पडा था। पहले मुझे दिखाई नही पड़ा। सोनामुखी के नीचे आम है कि नही देखने के लिए गई, तो देखा कि नारियल का पत्ता पडा है। मैंने अपू से कहा - अपू, पत्ता ले ले, मां को झाड़ू की तकलीफ है, सो इससे झाड़ू बन जाएगी। इसके वाद ही'—कहकर हाथ मे नारियल की ओर उद्भासित चेहरे से ताककर कहा : 'अच्छा-खासा वडा-सा है न ?'

अपू ने खुशी के साथ हाथ हिलाकर कहा : 'वस मैं पत्ते को लेकर एक दम दौड गया।'

सर्वजया वोली : 'अच्छा सुन्दर डवल नारियल है। वर्तन की जगह पर रख दे, मैं उसपर पानी का छींटा देकर ले लूंगी।'

अपू ने शिकायत के स्वर मे कहा : 'मां, तुम कहा करती हो कि नारियल नही है, नारियल नही है, वड़े नही वन सकते, पर अब नारियल मिल गया, मेरे लिए बड़े बनाने पड़ेंगे। मैं विलकुल नही मानूंगा। बड़े जरूर चाहिए।'

बारिश के पानी से वच्चो के चेहरे बारिश से धोई हुई जूही की तरह सुन्दर मालूम दे रहे थे। ठडक के मारे उनके होठ नीले पड़ गए थे, सिर के वाल भीगकर कानो से लिपट गए थे। सर्वजया बोली : 'आओ, पहले कपड़े वदल दूं, पैर धोकर तव वरामदे पर आओ।'

थोड़ी देर वाद सर्वजया पानी लेने के लिए घर के हाते मे गई। अभी वह भुवन मुकर्जी के भीतर के दरवाजे की चौखट तक पहुची ही थी कि सुनाई पड़ा कि सझली मालकिन चिल्लाकर मकान को सिर पर उठा रही हैं।

—ढेर-से रुपये देकर वाग लिया, कोई मुफ्त मे नही मिला। पर इन फटीचरो के मारे किसी पेड की कोई चीज कभी घर मे नही आती। वह छोकरी रात-दिन वाग के पहरे पर रहती है। कोई चीज गिरी कि वस उनके घर पहुंची। वह राड भी कोई कम थोड़े ही है। सब उसीके इशारे पर होता है। मैंने सोचा कि पानी थमा है, जरा जाकर देखू कि वाग का क्या हाल है, इतने में देखती हू कि बड़ा-सा नारियल लेकर नाक के सामने से सरपट निकल गई। हे भगवान !



तुम ऐसी दुश्मनी कब सहोगे ? उनका सत्यानाश हो जाए, उनकी खटोली उठे, मैं सांझ बेला यह कह रही हू कि अब उन्हें नारियल खाना नसीब न हो। अब उन्हे जल्दी ही सप्तपर्ण के नीचे जाना पड़े···

सुनकर सर्वजया को जैसे काठ मार गया। बच्चो के पानी से भीगे हुए नन्हे चेहरो की बात याद आकर उसने सोचा कि कही उसकी गाली फैल न जाए। है तो बड़ी अजीब औरत, मुह मे ज़हर है, क्या किया जाए ? यह बात सोचकर उसके सारे बदन में कपकंपी-सी आई और फिर देह बेसुध-सी लगने लगी। वह चौखट से ही लौट आई। सेंवढे के जगल में बास की झाडियो के नीचे वर्षा रुकने के बाद सन्ध्या समय जुगनू टिमटिमा रहे थे। उसके पैर मे जैसे कोई शक्ति नही रह गई थी। वह डरते-डरते पानी निकालने के लिए छोटी बालटी तथा घडा कमर पर दावकर लौट आई।

उसने लौटते वक्त सोचा, जो मैं नारियल लौटा दू, तो क्या गाली लगेगी ! जिसकी चीज़ उसे फेर दी गई तो फिर गाली क्यो लगेगी ?

घर मे पैर रखते ही उसने अपनी लडकी से कहा · 'दुर्गा ! जाओ सतू के घर में नारियल दे आओ।'

अपू और दुर्गा अवाक् होकर मां की तरफ देखने लगे।

दुर्गा बोली 'अभी ?'

—हा, अभी दे आओ। उनका पीछे का दरवाज़ा खुला है। जल्दी से जाओ, बोलना कि हमे पड़ा मिला था, अब ले लो।

—क्या अपू कुछ दूर तक मेरे साथ-साथ नही चलेगा ? मा, बहुत अन्धेरा हो रहा है। अपू, मेरे साथ चला चल न।

बच्चो के चले जाने के बाद सर्वजया ने तुलसी के नीचे दीया देकर गले मे आंचल डालकर प्रणाम करते हुए कहा : 'ठाकुरजी, यह तो तुम जानते हो कि उन्होंने दुश्मनी से नारियल नहीं लिया था। यह गाली उनको न लगे। दुहाई ठाकुरजी ! तुम उनकी उमर बडी करो, तुम उनका मंगल करो, तुम उनकी रक्षा करो, दुहाई ठाकुरजी···'

गाव के प्रसन्न पडित के घर पर एक वनिये की दूकान भी थी। दूकान की बगल में ही उनकी पाठशाला भी लगती थी। बेंत के अलावा पाठशाला मे शिक्षा देने के लिए कोई विशेष सामग्री नही थी। फिर भी इसी बेंत पर अभिभावको का विश्वास गुरुजी से रत्ती-भर कम नहीं था। इसलिए उन्होने गुरुजी को यह छूट दे रखी थी कि लड़कों को लंगडा और काना बना देने के अतिरिक्त बाकी वे अपनी मर्जी से बेंत का जितना चाहे, प्रयोग कर सकते हैं। गुरुजी भी शिक्षक के रूप मे अपनी कमी और साथ ही सामग्रियो की कमी की पूर्ति बेत से इस प्रकार लापरवाही के साथ करते थे कि छात्र लंगड़े और काने होने की दुर्घटना से वाल-वाल वचते रहते थे।

पूस के दिन थे। अपू रज़ाई ओढकर विस्तरे पर पड़े-पड़े धूप निकलने की प्रतीक्षा कर रहा था। इतने मे मां ने आकर पुकारा : 'अपू जल्दी उठ, आज तुझे पाठशाला जाना है। तेरे लिए कैसी-कैसी किताबें और स्लेट लाई गई है, देख। उठ मुह धो ले। वे तुझे अपने साथ पाठशाला मे कर आएगे।'

पाठशाला का नाम सुनकर अपू अभी-अभी नीद मे से जगी हुई आखों से मा के मुंह की ओर अविश्वास के साथ ताकने लगा। उसके मन मे यह धारणा थी कि जो लड़के बुरे होते है, मा की बात नही मानते, भाई-बहनो से लड़ते रहते हैं, केवल उन्हीको पाठशाला भेजा जाता है। वह तो ऐसा नही है, फिर उसे पाठशाला क्यो भेजा जाएगा ?

थोडी देर वाद सर्वजया फिर आकर वोली 'अपू, उठ, मुह धो ले, तेरे साथ लाई वांध दू, पाठशाला मे वैठे-वैठे खाना, उठ मेरे लाल।'

मा के जवाव मे उसने अविश्वास के साथ इतना ही कहा : 'इ।'

वाद को मा की तरफ ताककर जीभ निकाल और आखे मूदकर वह अजीव चेहरा वनाए रहा। उसने उठने के कोई लक्षण नही दिखाए, पर इतने मे पिताजी के आ जाने से अपू का हीला-हवाला



नही चला, उसे पाठशाला जाना पड़ा।

मां के प्रति अभिमान के मारे उसकी आखो से आसू आ रहे थे। खाना बाधकर देते समय वोला ' 'मैं कभी घर नही लौटने का कभी नही, देख लेना।'

—अरे राम-राम, कही ऐसा कहा जाता है कि घर नही आऊगा ?—बाद को उसकी ठुड्डी मे हाथ लगाकर चूमते हुए बोली: 'विद्वान बनो, बुद्धिमान बनो, तब देखोगे कि कितनी बडी नौकरी करते हो। तुम्हे डरने की जरूरत नही है। अजी सुनो, गुरुजी से कह देना कि अपू से कुछ न कहे।'

पाठशाला मे पहुचाकर हरिहर ने कहा ' 'छुट्टी होने पर मैं आकर तुझे घर ले जाऊगा। अपू, गुरुजी की बात मानना और शरारत न करना।'

थोडी देर बाद अपू ने पीछे घूमकर देखा कि पिताजी मोड पर गायब हो गए। अथाह समुन्दर का सामना था, वह बडी देर तक सिर नीचा किए बैठा रहा। बाद को उसने डरते-डरते सिर उठाया तो देखा कि गुरुजी दुकान की चबूतरी पर बैठकर तराजू से किसीको सेंधा नमक तोलकर दे रहे थे। कुछ बड़े लड़के अपनी-अपनी चटाइयो पर बैठकर तरह-तरह की आवाजें निकाल-निकालकर कुछ पढ रहे हैं ' और बड़े जोर से हाल-झूल रहे है। उससे भी छोटा एक लडका खम्भे से उढककर ध्यान से लिखनेवाले ताड के पत्ते को मुह मे डालकर चबा रहा था और एक बडा लडका जिसके गाल पर एक मसा था, दूकान की चबूतरी की ओर ध्यान से कुछ देख रहा था। उसके सामने दो लडके बैठे हुए स्लेट पर एक नक्शा बनाकर कुछ कर रहे थे। एक चुपके से कह रहा था : 'यह लो मैंने कदम बनाया,'—कहकर उसने स्लेट पर गुणा का चिह्न बना दिया और दूसरा लड़का कह रहा था . 'यह लो मैंने गोला बनाया'—कहकर गोलाई का चिह्न बना रहा था।

साथ ही दोनो कनखी से तौलने के काम मे व्यस्त गुरुजी को देख रहे थे। अपू अपनी स्लेट मे बडे-बडे हरफो मे हिज्जे लिख रहा था। यह कहा नही जा सकता कि कितनी देर बाद गुरुजी ने एकाएक

कहा 'अबे फणिया, तू स्लेट पर यह सब क्या बना रहा है ?'

सामने के उन दो लडको ने फौरन ही स्लेट ढक दी, पर गुरुजी की गिद्धदृष्टि से पार पाना बहुत मुश्किल था। उन्होने कहा : 'अरे सतवा, तू फणिया की स्लेट तो ला।'

उनकी बात अभी मुह से निकल नही पाई थी कि बडे मसे वाले लडके ने झपट्टा मारकर स्लेट ले ली और उसे दुकान की चबूतरी पर हाजिर कर दिया।

—अच्छा ? स्लेट पर यह सब हो रहा है ! अरे सतवा, दोनो को कान पकडकर इधर तो ले आ।

जिस तरह बडा लडका झपट्टा मारकर स्लेट ले गया और सामने के दो लडके मुसीबत के मारे डरते-डरते गुरुजी की तरफ जा रहे थे, उसे देखकर एकाएक अपू को बहुत हसी आई, वह खिलखिलाकर हस पडा। थोडी देर हसी रोककर फिर एक बार खिलखिलाकर हस पडा।

उधर गुरुजी बोले, 'हसता कौन है ? ए लडके, तू हसता क्यो है। क्या यह कोई नाट्यशाला है ? ऐं ? क्या यह कोई नाट्यशाला है ?'

अपू यह नही समझ पाया कि नाट्यशाला किसे कहते है, पर डर के मारे उसका मुंह सूख गया।

—सतवा, इमली के नीचे से एक बडी-सी ईंट ले आ। अच्छी-खासी बडी हो।

अपू डर के मारे सिकुड गया, उसका गला सूख गया, पर ईंट लाए जाने पर उसने देखा कि ईंट उसके लिए नही, बल्कि उन दोनो लडको के लिए लाई गई है। कम उम्र होने के कारण या नये-नये भरती होने के कारण गुरुजी ने इस बार उसे माफ कर दिया था।

पाठशाला शाम को लगा करती थी। कुल मिलाकर आठ-दस लड़के-लडकिया उसमे पढते थे। सभी अपने घर से छोटी-छोटी चटाइया लाकर बैठते थे, पर अपू के घर मे कोई चटाई नही थी, इसलिए वह एक पुराने कालीन का आसन ले आता था। जिस कमरे मे पाठशाला थी, वहा कही घेरा या दीवार नही थी। चारो तरफ खुला था।



लड़के कतार मे बैठते थे। पाठशाला के चारो तरफ जगल था और पीछे की तरफ गुरुजी के पिता के जमाने का बाग था। शाम की ताज़ी हवा, गरम धूप, खट्टा नीबू, जगली शरीफा और आम के नीचे घने हुए अमरूद के पेड़ पाठशाला के कमरे के बास के खम्भे की सांस से दिखाई पड रहे थे। पास मे कही किसी तरह की कोई बस्ती नही थी। केवल बाग और जगल, एक तरफ आने-जाने का एक पतला रास्ता था।

आठ-दस लडके-लडकियो मे सभी बहुत हाल-डोलकर तथा तरह-तरह की आवाज बनाकर पाठ घोख रहे थे। बीच-बीच मे गुरुजी की चीख सुनाई पड़ती थी 'अरे कँवला ! उसकी स्लेट की तरफ क्या देख रहा है ? कान उखाडकर हथेली पर रख दूगा। और नटुवा ! तू कितने दफे पोता भिगोएगा ? जो अब तू पोता भिगोने उठा, तो कचूमर निकाल दूगा।'

गुरुजी एक खम्भे से उढककर ताड की चटाई पर विराजमान रहते थे। उनके बालो के तेल के कारण बास के खम्भे का उढकने वाला हिस्सा तेलहा हो गया था। शाम के समय अक्सर गाव के दीनू पालित या राजू राय उनके साथ गपशप करने आते थे। अपू को पढने-लिखने के बनिस्बत यह गपशप कही अच्छी लगती थी। राजू राय यही सुनाया करते थे कि कैसे उन्होने जवानी के दिनो 'व्यापारे वसति लक्ष्मी' कहावत का अनुसरण करके अपाढू की हाट मे तम्बाकू की दूकान खोली थी। अपू आश्चर्य के साथ उनकी आपबीती सुना करता था। कैसे राजू राय छोटी-सी दूकान के आगे का पर्दा उठाकर तम्बाकू की कटिया कतरता था। फिर रात को नदी मे जाता था, छोटी हडिया मे मछली का रसा और भात पकाकर खाता था, शायद बीच-बीच मे उन लोगो का वह महाभारत या पिताजी वाली दाशूराय की पाचाली मिट्टी के दिए के सामने बैठकर पढा करता था, अपू यह सब कल्पना करता था। बाहर अन्धेरे में वर्षा के दिनो मे टपटप पानी पड रहा है, चारो तरफ सन्नाटा है, पिछवाडे के गड्ढे मे मेढक टरटरा रहा है, कितना सुन्दर है ? वह बडा होकर तम्बाकू की दूकान करेगा।

दुर्गा भाई को ढूढने के लिए निकली थी। मुहल्ले मे कई जगह

ढूढकर भी उसका सुराग नही मिला। अनन्दा राय के घर के पास आकर उसने सोचा—एक बार यहा चक्कर मार लू, चाचीजी के साथ भेट भी हो जाएगी।

पर राय महाशय के घर मे घुसी ही थी कि बडा शोर-गुल और बडे रोने-पीटने की आवाज उसके कानो मे आई, वह तब ठिठककर दरवाजे के पास ही खड़ी रही। आगन के एक तरफ खडी होकर अन्नदा राय की बडी बहिन सखी मालकिन चिल्लाकर मकान सिर पर उठा रही थी।

'इसके मन मे कुछ डर-भय थोडे ही है। मैंने बड़े-बड़े तीसमार खा देखे पर ऐसी कभी देखने मे नही आई। बलिहारी है कि यमराज की तरह पति है, नाराज होने पर हड्डी-पसली एक कर देता है; ऐसी हालत मे कुछ समझ-बूझकर चलना तो चाहिए था। सच तो है तीन दिन से कह रहा है कि धान को धूप दिखाओ, पर इसके कान पर जू तक नही रेंगी। जैसे कोई बेकार मे बक रहा हो। गृहस्थ घर की बहू है; धान कूटेगी, काम-धाम करेगी, सो तो नही, रात-दिन बन-ठनकर खत्रानी बनकर बैठी रहती है'—कहकर सखी मालकिन ने कही कहने मे कुछ कसर न रह जाए, इसलिए बन ठनकर खत्रानी बनकर बैठने के सम्बन्ध मे उनकी क्या धारणा है, यह अभिनय के द्वारा स्पष्ट कर दिया, फिर बोली 'ऐसा तो न कभी सुनने में आया और न देखने मे···'

बरामदे के अन्दर से अन्नदा राय की पतोहू नासिका के स्वर मे रोती हुई बोली 'मैं खत्रानी बनकर कब बैठी रहती हू? कल शाम को मैंने दो पसेरी मूग की दाल भूजी सो? दोपहर को खाकर ही उसमे जुट गई। जब पाच बजे की गाडी जाने की आवाज हो रही थी, तब भी मैं आग और बालू लेकर बैठी थी। दो टोकरी दाल भूजना, फिर उसे दलना, जब अधेरा हो गया, तभी निपट पाई। अग-अग पिरा रहा है, रात को यह तो हालत हुई कि मैंने समझा बुखार चढ गया। सो कोई इस तरफ देखता भी है? फिर सबेरे-सबेरे बिना किसी कसूर के यह मार पडी। कौन मैं बैठे-बैठे खाती हू?'

इतने में अन्नदा राय का लड़का गोकुल एक हाथ मे पत्ता समेत



हरे वास का अगला हिस्सा और दूसरे हाथ मे दा लेकर आया। पत्नी के रोने का अन्तिम अंश सुनकर वह गरजते हुए वोला : 'अभी तक तुम्हारा दिमाग दुरुस्त नही हुआ ? मालूम होता है कि तुम्हें और भी भोग भोगने हैं। सवेरे-सवेरे मुझे गुस्सा न दिलाओ। आज तीन दिन से धान को धूप मे डालने के लिए कहता आ रहा हू। वादल-बूदी के ढग हैं, कही धान विगड गए, तो तुम्हारा कौन-सा वाप आकर उन्हें वचा लेगा ? फिर सारे साल क्या धूल फाकेगी ?'

गोकुल की स्त्री एकाएक रोना-कलपना वद करके तेज़ी के साथ वोली 'मैं कहे देती हू, तुम मेरे वाप तक न जाओ मेरे वाप ने तुम्हारा क्या विगाडा है ? जव-तव तुम उनको क्यो घसीटा करते हो ?'...

उसकी वात खतम भी नही होने पाई थी कि गोकुल वास छोडकर दो हाथ मे लिए हुए एक छलाग मे वरामदे की सीढियो को पार करते हुए वोला : 'तो तू नही मानेगी ? तू ही रहेगी या मैं ही रहूगा। आज तेरे मायके के सारे दुलार निकालकर मैं दम लूगा।'

घर मे खून-खच्चर हुआ जा रहा है, देखकर घर का हलवाहा आगन से वोला. 'भैयाजी, क्या करते हो, हा हा, रुको, रुको'—कहकर वरामदे में चढ आया, दुर्गा भी दौड पडी, इधर से सखी मालकिन भी वरामदे मे आई और वड़ा शोर-गुल मचा। वरामदे के वीच में गोकुल की पत्नी पति के उद्यत आक्रमण के सामने पीछे हटकर वार वचाने के लिए दोनो हाथ उठाकर दीवार से सटी हुई सिकुडी खडी थी। उसकी आखो मे भय झलक रहा था। हलवाहे ने पहले ही गोकुल के हाथ से दा ले लिया, फिर उसे पकड़कर वरामदे से ले जाते हुए वोला : 'भैयाजी, तुम करते क्या हो ? रुको, रुको, उतर आओ...'

गोकुल की उम्र तीस-पैंतीस से कम नही थी, पर शरीर ने वह तगड़ा नही था। हलवाहे के साथ वह मलेरिया पीडित शरीर लेकर हाथापाई करे, तो उसकी कमजोरी और भी खुल जाए, यह समझकर उसने कहा 'देखो न पूरा एक नाद धान है, सो भी वीज का। जो कही पानी पाकर अखुवा निकल आए, तो फिर वह वोने के काम थोडे ही आ सकता है ! आज तीन दिन से वरावर कह रहा हू, काम तो किया

नही उल्टे सीनाजोरी करती है। जो मैंने तुम्हारी सारी सिट्टी-पिट्टी नही भुला दी…'

दुर्गा का दम मे दम आया। पर इस समय चाचीजी के साथ वत-कही करने का मौका नही है, यह समझकर वह लगभग चोर की तरह अन्नदा राय के घर से निकल गई।

पाचू बनर्जी के घर के पास जामुन के नीचे एक आदमी लोटा-कटोरी की मरम्मत कर रहा था। लकड़ी के कोयले की आग धौंकनी से गनगना रही थी। मुहल्ले-भर की टूटी-फूटी कटोरिया जमा थी। ठिगना और गठीला आदमी था, उम्र का पता लगाना टेढी खीर थी। तीस का भी हो सकता था, पचास का भी। गले मे तीन लडवाली तुलसी की कठी बाघ रखी थी। चेहरे के दाहिने तरफ एक कटा दाग था। हाथ के पहुचे के पास की नसें रस्सी की तरह तनी थी, एक अधमैली धोती पहिन रखी थी। मुहल्ले के बहुत-से लड़के-बच्चे उसे घेरकर वर्तन मरम्मत का तमाशा देख रहे थे। दुर्गा भी भीड मे शामिल हो गई।

वह आदमी बोला : 'मुन्नी क्या चाहिए ?'

वह बोली : 'कुछ नही, वस देख रही हू।'

घर लौटकर उसने मा से कहा : 'आज गोकुल चाचा ने चाची को ऐसा मारा कि क्या कहू, क्या कहूं।'

बाद को उसने पूरा किस्सा सुनाया।

सर्वजया बोली : 'आखिर गवार किशान ही ठहरा। अच्छी-भली लड़की है, ऐसे के पाले और ऐसे घर मे पडी कि मार खाते-खाते जिन्दगी बीत रही है।'

—मुझे वहुत चाहती है। घर मे जब जो कुछ बनता है, मेरे लिए अलग रख देती है। चाचीजी का रोना सुनकर बहुत तकलीफ हुई। उधर सखी दादी उलटे चाचीजी को ही…

वह तीन-चार दिनो तक जामुन के नीचे वर्तन मरम्मत देखने गई। उस आदमी ने उसका घर, पिता का नाम, सारे ब्योरे पूछ लिए। बोला : 'तुम्हे कुछ मरम्मत नही कराना है ? मुन्नी जाओ न, ले आओ।'

दुर्गा घर आकर मा से बोली . 'हमारे यहा के टूटे लोटे, गडुओ



को देना नही है ? एक बहुत भला आदमी आया है, उस मुहल्ले के रास्ते मे जामुन के नीचे वैठा है।'

वह अपना नाम पीतम वताता था। शायद जाति का ठठेरा है। धौंकनी चलाते-चलाते वह कभी-कभी सीधा वैठ जाता है और चिल्लाकर कहता है : 'जय राधे ! राधे गोविन्द !'

सवेरे उसके पास मुहल्ले के बहुत-से लोग आते थे। वह वरावर मड़ई से आग निकालकर आए हुए शरीफ लोगो को तमाखू पेश करता था और ऐसा करते समय चेहरे को चिरौरी-भरा वना लेता था और एक तरफ के कन्धे को जरा झुकाकर कहता था : 'हें-हें महाशय जी, तम्वाकू का शौक फर्माइए। राधारानी के चरणो की कृपा है।'

फिर कहानी जारी रखते हुए कहता था : नारियल की वात हो रही थी न ? सो न कहिए भैया जी। परसाल जेठ मे कुछ नई पौधें लगाईं। आधे कट्ठे जमीन पर छ गडे पौधें खरीदकर लगाईं, पर मेढको के मारे जड-मूल तक गायव हो गया। सारा पैसा वरवाद हो गया, हाथ कुछ नही लगा।'

मुकर्जी महाशय सवेरे से इस फिराक मे वैठे हुए थे कि किसी तरह मीठी वातो मे लगातार पीतल के एक घडे की मुफ्त मे मरम्मत करा लें। तमाखू पीते-पीते पहले की वात चलाते हुए वोले : 'तो यह तो रहा मामला। अव की वार भी सोचा था कि वीसेक पौधें घर के पीछे लगाएगे, पर मलेरिया ने ऐसा पकडा कि वस रह गए। अच्छा मिस्त्री, यह तो वताओ कि तुम्हारे तरफ क्या हाल है ?'

वे आज सवेरे से उसे मिस्त्री-मिस्त्री कह रहे थे।

—अजी कुछ न पूछिए, सोलहो कला पूर्ण हैं। मलेरिया क्या है, पूरा सत्यानाशी है। लीजिए, आपका घड़ा, छ पैसे दे दीजिए।

मुकर्जी महाशय घड़ा लेकर खडे होते हुए वोले : 'लो इतने-से काम के लिए पैसे, व्राह्मण का एक उपकार किया सो भी कातिक का महीना है। उसके लिए फिर…?'

पीतम जल्दी से मुकर्जी महाशय के घड़े को पकड़ते हुए बहुत हसमुख ढग से वोला : 'जी नही, वावा माफ कीजिए। मुफ्त मे मरम्मत नही होगी। अभी सवेरे का पहर है, वोहनी तक नही हुई। जी हा

—मुझसे नही होगा —घडा रख जाइए, घर जाकर पैसे भेज दीजिएगा।'

दुर्गा की मा ने दुर्गा से पूछा : 'जरा, पूछना ये लोग टूटे वर्तन लेकर नये वर्तन देते हैं···'

पीतम राजी था । दुर्गा घर से कई पुराने गडुए लोटे कटोरिया घडे उसके पास ले गई । वह आधा दिन जामुन के नीचे ही विताती थी और धौंकनी चलाना, रागा लगाना देखा करती थी । पीतम ने उसे कह रखा था कि मैं तुम्हारे लिए एक पीतल की अगूठी वना दूगा, और यह भी कहा था कि मरम्मत के पैसे नही लगेंगे ।

सर्वजया सुनकर वोली 'यह आदमी तो भला है । अगले वुध को अपू के जन्मवार मे उसे कहना कि यहा आकर थोड़ा प्रसाद पा जाए···'

वुववार को सवेरे उठकर दुर्गा जामुन के नीचे पहुची तो देखा कि वहा वह आदमी नही था । पूछने पर मालूम हुआ कि पिछले दिन सन्ध्या समय वह दूकान उठाकर चला गया है । भट्ठी का गढा और जले हुए कोयलो की राशि के अलावा, वहा कुछ भी नही था । दुर्गा ने इधर-उधर तलाश की, इससे-उससे पूछा, पर किसीको भी मालूम नही था कि वह कहा था । डर के मारे दुर्गा का कलेजा मुह को आ गया । सुनने पर मा क्या कहेगी । गृहस्थी के आधे वर्तन तो मिस्त्री के पास थे । उसने दुर्गा से कहा था कि झीकरहाटी के वाजार मे उसके भाई की ठठेरी की दूकान है, वहा खवर भेजी गई है और दो-एक दिन मे वह नये वर्तन लेकर आने ही वाला है । फिर तो पुराने वर्तन वदल दिए जाएगे । पर कहा वह और कहा उसका भाई । वहुत खोजने पर भी दुर्गा को उसका पता नही लगा । मजे की वात यह थी कि केवल उन्हीके वर्तन गए थे, वाकी होशियार लोगो का पीतल का एक भी टुकडा नही खोया था ।

दिन-भर के वाद सन्ध्या समय दुर्गा ने रुआसी होकर मा को सारी वात वतलाई । हरिहर परदेश मे था, इसलिए कोई खोज-खवर लेने वाला भी वही था । सुनकर सर्वजया को एक वार काठ मार गया । वोली . 'अपने राय ताऊ से जाकर जरा कह तो दे । ऐसी अनहोनी वात तो कभी सुनी नही गई ।'



जब हरिहर घर लौटा, तो झीकरहाटी के बाजार मे खोज की गई, पर वहा पीतम नाम के किसी आदमी की वर्तनो की दूकान नही थी, और न उस हुलिए का कोई आदमी ही वहा था।

८

अबकी बार घर से जाते समय हरिहर लडके को साथ ले गया। बोला: 'घर मे इसे कुछ खाने को नही मिलता, बाहर फिर भी दूध, घी कुछ न कुछ मिलेगा और इसकी तन्दुरुस्ती सम्हलेगी।'

अपू को पहली बार गाव के बाहर पैर रखने का मौका मिला। कई दिनो से उत्साह के मारे उसकी नीद हराम हो रही थी। अन्त मे दिन गिनते-गिनते चलने का दिन आ ही गया।

उनके गाव की सडक घूमकर नवाबगज की सडक को दाहिनी तरफ छोडकर मैदान के बाहर अषाढू दुर्गापुर की कच्ची सडक के साथ मिल गई है। दुर्गापुर की सडक पर पहुचकर उसने पिता से कहा: पिताजी, रेल की सडक कौन-सी है?'

उसका पिता बोला. चलते चलो, अभी सामने ही पडेगी। हम लोग रेल की पटरी पार करके ही चलेंगे...'

कुछ दूर जाकर उसने आश्चर्य के साथ देखा कि नवाबगज की पक्की सडक की तरह एक ऊचा रास्ता मैदान को बीच से चीरकर बहुत दूर निकल गया है, उसके किनारे पर लाल गिट्टियो के ऊचे ढेर लगे हुए थे।

सफेद लोहे की खूटियो पर जैसे एकसाथ बहुत-सी रस्सिया लगातार तनकर बधी हुई थीं। जितनी दूर तक नजर जाती थी, वे सफेद खूटिया और तनी हुई रस्सिया दिखलाई पड़ रही थीं।

उसके पिता ने कहा. 'मुन्ना देखो, वह रही रेल की सडक...'

अपू एक छलाग मे फाटक पार होकर पटरी पर पहुच गया। बाद को वह रेल की पटरी के दोनो तरफ विस्मय के साथ देखने लगा। ये दो लोहे बराबर दूरी पर क्यो बिछे थे? क्या इनपर से होकर रेलगाडी जाती है? क्यो? और गाडियो की तरह मिट्टी पर

न जाकर लोहे पर से क्यो जाती है ? फिसल नही जाती ? क्या ऊपर जो रस्सिया मालूम पड़ रही थी, उन्हीको तार कहते हैं ? उनमे सन्-सन् क्या आवाज़ आ रही है ? क्या तारो से खबर जा रही है ? कौन खबर देने वाला है ? खबर कैसे दी जाती है ? क्या उधर स्टेशन है ? क्या इधर भी कोई स्टेशन है ?

उसने कहा : 'पिताजी, रेलगाडी कब आएगी ? मैं रेलगाडी देखूगा···'

—इस समय रेलगाडी कैसे देखोगे ? दोपहर के समय रेलगाडी आएगी । अभी दो घटे की देर है ।

—सो हो । मैं देखकर ही जाऊगा । पिताजी मैंने कभी रेलगाडी देखी नही ।

—ऐसा नही करते । इसलिए मैं तुम्हे ले आना नही चाहता था । इस समय रेल कैसे देख सकते हो ? एक बजे तक बैठकर इस भयकर धूप मे कौन झीकेगा ? चलो, लौटते समय दिखा दूगा ।

अन्त मे अपू को आसू भरी-आखो से पिता के पीछे-पीछे चलना पडा ।

आमडूबा, किसानो का एक छोटा-सा गाव । नाम कितना मीठा-सा है । स्त्रिया आगन मे कुट्टी काट रही है, बकरिया बाध रही हैं, मुर्गियो को भात खिला रही हैं । खुशहाल लोग पटसन सुखा रहे हैं, बास काट रहे है···देखते-देखते गाव पीछे छूट गया, और बाहरवाला मैदान सामने आ गया । गढे मे पानी हिलोरें ले रहा है । उडिधान के खेत मे बगले बैठे थे । पुरइन के पत्ते और उसके खिलते हुए फूलो के मारे पानी दिखाई नही देता था ।

खलसेमारी के तालाब के किनारे पर घने हरे सावनी धानो के खेतो के ऊपर का वर्षा से धोया हुआ भादो का आकाश नीला होकर फैला हुआ है । सारे दिगन्त में सूर्यास्त की अद्भुत छटा बिखरी हुई है । विचित्र रगो के बादलो के पहाड, बादलो से बने हुए द्वीप, बादलो का ही समन्दर, एक शब्द मे बादलो की स्वप्नपुरी—खुले आकाश के साथ इतने दिनो तक उसे ऐसा घनिष्ठ परिचय प्राप्त करने का मौका नही मिला था । इस आठ वर्ष के लडके के सामने मैदान के उस पार के दूर देश ने अपने रहस्य का घूघट उतारकर रख दिया ।



चलते-चलते काफी देर हो गई। पिता से कहा · 'तू मुंह वाए क्यो चलता है ? जो चीज भी सामने आती है, उसे देखकर मुह क्यो वाता रहता है ? चल जल्दी चल।'

सन्ध्या के वाद वे अपने ठिकाने पहुंचे। शिष्य का नाम लछमन महाजन था, वह अच्छा-भला किसान और खुशहाल गृहस्थ था। वाहर के छप्परदार वडे कमरे मे वडी आवभगत के साथ वाप-वेटे को टिकाया गया।

लछमन महाजन के छोटे भाई की स्त्री सवेरे-सवेरे पोखर घाट पर आई थी। पानी में उतरते समय उसने पोखर के किनारे नजर डालते हुए देखा कि केले के वाग मे एक अपरिचित छोटा लडका एक खपच्ची हाथ में लेकर वाग मे इधर से उधर चहलकदमी कर रहा है और पागल की तरह मन ही मन वडवडा रहा है। वह घडा उतारकर पास आई और वोली 'वेटा, तुम किसके यहा आए हो ?'

अपू मां के पास ही शेर बना रहता था, वाहर वह वहुत ही झेंपू था।

पहले अपू ने सोचा कि वह यहा से रफूचक्कर हो जाए, वाद को कुछ लजाकर वोला : 'उनके यहां आए हैं···

वहू ने पूछा : 'जेठजी के घर पर ? क्या तुम जेठ जी के गुरुजी के लड़के हो ? अच्छा !'

वहू उसे अपने साथ अपने घर ले गई। उनका घर अलग था। लछमन महाजन के घर से कुछ दूर, वीच में पोखर पडता है।

वहू के व्यवहार से अपू का सकोच जाता रहा। वह कमरे के अन्दर घुसकर घर की चीजो को कौतूहल के साथ घूर-घूरकर देखने लगा। ओह ! कितनी चीजें हैं ! उसके घर पर तो इस प्रकार की चीजें नही हैं। अच्छा तो ये लोग वहुत वडे आदमी हैं। कौडियो की अरगनी, रग-विरगे लटकते हुए छींके, ऊन की वनी हुई चिड़िया, काच की गुडिया, मिट्टी के खिलौने, शोला के पेड और जाने क्या-क्या। उसने दो-एक चीजों को डरते-डरते हाथ से उठाकर देखा।

वहू से अभी तक लड़के के चेहरे की ओर ध्यान से नही देखा था, जव उसने उसे पास से देखा, तो मालूम हुआ कि यह भी विलकुल

चा है, चेहरा पांच साल के लड़के की तरह कोमल है। ऐसी सुन्दर ल चितवन उसने और किसी लडके की आंखों में नही देखी थी। रंग, ऐमी वनावट, ऐसा मुखड़ा, मानो कूची से वनाई हुई ो-वड़ी निष्पाप आखें। अपरिचित लडके पर वहू के मन में मधुर ाता जगी।

अपू वैठकर तरह-तरह की वतकही करने लगा, थोड़ी देर वाद ने मोहनभोग वनाकर उसे खाने के लिए दिया। एक कटोरी में -सा मोहनभोग, इतना घी पडा था कि उगली घी से तर हो गई। जरा-सा मुह मे डालकर दग रह गया। ऐसी अपूर्व वस्तु तो उसने से पहले कभी नही खाई थी। मोहनभोग मे किसमिस क्यो पड़ी ? उसकी मा के बनाए हुए मोहनभोग में कभी किसमिस तो पडी ो होती थी। घर मे वह जव-तव मचलकर मां से कहता था . आज मोहनभोग !'

उसकी मा हंसकर कहती थी : 'अच्छा उस जून तैयार कर दूगी। वाद को वह सूजी पानी में उवालकर जरा गुड मिलाकर पुल्टिश तरह एक चीज तैयार करके कासे की फूलदार तश्तरी मे सामने देती थी। अपू उसीको इतने दिनो से खुशी के साथ खाता आया । मोहनभोग ऐसा होता है, इसका तो उसे स्वप्न में भी ख्याल नही । पर आज उसे मालूम हुआ कि इस मोहनभोग मे और मां के हनभोग मे जमीन-आसमान का अन्तर है!...साथ ही साथ मा पर णा और सहानुभूति से उसका दिल पसीज गया। शायद मा वेचारी नती ही नही कि इस तरह का मोहनभोग होता है उसे अस्पष्ट से कुछ ऐसा झलक गया कि उसकी मां गरीव है, वे गरीव हैं, ीलिए उनके घर का ढंग का खाना-पीना नही होता।

एक दिन मुहल्ले के व्राह्मण पडोसी के घर अपू को न्यौता मिला। हर के समय उस घर की एक लडकी आकर अपू को वुला ले गई। ोईघर के वरामदे मे वहुत प्रेमपूर्वक पानी छिड़ककर, पीढ़ा डालकर ू को खाने के लिए विठाया गया। जो लड़की अपू को वुलाने गई , उसका नाम अमला था; खुलता हुआ गोरा रग था, वड़ी-वडी खें, मुखडा सुन्दर और उम्र मे वह दीदी की तरह थी। अमला

की मा ने पास बैठाकर उसे खिलाया। अपने हाथ की बनाई हुई चन्द्रपूली[1] दी। खाने के बाद अमला उसे साथ मे लेकर डेरे पर पहुचाने गई। उसी दिन शाम को खेलते समय एकाएक अपू के पैर की एक उगली बाग के घेरे के दो बासो के बीच मे फस गई। ताजे चिरे हुए नये बासो का घेरा था। उगली कटकर लहू-लुहान हो गया। जो अमला दौडकर पैर को बास के बीच से निकाल न लेती तो पूरी उगली ही कट जाती। अपू से चला नही जा रहा था, इसलिए अमला उसे गोद मे उठाकर खलिहान के पास से पत्थर कूची का पत्ता लेकर बाट-कर उसे उगली मे बाध दिया। कही पिता से डाट न पडे, इस भय से अपू ने किसीसे यह बात नही बताई।

उस रात को अपू को बार-बार अमला स्वप्न मे दिखाई पडी : वह अमला की गोद मे घूम रहा है, अमला के पास बैठा है, अमला के साथ खेल रहा है, अमला उसके पैर मे पट्टी बाध रही है, वह और अमला रेल की पटरी मे दौड लगा रहे हैं। अमला का हसमुख चेहरा सारी रात नीद मे उसीके पास बना रहा। सवेरे वह अमला की राह देखने लगा। पर सब लडके-लडकिया आए, खेल शुरू हुआ, दिन भी कुछ चढ गया, पर अमला दिखाई नही पडी। घर के भीतर से बहू ने उसे खाने के लिए बुला भेजा, रोज सवेरे-शाम वह अपने हाथ से खाना तैयार करके उसे खिलाती थी। खाना खतम होने पर उसने बहू से पूछा . 'क्या सवेरे अमला दीदी आई थी ?'

नही वह नही आई थी। धीरे धीरे दिन और चढने पर खेल भी खतम हो गया। उसके पिता ने उसे नहाने के लिए बुलाया, पर अमला कहा ? उसका मन अभिमान से भर गया—अच्छा न आई तो न सही। अमला के साथ वह हमेशा के लिए कुट्टी कर देगा। और जो कभी उसने उससे बात की।

शाम को भी खेल शुरू हुआ और सभी आए, पर अमला नही आई। पाच-छ लडके-लडकिया खेलने के लिए आए थे, पर अपू को ऐसा लगा कि वह खेले तो किसके साथ खेले। उसे कोई भी खेल के लिए

---

१ चावल और खीर की एक तरह की मिठाई।

उपयुक्त साथी नही मालूम हुआ। वह निरुत्साह होकर कुछ देर खेलता रहा, फिर भी अमला नही आई।

अगले दिन सवेरे अमला आई। अपू कुछ नही बोला। अपू उसकी परछाईं के पास भी नही फटका। फिर भी बीच-बीच मे कनखी से देख लेता था कि अमला यह समझी है या नही, कि ऐसा वह नाराज़ होकर कर रहा है। अमला पहले-पहल सचमुच नहीं समझी, पर जब वह समझी कि दाल मे कुछ काला है, तो वह पास जाकर बोली: 'क्यो भाई तुम बोलते क्यो नही, बात क्या है ?'

अपू इतने दाव पेंच नही समझता था। उसने अभिमान से मुंह फुलाकर कहा: 'हुआ क्या ? कुछ हुआ थोड़े ही, कल आई क्यों नही ?'

अमला अवाक् होकर बोली 'नही आई तो क्या ? क्या इसलिए नाराज़ हो गए ?'

अपू ने सिर हिलाया: 'हा, बिलकुल यही बात है।' अमला खिलखिलाकर अपू का हाथ पकड़कर उसे मकान के अन्दर ले गई। वहा बहू सारी बात सुनकर पहले तो हसकर लोट-पोट हो गई, फिर मुस्कराती हुई बोली: "तो अमला, अब तुम घर नही जा सकती। मजबूरी है, जब मुन्ना तुम्हे छोड नही सकता, तो तुम यहीं रह जाओगी और नही तो · '

बहू की बातचीत के ढग से अमला ने कुछ-कुछ समझकर लज्जा के साथ प्रतिवाद करती हुई बोली: 'जो तुमने ऐसा किया तो फिर तुम्हारे घर पर···'

थोडी देर बाद अपू अमला के साथ उसके घर गया। अमला ने अलमारी खोलकर उसे काच की बड़ी मेम गुडिया, मोम की चिडिया, पेड आदि दिखाए। ये शायद कालीगंज के नहान के मेले से खरीदे गए थे, अपू को ऐसा बताया गया। नई-नई गुडियां, एक रबर का बन्दर, वह ऐसा कि जिधर भी ताको वह तुम्हारी तरफ आखें मारेगा। एक जाने किस चीज़ की गुडिया, जिसका पेट दबाने पर एकाएक मिरगी के बीमार की तरह हाथ-पैर फेंककर करताल बजाती है। सबसे आश्चर्य की वस्तु थी, एक टीन का घोड़ा। रानी दीदी के चाचा अपने घर की घडी मे जैसे चाभी भरते है, उसी तरह उसमें

चाभी भरने पर वह खटपट करके फर्श पर चलने लगता है, मानो सचमुच का घोडा हो।

इसे देखकर अपू दग रह गया। उमे हाथ मे लेकर आश्चर्य के साथ उलट-पलटकर देखने के वाद अमला से वोला 'यह कैसा घोडा है ? वहुत वढिया है ! यह कहा से खरीदा गया ? इसका दाम क्या है ?'

इसके वाद अमला ने उसे एक सेंदूर की डिविया दिखाई, जिसमे लाल रग की छोटी-सी चमकीली पन्नो-सी कुछ थी। अपू ने पूछा . 'यह क्या है ? क्या यह रागा है ?'

अमला हसकर वोली . 'रागा क्यो होने लगा। तुमने मोने का वर्क नही देखा।'

अपू ने सोने का वर्क नही देखा था। क्या सोने का रग इतना लाल होता है ? उमने हिला-डुलाकर सोने का वर्क अच्छी तरह देखा। अमला के साथ घर लौटते-लौटते उमके मन मे यह वात आई कि हाय मेरी वहना के पास यह सव कुछ नही है। वह तो जगली फलियो और वीजो को वटोरकर ही भरती रहती है और दूसरो की गुडिया चुराकर मार खाती है। उसकी वहन की उम्र की लडकियो के पास कितने प्रकार के खिलौने होते हैं, यह उसे अव तक मालूम नही था। जो आज उमे तुलना करने का मौका मिला, तो दीदी के प्रति करुणा से उसका मन पसीज गया। जो उसके पास पैसा होता, तो वह दीदी को पेंचवाला एक घोडा खरीद देता, और हा रवर का एक वन्दर, जो तुम जिम भी तरफ जाओ, उधर आखें मारता।

सन्ध्या के वाद वहू के यहा अपू का न्योता था। जो खाने वैठा तो इतनी चीजें और तैयारिया देखीं कि उसे वडा आश्चर्य हुआ। एक छोटी फूलदार तश्तरी मे अलग से नमक और नीवू क्यो रखा है ? मा तो थाली मे ही नमक और नीवू दे देती है। फिर हर तरकारी के लिए अलग-अलग कटोरिया है, तरकारिया भी कितनी हैं ? वडे मेल के झीगे का पूरा सिर. क्या अकेले उसके लिए है ? वडी अजीव वात है !

लूची ! लूची ! उसकी और उसकी दीदी की स्वप्नपुरी की वात

मन मे धीरे से कौंद जाती है । न जाने कितनी रातें और कितने दिन ज़मीकन्द की डठल की चडचड़ी[1] और लौकी के छौंका से ही भात खाना पडता था । कई बार सवेरे और शाम के समय कलेवा के बिना ही गुज़र करनी पड़ती थी । ऐसे दिनो मे मन एकाएक लुब्ध और उदास होकर उन स्थानो मे दौड़ जाता था, जहा दोपहर की चिल-चिलाती धूप मे उसके गाव का मशहूर रसोइया बीरूराय कधे पर अगोछा रखकर इधर से उधर घूमता रहता है । अभी-अभी बने हुए बड़े चूल्हो पर कडाहो में घी कडकडाता रहता है । लूची बनाने की अपूर्व मनोरम सुगध आती है । कितने ही लडके और लडकिया अच्छे कपडे पहने हुए इधर से उधर आते-जाते रहते हैं । गागुली घराने की बड़ी नाट्यशाला और जैतून पेड के नीचे गर्मियो के दिन मे बड़ी-सी दरी बिछाई जाती है । साल मे केवल एक दिन उसे उस काल्पनिक देश मे जाने का मौका लगता है । वह दिन है बैसाख की रामनवमी के झूले का दिन । उस दिन गागुली बाडी मे उनका न्यौता रहता है । पर आज बिलकुल ही अप्रत्याशित ढंग से वह शुभ दिन कैसे टपक पड़ा । खाते समय उसे बार-बार याद आ रहा था कि हाय उसकी दीदी को कभी इस प्रकार का खाना नही मिलता ।

अगले दिन सवेरे फिर खेल शुरू हुआ । अमला के आते ही अपू ने दौडकर उसका हाथ पकडकर कहा : 'मैं और अमला दीदी एक तरफ और तुम लोग सब दूसरी तरफ !'

थोडी देर खेलने के बाद अपू को ऐसा लगा कि अमला उसके बजाय बीशू को अपना गुइया बनाना पसद करेगी । इसका असली कारण अपू को मालूम नही था । अपू नया खिलाडी था । उसका गुइया बनना माने हारना था । पर बीशू नटखट तगडा लडका था, उसे छकाना या हराना टेढी खीर था । एक बार अमला ने साफ-साफ अपनी झुझलाहट दिखलाई । अपू भरसक प्रयत्न करने लगा । कि वह जीते और अमला खुश हो, पर बहुत प्रयत्न करने पर भी वह फिसड्डी साबित हुआ ।

---

१. एक प्रकार की तरकारी जिसमें हर चीज पड़ती है ।

जब अगली बार गुइयाबन्दी हुई, तो अमला बीशू की ओर झुकी।

अपू की आखो मे आसू भर आए। उसके लिए एकाएक खेल का सारा रस जाता रहा। अमला बीशू की ओर देखकर सारी बातें कह रही है, हसती है तो भी उसीके साथ। थोडी देर बाद जब बीशू काम से घर जाने लगा तो अमला ने उसे बार-बार कहा कि तुम फिर लौट आओ। अपू के मन मे बडी ईर्ष्या हुई। सारा सवेरा एकदम खाली मालूम होने लगा। उसके बाद उसने मन ही मन सोचा कि बीशू के जाने पर खिलाडी कम हो जाएगे, इसलिए अमला दीदी ऐसा कह रही है। मेरे जाने पर भी ऐसा ही कहेगी। इससे अधिक कहेगी। एकाएक उसने जाने का स्वाग रचते हुए कहा 'देर हो गई है, चलू नहाना है।'

पर अमला कुछ नही बोली तो लुहार के लडके गोपाल ने कहा . 'फिर उस जून आना भाई !'

अपू ने थोडी दूर जाकर एकबार मुडकर देखा, तो उसे दिखाई पडा कि उसके चले आने से कोई फर्क नही पडा है। खेल बाकायदा पूरी तेजी से चल रहा है। अमला बडे उत्साह के साथ खभे के पास दैया बनकर खडी थी, उसकी तरफ देख भी नही रही थी।

अपू को बडी ठेस लगी, और घर आकर उसने किसीसे बात नही की।

—बडी अमला दीदी बनी फिरती है। मुझे वह न चाहे न सही, इससे क्या आता-जाता है ?

दो दिन बाद हरिहर लड़के को लेकर घर लौटा। कुछ ही दिन तो हुए थे, पर इसी बीच मे सर्वजया के लिए लडके को बिना देखे रहना दूभर हो गया था। दुर्गा का खेल भी कई दिनो से अच्छी तरह नही जमा था। अपू के प्रवास के कुछ दिन पहले पेठे के छिलके की नाव लेकर दोनो मे झगडा होने के कारण दोनो मे मुह फेरा-फेरी हो गई थी। अब पेठे की बहुत-सी तूबिया जमा हो गई थी, पर दुर्गा अब उन्हे लेकर पानी मे तैराने के लिए नही जाती।

क्यो मैंने छोटी-सी बात पर झगडा मोल लेकर उसके कान खीच दिए ? अच्छा वह लौट आए, तब उसके साथ कभी नही लडूगी,

वही सव तू विया ले ले तो क्या है।

घर लौटकर अपू पन्द्रहेक दिनो तक अ रनी सैर-सपाटे की अद्‌भुत कहागी कहता फिरता रहा। इस थोडे-से दिनो मे उसने कितनी ही आश्चर्य-भरी चीजें देखी ! रेल की पटरी देखी जिसपर से होकर सचमुच की रेलगाडी जाती है। मिट्टी के शरीफे, पपीते, खीरे देखे, जो हूवहू असली फल मालूस होते थे। और वह गुड़िया जिसके पेट दवाते ही मिरगी रोगी की तरह हाथ-पैर फेंककर एकाएक थपोडी वजाना शुरू करती है।

९

गाव के अन्नदाराय महाशय इस समय वड़ी मुसीवत मे फसे है।

गाव की फिर से पैमाइश हो रही है। उत्तर के मैदान मे तम्बू लगा है। पैमाइश के वडे अधिकारी ने मैदान मे नदी के किनारे दफ्तर खोला है और उनके साथ वहुत से छोटे-मोटे अमले भी आए हैं। गाव के सभी भले आदमी कुछ न कुछ जमीन के मालिक हैं। वे वाप-दादो की कमाई हुई सम्पत्ति के किनारे पर अपने-अपने जीवन की नौका को भिडाकर और उसे कसकर खूट से बाधकर जड पदार्थ की तरह निरुद्यम, गतिहीन और निष्क्रिय वने रहकर एक तरह से अच्छा ही काट रहे थे, पर अव की वार वे कुछ मुसीवत मे फस गए हैं। कोई किसी की जमीन दवाकर चैन की बसी बजा रहा है; कोई तो लगान दस वीघे का देता है, पर बारह बीघे पर कब्जा जमाए बैठा है।

इतने दिनो तक यह सब वहुत मजे मे चल रहा था, इतने मे यह भामई आ गई। यो तो सभी पर कुछ न कुछ गाज गिर रही थी, पर अन्नदा-राय को मुसीवत जरा दूसरे ढग की थी, या यो कहना चाहिए कि सवसे विकट थी। उनके रिश्ते का एक भाई बहुत दिनो से पछाह मे है। वे इतने दिनो से अपने प्रवासी रिश्तेदार के आम-कटहल के वाग तथा जमीन विना किसी तरछुए के भोग रहे थे और उन्हे पूरा भरोसा था कि पैमाइश का कठिन समय अगर वे निकाल ले गए, तो सारी जमीन और वाग नही तो कुछ तो वह अपने नाम से लिखा ही लेंगे,

पर पता नही, गाव के किसी आदमी ने उस प्रवासी रिश्तेदार को कोई पत्र डाल दिया था या और कोई बात हो गई, नतीजा यह हुआ कि दस दिन से उस रिश्ते मे लगने वाले भाई का बडा लडका पैमाइश की देख-भाल करने आया था ।

मुह का कौर तो छिन ही गया इसके अलावा लेने के देने पड गए । उस रिश्तेदार के हिस्से मे जो कमरे थे, वे ही मकान मे सबसे अच्छे थे । अन्नदाराय विगत बीस साल से उनपर अधिकार जमाए हुए थे । अब भतीजे के आने से उन्हे वे कमरे छोड देने पडे थे ।

भतीजा शौकीन तबियत का कालेज का छात्र था । वह एक मे सोता है, तो दूसरे मे पढता-लिखता है, इसलिए ऊपर के कमरे मे लोहे की सन्दूक, गिरवी मे जमा माल, कागजात आदि हटा डालने पडे है । नीचे वाले जिस कमरे मे कालिज के मुहल्ले से सस्ते दामो पर खरीदे हुए शहतीर रखे हुए थे, उस कमरे को भी खाली कर देना है ।

शाम का समय था । अन्नदाराय के चौपाल मे मुहल्ले के कई आदमी बैठे हुए थे । यही ताश और पासे की मजलिस जमती है, पर आज अभी काम खतम नही हुआ था । अन्नदाराय आए हुए असामियो को एक-एक करके निवटा रहे थे ।

आगन के सामनेवाले हिस्से मे एक कम उम्र किसान स्त्री एक छोटे लडके को साथ मे लेकर बहुत देर से घूघट काढे बैठी थी । उसने सोचा कि अब उसकी बारी आ गई है, वह उठ खडी हुई । अन्नदाराय ने जरा सिर नीचा करते हुए चश्मे के ऊपर से उसे देखते हुए कहा . 'कौन है ? तेरा क्या काम है ?'

किसान स्त्री ने आचल की गाठ खोलते हुए धीरे से कहा . 'मैंने बडी मुसीबत मे कुछ रुपयो का बन्दोबस्त किया है, रुपये ले लीजिए और खलिहान का ताला खोल दीजिए । कितनी तकलीफ मे हू कि क्या कहू मालिक ।'

अन्नदाराय की बाछे खिल गई । बोला : 'हरि, इनके रुपये ता गिन लो । बही खोलकर तारीख देखो और सूद का फिर से हिसाब कर लो ।...'

किसान स्त्री ने रुपये निकालकर हरिहर के सामने दालान के

किनारे रख दिए। हरिहर ने गिनकर देखे कि पांच रुपये हैं।

राय महाशय ने कहा : 'अच्छा, जमा कर लो, वाकी रुपये कहा हैं?

—अभी इतने ही लीजिए, फिर दे दूगी। मैं खटकर पैसे चुक दूगी। अभी इतना ही लेकर मेरे खलिहान का ताला खोल दीजिए पहले जरा खा-पीकर जान तो वचे, घर भी चूता है, तो फिर...

वह ऐसे भरोसे से वात कर रही थी जैसे खलिहान की चाभी मिल गई है। वात यह है कि अभी यह राय महाशय को पहिचान नहीं पाई थी।

अन्नदाराय ने वीच मे ही वात काटकर कहा : 'ओह, वडी आई है चाभी लेनेवाली। सूद और मूल मिलाकर लगभग चालीस रुपये वैठते हैं, और पाच रुपये लाकर कहती है कि खलिहान खोल दो नीच लोगो का ढग ही निराला है; चल यहा मे भाग, वेकार मेरा वक्त खराव न कर।'

किसान स्त्री को सभी लोग जानते थे। दीनू भट्टाचार्य को अच्छी तरह दिखाई नही देता था, वोले ' 'कौन है, अन्नदा?'

—यह उस मुहल्ले के तवरेज़ की वीवी है। चार दिन पहले तवरेज़ मर गया है न। सूद और मूल मिलाकर चालीस रुपये वाकी हैं इसलिए मरने के दिन की शाम को ही मैंने खलिहान पर ताला लगा दिया। अब यह कहने आई है कि खलिहान खोल दो, यह कर दो, वह कर दो।

जो पैर के नीचे से सचमुच जमीन खिसक जाती, तव भी तवरेज़ की वहू को इतना आश्चर्य न होता। अव वह कुछ-कुछ समझी। आगे बढकर वोली . 'यह वात न कहिए मालिक। मेरे मुन्ने के लिए उन्होंने उस साल सुनार से एक निम्वोरी वनवाई थी। सो भोदा सुनार की दूकान मे उसे वेचकर पाच रुपये मिले। वच्चे की चीज़ थी, उसे वेचने को जी नही चाहता था, पर क्या करती, पेट तो भरना ही था। इसलिए मैंने सोचा कि चलो वाद को मौका आएगा तो फिर निम्बौरी वनवा दूगी तो मालिक अव चाभी दे दीजिए।'

—चल-चल, अभी जा। रुपये-पैसो का मामला ऐसे गिडगिड़ाने से थोडे ही तय होता है। अभी तू यह सब वात नही समझती। तेरा

आदमी होता तो समझता, चल अब दिक मत कर। ये पाच रुपये तेरे नाम से जमा रहेगे, बाकी रुपये ले आ, तो देखा जाएगा। कहती है कि लडके को खाने को नही है, तो मैं क्या करू ? जो तुझसे बन पडे, तो नालिश करके खलिहान खुलवा ले।

अन्नदाराय घर के अन्दर चले गए तो दीनू भट्टाचार्य ने कहा . वहू, तवरेज़ के कितने दिन हुए, सो कुछ मालूम तो···'

—बाबा, बुध के दिन वह हाट से मछली ले आया, मैंने प्याज डालकर पकाकर भात दिया। बिलकुल कोई लच्छन नही था, अच्छी तरह भात खाया। खाकर बोला जाडा लग रहा है, मुझे कम्बल ओढा दे। सो मैंने ओढा दिया। बाद को, देखती क्या हू कि अभी दिन नही छिपा और उधर से बिलकुल कोई आवाज नही है, अगले दिन दोपहर तक मुझे तथा मेरे बच्चो को मझधार मे छोडकर वह चल बसा।

कहते-कहते उसका गला रुध आया। फिर उसने विनती करते हुए कहा 'आप लोग जरा कहिए न ! कहकर जरा खलिहान की चाभी दिलवा दीजिए। बडे-बडे कष्ट पडे है। नही. मैं कर्ज बाकी थोडे रखूगी, जिस तरह से भी हो···'

इतने मे रिश्ते मे लगनेवाला भतीजा आ गया, इससे वातचीत बन्द हो गई दीनू ने कहा 'आओ, नीरेन भैया, शायद मैदान की तरफ घूमने गए थे ? तुम्हारे बाप-दादो की यही जन्मभूमि है। तो यह बताओ कि कैसा लग रहा है ?'

नीरेन मुस्कराया। उसकी उम्र इक्कीस-बाईस से अधिक नही है। खासा-तगडा सुपुरुष है। कलकत्ता के किसी कालेज मे वकालत पढ रहा है। बोलता थोडा है। यद्यपि बाप ने इसलिए भेजा है, कि काम-काज देखे,पर न तो वह कुछ देखता है और न समझता है। दिन-रात उपन्यास पढकर और बन्दूक दागकर वक्त काटता है। साथ मे एक बन्दूक लाया है। शिकार का शौकीन है।

नीरेन ऊपर अपने कमरे मे गया, तो वहा देखा कि गोकुल की स्त्री कमरे मे फर्श के ऊपर उकडू बैठकर फर्श से कुछ खोट-खोटकर उठा रही है। दरवाजे के पास से ही नीरेन ने देखा कि उनका कीमती

विलायती लैम्प फर्श पर पड़ा हुआ है। उसके काच का डोम चूर-चूर हो गया है और फर्श पर काच के टुकड़े बिखरे हुए हैं।

दरवाजे के पास जूते की आहट पाकर गोकुल की स्त्री ने चौंककर पीछे की ओर देखा। उसे देखने पर ऐसा मालूम हुआ कि रोज की भांति वह कमरा साफ करने के लिए आई थी और उसने लैम्प जलाना चाहा था। पता नही, वह कैसे टूट गया। वह चाहती यह थी कि लैम्प के मालिक के आने के पहले ही अपराध के चिह्न स्वयं ही हटा दे, पर वह तो रगे हाथो पकडी गई। इसलिए वह बहुत झेंप गई। उसकी लज्जा के बोझ को काम करने के लिए नीरेन ने हसकर कहा : 'वाह भाभीजी, आपने लैम्प की अच्छी छुट्टी कर दी। अब देखिए न, पकड़ी भी गईं, आखिर मैं कानून जो पढता हू। अच्छा अब जल्दी से चाय बनाकर लाइए तो मालूम हो कि आप कितना चटपट काम कर सकती हैं। खैरियत यह है कि बक्स मे एक दूसरा डोम है। ठहरिए मैं बत्ती जला लू।'

गोकुल की स्त्री ने लज्जित होकर कहा : 'दियासलाई ले आऊ ?'

नीरेन ने कौतुक के साथ कहा : 'आप दियासलाई नही लाईं, तो लैम्प उतारकर क्या कर रही थी ?'

वह अबकी फिर हसी और धीरे से बोली : 'मैंने सोचा कि कालिख लगी है, जरा पोछ दू, तो जैसे ही कांच उतारने गई, तो पता नही यह विलायती मशीनवाली रोशनी कैसी है,—कहकर वह बात बिना समाप्त किए ही फिर से झेंप-भरी हसी हसकर बाहर चली गई।

नीरेन दस-बारह दिन से आया हुआ है, पर भाभी लगने पर भी गोकुल की स्त्री के साथ उसने कोई खास बातचीत नही की थी। पर काच टूटने की सन्ध्या से दोनो मे नये परिचय के सकोच की जो खाई थी, वह दूर हो गई। नीरेन अच्छे घर का लडका है, तिस पर देहात मे वह पहले पहल आया था, इसलिए बिना संगी-साथी के ये प्रवासवाले दिन अच्छी तरह कट नही रहे थे। हमउम्र भाभी के साथ परिचय का मार्ग सरल हो जाने के बाद से वह सबेरे-शाम चाय पीते समय मिलता-मिलाता था। तब से उसके दिन सहज आदान-प्रदान की मधुरता से आनन्द-पूर्ण हो गए।

उस दिन दोपहर को दुर्गा टहलने आई। उसने रसोईघर के दरवाजे से झाककर कहा : चाचीजी, क्या पका रही हो ?'

वहू बोली 'आ बेटी आ। जरा मदद दे। अकेले अब काम पूरा नही पड रहा है।'

दुर्गा बीच बीच मे जब आती है तो चाची के काम मे हाथ बटाती है। उसने मछली काटते हुए कहा : 'अच्छा चाचीजी, तुम्हे यह कॅकडे कहा से मिल गए ? यह कॅकडा तो शायद खाया नही जाता।'

—क्यो खाया क्यो नही जाएगा ? बीपू मल्लाहिन कह रही थी कि सभी यह कॅकडा खाते हैं।

—तो चाचीजी, तुमने क्या इन्हे खरीदा है ?

—खरीदा क्यो नही ? पाच पैसे मे लिए।

दुर्गा कुछ नही बोली। मन ही मन सोचती रही कि चाचीजी, हैं तो बहुत अच्छी, पर जरा बुद्धू हैं। भला इन कॅकडो को पैसे देकर कौन लेता है, और खाता ही कौन है। बीपू ने सीधी सी देखकर ठग लिया। साथ ही इस सरला चाची पर उसका स्नेह और भी अधिक हो गया।

मछली धोकर चलते समय दुर्गा ने सहमते-सहमते कहा : 'चाचीजी, तुम्हारे यहा चिउडा के लायक धान है। मा कह रही थी कि अपू चिउडा खाना चाहता है, अबकी हमारे यहा धान खरीदा नही गया।'

गोकुल की बहू ने चुपके से कहा. 'दोपहर के बाद आना।' फिर दालान की तरफ इशारा करके बोली . 'सो जाए तो आना।'

दुर्गा ने पूछा 'चाचीजी, तुम्हारे घर कोई आए हैं। मैने उन्हे एक दिन भी नही देखा।'

—तूने देवरजी को नही देखा ? अभी वह कही गए हैं, शाम के समय आना, भेंट हो जाएगी।

इसके बाद गोकुल की बहू हसकर बोली : 'तेरे साथ देवरजी की शादी हो, तो जोडी खूब फबेगी।'

दुर्गा लज्जा से लाल होकर बोली 'धत !'

गोकुल की बहू फिर हसकर बोली : 'धत् क्यो ? क्यों हम लोगो की लडकी कोई खराब थोडे ही है ? ला जरा देखू।'—कहकर उसने

दुर्गा की ठुड्डी पर हाथ रखकर उसका चेहरा ऊचा करते हुए कहा : 'बिलकुल देवी की तरह सुन्दर मुखडा है। बाप गरीब है तो क्या हुआ।'

दुर्गा ने झटके से अपने को छुडाते हुए कहा : 'जाओ चाचीजी, तुम जाने कैसी···'

बाद को वह लगभग दौडकर पीछे के दरवाजे से निकल गई। जाते-जाते उसने सोचा—चाचीजी मे सारी बातें अच्छी है, पर जरा बुद्धू है, नही तो देखो न ! धत !

काम करते-करते दिन ढल गया। जब गोकुल की बहू नदी मे फिर नहाने गई तो, भूख, प्यास, और परिश्रम के मारे उसका चेहरा एकदम कुम्हला गया था।

घाट मे उस समय शाम की छाया घनी हो गई थी। उस पार के बडे सेमर पेड पर धूप चमक रही थी। नदी के मोड पर एक पालवाली नाव डाड चलाकर मोड लेती हुई घूमकर जा रही थी। उसके पतवार के पास एक आदमी खडा होकर कपडा सुखा रहा था। कपडा हवा मे झण्डे की तरह उड रहा था। बीच नदी मे एक कछुवा मुह उठाकर सास लेकर ही फिर डुबकी लगा गया—सो ओ ओ, हुश।

नदी के पानी से जाने कैसी ठडी-ठडी अच्छी-सी गध आ रही थी। नदी तो नन्ही-सी है। उस पार की जमीन पर एक पनकोडो चिडिया मछली पकडने के लिए बास का जो दुजाला बनाया गया है, उसपर बैठी है।

इसी समय प्रतिदिन उसे अपने बचपन की याद आती है—'पानकोडी, पानकोडी डागाय ओठो से' याने पनकोडी, पनकोडी जमीन पर उठो।

गोकुल की बहू कुछ देर तक पनकोडी की तरफ देखती रही। मा का चेहरा याद आता है। बात यह है कि ससार मे अब उसपर स्नेह रखे ऐसा कोई नही रहा। मा के मरने की उम्र थोडे ही हुई थी। अपने गरीब पितृकुल मे केवल एक गजेडी भाई है, सो उसका कोई पता नही लगता कि कब कहा रहता है। पिछले साल दुर्गापूजा के दिनो मे वह यहा आकर चार दिन रह गया था। वह लुका-छिपा-

कर अपने भाई को अपने वक्स में जो थोड़ी-बहुत पूंजी थी—चवन्नी-दुअन्नी दे देती थी। बाद में एक दिन वह अचानक गायब हो गया। उसके चले जाने पर मालूम हुआ कि उसने एक शाल बेचनेवाले पठान से एक शाल उधार मे खरीदकर अपने बहनोई का नाम लिखा दिया था। जब यह बात खुली, तो कुहराम मच गया। पितृकुल की बड़ी-बडी आलोचनाएं हुई और अपमान हुए।

तब से भाई का कोई पता नही है।

पर असहाय आवारा भाई के लिए सन्ध्या समय कभी-कभी एक हूक-सी उठती है। सुनसान मैदान वाले रास्ते की तरफ देखकर ऐसा प्रतीत होता है, जैसे गृहहीन चिरपथिक भाई शायद दूर की किसी निर्जन पगडडी मे अकेला चला जा रहा है, रात को ठहरने के लिए भी कोई जगह नही है और न कोई उसकी सुधि लेनेवाला है।

हृदय कचोटने लगता है और आखो मे आसू आ जाने के कारण नदी का पानी, मैदान, घाट, उस पार के सेमर का वृक्ष, मोड पर की बडी नाव सब अस्पष्ट हो जाते हैं।

१०

उस दिन अपू मल्लाहो के टोले मे कौडी खेलने गया था। दिन के दो या ढाई से कम नही बजे होगे। धूप बहुत तेज थी। पहले वह तिनकौडी मल्लाह के घर पर गया। उसका लडका बका अमरूद के नीचे कपच्ची छील रहा था। अपू ने कहा · 'अरे ! कौडी खेलेगा ?'

खेलने की इच्छा रहने पर भी बंका ने कहा कि मुझे अभी नाव पर जाना है, खेलूगा तो बापू नाराज होगे।

वहा से अपू रामचरण मल्लाह के घर पर गया। रामचरण सहन मे बैठकर तमाखू पी रहा था। अपू ने पूछा : 'हिरदय घर पर है ?'

रामचरण बोला . 'क्यो पडित ! हिरदय से क्या लेना है ? क्या कौडी खेलोगे ? अच्छा जाओ, हिरदय घर पर नही है।'

दोपहर के समय घूमते-घूमते अपू का चेहरा लाल पड गया।

और भी कई जगह गया; कही भी उसका काम नही बना। अन्त मे घूमते-घूमते बाबूराम पाड ई के घर के पास इमली के नीचे पहुचा, तो वहा उसका चेहरा खिल गया। बात यह थी कि इमली के पेड के नीचे कौड़ी के खेल का अड्डा जमा था। वहां इकट्ठे लडको मे सभी मल्लाहो के लडके मे ब्राह्मण टोले का पटु भी था। अपू के साथ पटु का कोई मेल-मिलाप नही था क्योकि पटु का घर जहां था. अपू का घर वहां से बहुत दूर था।

पटु अपू से कुछ छोटा है। अपू को यह अच्छी तरह याद है कि वह पहले-पहल जिस दिन प्रसन्न गुरुजी की पाठशाला मे भरती होने गया था, उस दिन उसने इस लडके को ही निश्चिन्त होकर ताड़ का पत्ता मुंह में भरकर चबाते देखा था। अपू ने उसके पास जाकर कहा : 'कितनी कौडिया ···'

पटु ने कौडी की थैली निकालकर दिखाई। लाल सूत की बुनी हुई छोटी-सी थैली थी। यह उसकी बडी प्रिय चीज थी, बोला : 'सत्रह लाया हूं, इनमे से सात सुनहली हैं, जो हार जाऊंगा तो और ले आऊंगा···'।

कहकर उसने मुस्कराकर थैली दिखाते हुए कहा . 'इसमे चार बीसी कौडिया आ सकती हैं।'

खेल शुरू हुआ। पहले पटु हार रहा था, फिर वह जीतने लगा। अभी कुछ ही दिन हुए पटु ने यह बात जान ली थी कि कौडी के खेल मे उसका निशाना कभी चूकता नही है, इसीलिए वह दिग्विजय की उच्चाकाक्षा लेकर इतनी दूर आया था। खेल के नियमानुसार पटु के ऊपर से एक बडी कौडी से निशाना मारते ही जैसे कौडी भन्न से घूमते-घूमते घर से निकल जाती है, वैसे ही उसकी बाछें खिल जाती हैं। बाद मे वह जीती हुई कौडियो को थैली के अन्दर रखकर लोभ, और खुशी के मारे बार-बार थैली की ओर देखकर यह अनुमान लगाता था कि उसके भरने मे अब कितनी देर है।

मल्लाहो के कुछ लडको ने आपस मे सलाह की। एक ने पटु से कहा : 'तुम्हे और एक हाथ फासले से मारना पड़ेगा क्योंकि तुम्हारा निशाना बहुत तेज़ है।'

पटु बोला . 'वाह ! यह भी कोई बात हुई ? निशाना तेज रहना कोई बुरी बात थोडे ही है ? तुम लोग भी जीत लो, मैं किसी को रोकता थोडे ही हू ।'

बाद मे उसने चारो तरफ दृष्टि दौडाकर देखा तो मल्लाह के सब लडके एक जुट हो गए थे । पटु ने मन ही मन सोचा कि मैंने कभी इतनी कौडिया नही जीती, आज यही खेल खत्म करना चाहिए। और खेले कि यह कौडिया घर नही जाने की। फिर कही एक हाथ दूर से मारना पडा तो बिलकुल हार जाऊगा ।

सोचकर वह एकाएक छोटी थैली को हाथ मे उठाकर बोला : 'मैं एक हाथ दूर से निशाना लेकर नही खेलूगा, मैं घर जाता हू ।'

बाद मे उसने मल्लाहो के लडको का रग-ढग और आखो की निष्ठुर दृष्टि देखी, तो उसने अपने अनजाने में ही कौडी की थैली को कसकर पकड लिया ।

एक लडका आगे बढता हुआ बोला : 'पण्डित ! यह नही होने का । जीतकर भागोगे क्या ?'

साथ ही साथ उसने एकाएक पटु के थैली वाले हाथ को पकड लिया । पटु ने हाथ छुडाने की चेष्टा की, पर छुटा नही पाया । दुखी होकर बोला 'यह क्या बात है ? हाथ क्यो पकडते हो ? छोड़ दो ...'

पीछे से किसी ने एक धक्का मारा, जिससे वह गिर पडा, पर उसने कौडीवाली थैली नहीं छोडी ! वह समझ गया था कि यह लोग इसे छीनना चाहते हैं। जमीन पर गिरकर भी उसने थैली को पेट से दबाने की चेष्टा की, पर एक तो वह कम उम्र का था; दूसरे ताकत भी कम थी, वह मल्लाहो के तगड़े और उम्र मे बडे लडको से कब तक जूझता । हाथ से कौड़ी की थैली बहुत पहले ही गिर पडी थी, और कौडिया बिखर गई थी ।

अपू पटु की यह गत बनते देखकर शुरू मे कुछ खुश न हुआ हो, ऐसी बात नही, क्योंकि वह भी बहुत कौड़िया हार चुका था । पर पटू को गिरते देखकर विशेषकर असहाय हालत मे मार खाते देखकर उसका दिल धक् से हो गया । वह भीड मे घुसते हुए बोला :

'यह छोटा लड़का है, इसे तुम लोग मारते क्यो हो ? छोड़ दो ।'

इसके बाद वह पटु को मिट्टी पर से उठाने लगा, पर पीछे से किसी ने एक घूसा जमा दिया तो उसे कुछ देर तक कुछ दिखाई नही पड़ा। इसके बाद जो धक्कम-धक्का मचा, उसमे वह भी मिट्टी पर गिर पडा ।

उस दिन अपू की बुरी गत बनती, क्योकि उसके स्त्रियो जैसे हाथो और पैरो मे कोई विशेष ताकत नही थी, पर उसी मौके पर नीरेन के इस रास्ते से आ जाने के कारण विपक्षी दल नौ दो ग्यारह हो गया। पटु को बहुत चोट आई थी, नीरेन ने उसे मिट्टी पर से उठाकर बदन की धूल झाड दी । थोडा सभलकर उसने चारो तरफ देखा तो बिखरी हुई कौड़ियो मे से दो ही चार बाकी थी, थैली का कही पता नही था ।

बाद मे उसने अपू के पास आकर कहा . 'अपू भैया ! तुमको ज्यादा तो नही लगी ?'

नीरेन ने दोनो को इस भरी दोपहरी में मल्लाह टोले मे आकर कौड़ी खेलने के लिए डाट बताई। नीरेन ने मोहल्ले के लड़को को लेकर वक्त काटने के लिए अन्नदाराय के चौपाल मे पाठशाला खोली थी । उसने उन दोनो से कहा कि कल से तुम लोग मेरी पाठशाला मे आया करो ।

पटु चलते-चलते यही सोच रहा था—'मेरी वह कौड़ियो की थैली कितनी सुन्दर थी, उस दिन कितनी मुसीबतो के बाद वह छिवास से मिली थी, और अब वह गई । जो मैं जीतने के बाद न खेलू, तो उनके बाबा का क्या ? मेरी खुशी है खेलू या न खेलू···

मधु सक्रांति के पहले दिन सर्वजया ने लड़के से कहा : 'कल के लिए मास्टर साहब को न्योता दे आना । कहना कि दोपहर का भोजन यही करें ।'

मोटे चावलो का भात, पपीता का रसा, कच्चे गूलर की सुक्तनी[1] केले के गूदे का घट,[2] झींगा मछली का झोल,[3] केले के बड़े और खीर ।

---

१. एक कड़वी तरकारी । २. पचमेल तरकारी । ३. शोरबा ।

दुर्गा की मा ने उसे परोसने के काम में लगाया है, पर वह बहुत अनाडी है। ऐसे डर-डरकर सभलकर उसने दाल की कटोरी निमन्त्रित के सामने रखी मानो उसे यह भय था कि कोई अभी उसे डाट देगा। नीरेन इतना मोटा चावल खाने का आदी नही था, वह यह नही जानता था कि इतने कम तेल और घी से पकी हुई तरकारी लोग कैसे खाते हैं। खीर फीकी थी, पानी मिले दूध से बनी थी। एक बार चखकर ही खीर खाने का उत्साह जाता रहा। पर अपू बहुत खुश था और जोश के साथ न्योता खा रहा था। उनके घर मे शायद ही कभी इतना अच्छा खाना बना हो। आज तो एक स्मरणीय उत्सव-सा है। बोला 'मास्टर साहब! जरा खीर तो लीजिए।'

वह स्वय बार-बार दीदी से कुछ मागता जा रहा था।

घर लौटने पर गोकुल की बहू ने हसकर पूछा : 'देवरजी, तुम्हें दुर्गा पसन्द है? देखने-सुनने मे तो अच्छी है। हाय! वह बहुत ही गरीब की लडकी है, बाप के पास दहेज के लिए पैसे नही हैं, पता नही किसके हाथ पडेगी। सारी जिन्दगी भोगना बदा है। तुम उससे शादी क्यो नही कर लेते देवरजी? गोत्र आदि भी ठीक है, लडकी भी अच्छी-खासी है, भाई और बहन दोनो गुड्डा-गुडिया से सुन्दर हैं...'

पैमाइश के तम्बू से लौटकर नीरेन उस दिन गाव के पीछेवाले आम के बाग के रास्ते से जा रहा था। जगल के अन्दर की पगडंडी से आते हुए उसने देखा कि बाग के अन्दर से एक लडकी सामने से आ रही है। उसने पहचान लिया, यह अपू की बहन दुर्गा है। पूछा 'क्यो जी, यह बाग तुम लोगो का है?'

दुर्गा पीछे देखकर शरमा गई, कुछ बोली नही।

बाद मे वह रास्ते के किनारे खडे होकर नीरेन के लिए रास्ता छोड देने लगी। नीरेन बोला· 'नही! नही! तुम आगे चलो। तुमसे भेंट हो गई, अच्छा हुआ। मैं उस तरफ एक पोखर के किनारे चला गया था, तब से रास्ता ढूढ रहा हू। तुम्हारे यहा जगल बहुत है न?'

दुर्गा चलने लगी, फिर अकस्मात् उसने रुककर जो नीरेन को

तरफ देखा तो उसके कपडे में बधे हुए जाने काहे के कुछ फल रास्ते मे गिर पडे ।

नीरेन बोला : 'देखो जी, कुछ गिर गया, ये काहे के फल हैं ?'

दुर्गा झुककर उन्हे बटोरते हुए संकोच के साथ बोली : 'कुछ नही, ये मटिया आलू हैं ।

- मटिया आलू ? खाने मे अच्छा है ? कैसा फल है ?

यह प्रश्न दुर्गा को बहुत अजीब मालूम हुआ । एक पांच साल का लडका जिस बात को जानता है, चश्मा लगाए हुए इस समझदार आदमी को उसका पता नही । उसने कहा · 'यह फल खाने के लिए नही होता, ये तो कडवे हैं ।'

—फिर तुमने···

दुर्गा ने झेंपते हुए कहा : मैं इन्हे ऐसे ही खेलने के लिए ले जा रही हूं ।'

यह उसे याद था कि उस दिन चाचीजी ने मजाक में इसी चश्मेवाले लडके के साथ उसकी शादी की बात कही थी, तब से बड़ा कौतूहल था कि वह लडके को अच्छी तरह देखे । पर मधुसंक्रान्ति के व्रत के दिन भी ऐसा करते नही बना और आज भी वह उसे आख भरकर नही देख सकी ।

—अपू से कहना कि कल सवेरे किताब लेकर आए । कह दोगी न ?

दुर्गा ने चलते हुए सम्मतिसूचक ढंग से सिर हिलाया ।

थोडी दूर जाकर बगल का एक रास्ता दिखाते हुए वह बोली : 'यह रहा आपका रास्ता, यह सीधा पडेगा ।'

नीरेन बोला · 'अच्छा मैं पहचानकर चला जाऊंगा, पर तुम्हें जरा घर तक पहुंचा द, तुम अकेली जा सकोगी न ?'

दुर्गा ने उगली दिखाते हुए कहा : 'वह रहा हम लोगो का घर। वह क्या है सामने । मैं इतना रास्ता खुद चली जाऊगी। आप और '

इसके पहले नीरेन ने दुर्गा को कभी अच्छी तरह नही देखा था। इतनी सुन्दर भावुक आखें उसने इससे पहले इसके भाई अपू की ही

देखी थी, मानो देहाती इलाके के एकाकीपन मे पनपनेवाली साम और मौलश्री की पक्तियो की प्रगाढ श्याम स्निग्धता इन बडी-बडी आखों मे अर्धसुप्त है। अभी जैसे सवेरा नही हुआ, और उनमे रात के अन्तिम पहर का अलस अधकार अभी लिपटा हुआ है, फिर भी वे उस प्रभात का स्मरण दिलाती है, जब कितनी ही सुप्त आखें एकाएक कली की तरह चटक जाती है, कितनी ही कुमारियां पनघट की ओर चल पडती हैं, घर-घर मे नवजागरण का अमृत उत्सव प्रारम्भ होता है और हर खिडकी से धूप की मोहक गन्ध उठकर फैलने लगती है।

दुर्गा कुछ देर ठहरकर जैसे कुछ हिचकिचाने लगी। नीरेन को ऐसा प्रतीत हुआ कि वह कुछ कहना चाहती है, पर उसे याद नही आ रहा है। उसने कहा 'नही जी ! मैं तुम्हे और थोडा आगे छोड आऊ। चलो, तुम्हारे घर के सामने से चलू।'

दुर्गा हिचकिचाने लगी, बाद मे जरा मुस्कराई। नीरेन को ऐसा लगा कि अब वह कुछ बोलने ही वाली है, पर अगले ही क्षण दुर्गा ने सिर हिलाकर यह बता दिया कि मुझे तुम्हारे साथ की जरूरत नही और वह घर का रास्ता पकडकर चली गई।

दोपहर का समय था। छत पर सूखने वाले कपडो को बटोरने के लिए जब गोकुल की बहू ऊपर गई तो उसने नीरेन के कमरे के दरवाजे पर झाककर देखा। उस समय नीरेन बिस्तरे पर करवटें बदलने के बाद गर्मी के कारण नीद की आशा त्यागकर फर्श पर चटाई बिछाकर घर मे चिट्ठी लिख रहा था।

गोकुल की बहू ने हसकर कहा : 'तुम सोए नही, देवरजी ! मैंने सोचा कि देवरजी सो रहे होगे।'

कुछ देर बाद गम्भीर होकर धीमी आवाज से बोली : 'देवरजी ! एक बात कहू तो मानोगे ?'

—क्या बात है यह तो बताइए ?

—अगर मानो तो बताऊ !

—मैं कोरे कागज पर दस्तखत करने से तो रहा। आखिर जानती हो भाभीजी ! मैं वकालत पढता हूं। पहले सुनूगा कि बात क्या है फिर हामी भरूगा।

गोकुल की वहू दरवाजा छोडकर कमरे के अन्दर आई। कपडे के भीतर से कागज़ की एक पुडिया निकालकर वोली : 'ये वालिया रखकर पाच रुपये दोगे ?'

नीरेन ने आश्चर्य के साथ कहा : 'क्यों ? रुपयो का क्या होगा ?'

—अभी नही वताऊंगी। देवरजी ! दोगे ?

—पहले यह वात वताइए कि रुपये से क्या होगा, नही तो···

गोकुल की वहू धीमी आवाज़ मे वोली 'मैं एक जगह भेजूगी। देखो तो इस चिठ्ठी मे अग्रेज़ी मे क्या पता लिखा है।'

नीरेन ने पढकर कहा : 'भाभीजी, आपके भाई हैं न ?'

'चुप रहो, चुप रहो। इस घर मे किसीको न वताना। भाई ने पाच रुपये मागे हैं, पर कहा से लाऊ देवरजी ? कैसी पराधीन हू, जानते तो हो। इसलिए सोचा था कि इन वालियो को रखकर पाच रुपये ले लू। उस कम्वख्त लडके का इस दुनिया मे और कौन बैठा है'—कहते-कहते गोकुल की वहू का कठ रुध गया।

नीरेन वोला 'भाभी ! रुपये तो मैं दे दूगा, पाच मागिए, दस मागिए। आप जब चाहे तब चुकाए पर वह वालिया मैं नही लेने का।'

गोकुल की बहू ने कौतुक के ढग से कधा हिलाकर हसते हुए कहा : 'यह नही होने का देवरजी ! फिर मैं तुम्हारा कर्ज़ा बिना अदा किए मर जाऊ और क्या नाम तुम···। यह नही होने का, तुम्हें लेनी ही पडेंगी। अच्छा, अव मैं जाती हू। नीचे वहुत काम पडा है···

वह जल्दी से वाहर चली गई, पर सीढी तक जाकर ही लौटकर फिर धीमी आवाज़ मे वोली : 'पर देवरजी किसीसे रुपये की वात न कहना। किसीको नही, समझे न ?'

घर लौटकर सध्या के वाद दुर्गा ने बड़ी देर तक गुड्डो का वक्स सजाया। उसकी मा कुप्पी में मिट्टी का तेल भरते हुए कुछ तेल फर्श पर गिरा गई है, उसकी वू आ रही है। हवा कुछ गरम लग रही है। गुडियो को सवारना लगभग खत्म हो गया है। अपू ने आकर कहा : 'दीदी, क्या तूने मेरे बक्स से छोटा शीशा निकाल लिया ?'

—शीशा तो मेरा है। मैंने ही तो उसे पहले देखा था, तख्त के नीचे पड़ा था। चल, अब ले मैं शीशा अपने बक्स मे रखूगी, तू मर्द बच्चा है, शीशा लेकर क्या करेगा ?

—वाह, शीशा तेरा कैसे हुआ ? उस मोहल्ले की चाचीजी के घर से किसी व्रत पर यह शीशा आया था। मैंने पहले ही इसे मा से माग लिया था, नही दीदी दे दो।

बात खत्म करके ही वह दीदी के गुडिये के बक्स के पास बैठकर उसमे शीशा खोजने लगा।

दुर्गा ने भाई के गाल पर तडाक से एक तमाचा जडते हुए कहा 'पाजी कही का. मैं तो गुडियो को ठीक से लगा रही हू और तू उन्हें गडबड-सडबड कर रहा है। चल मेरे बक्स में हाथ मत लगा, मैं शीशा नही दूगी।'

पर अभी उसकी बात खत्म नही हुई थी कि अपू उसपर टूट पडा और उसके रूखे बालो के गुच्छे को खीचकर और उसे खरोंचकर तथा दात से काटकर परेशान कर दिया। वह रुधे हुए कठ से बोलने लगा . 'तू मुझे मारनेवाली कौन होती है ? क्या मुझे लगती नही है ? मुझे शीशा दे, नही तो अभी मा से कह दूगा कि तूने लक्ष्मी पूजावाली डलिया से आलता चुराया है।'

आलता की चोरी की बात से दुर्गा बहुत ही नाराज हुई। उसने भाई के कान पकडकर झकोरते हुए तर ऊपर कई तमाचे जड दिए। बोली : मैंने आलता लिया है ? मैंने आलता लिया है ? कमबख्त, पाजी, बन्दर ! और तूने जो उस डलिया से कौडिया खोलकर छिपा रखी हैं, सो मैं नही बताऊगी ?'

शोर-गुल, रोना-पीटना और मार-पीट की आवाज सुनकर सर्वजया दौडी हुई आई।

इस बीच मे दुर्गा ने अपू का कान पकडकर उसे मिट्टी मे लगभग सुला दिया था। अपू भी भरसक जोर से दुर्गा के बालो का गुच्छा ऐसे पकडे हुए था कि दुर्गा सिर उठा नही सकती थी। अपू को ज्यादा लगी थी। वह रोते-रोते बोला . 'देखो मा, इसने मेरे शीशे को अपने बक्स मे रख लिया है, देती नही है और ऊपर से इसने

मुझे बुरी तरह मारा है।'

दुर्गा ने प्रतिवाद करते हुए कहा . 'नही मा, देखो न, मैं गुड़ियो का वक्स सजा रही थी कि इसने आकर सव फेंक-फाक दिया।

सर्वजया ने आते ही लडकी की पीठ पर दो-चार घूसे रसीद किए और बोली : 'तू इतनी बडी लडकी है, तू उसपर जब-तब हाथ क्यो चलाती है ? मालूम नही है, तुझमे, उसमे कितना फर्क है ? शीशा, शीशा ! तेरे किस काम आएगा ! बात-बात पर मारने चल देती है। बड़ी आई है गुडियो के बक्स वाली। रह जा, मैं दिखाती हू ...'

बात बिना समाप्त किए ही सर्वजया ने लडकी के सवारे हुए गुडियो के बक्स को उठाकर बाहर आगन में झटके के साथ फेंक दिया।

—इतनी बडी लडकी है, कोई काम है न धाम। बस खाना और मोहल्ले मे बेकार में चक्कर लगाते रहना। हरदम बस गुड़ियो के बक्स की रट लगाए रहती है। मैं यह सब सोचकर अभी बास की झाडी मे डाल देती हू जिससे कि हमेशा के लिए खेल खत्म हो जाए।

दुर्गा चू भी न कर सकी। गुडियो का बक्स उसका जीवन है। वह कुछ नही तो दिन मे दस वार उसे सवारती-सजाती है। उसमे गुडिया, पन्नी, छींट, आलता तथा कितनी कठिनाई से सगृहीत नाटा फल, टिन मे मुडा हुआ शीशा, चिडियो का बसेरा, सब अन्धकारपूर्ण आगन मे जाने कहा बिखर गए। मा उसके गुडिये के बक्स को इस तरह निर्दय होकर फेंक सकती है, इसकी उसे कल्पना नही थी। उसमें कितने ही स्थानो से कितनी ही मुसीबतो मे जुटाई हुई चीज़ें थी। पर उसे कुछ कहने का साहस न हुआ। वह मा के व्यवहार से अजीब ढग से हक्की-बक्की होकर रह गई।

अपू ने भी शायद यही समझा कि जो सज़ा दी गई है वह ज़रूरत से ज्यादा कडी है इसीलिए बिना कुछ कहे-सुने चुपचाप लेट गया।

रात बहुत हो चुकी थी। फर्श पर गिरे हुए मिट्टी के तेल की बू आ रही थी और कमरे के अन्दर बास की झाड़ी के मच्छर पी-पी कर रहे

थे। दुर्गा कुछ देर तक बैठी रही, फिर चुपचाप सो गई।

टूटे हुए जगले के अन्दर से फाल्गुन की चादनी बिस्तरे पर पट रही थी, उजडे हुए मकान की ओर से नीबू के फूल की तेज गन्ध आ रही थी।

एक बार उसके मन मे आया कि वह उठकर गुडियो का बक्स और बिखरी हुई चीजो को उठा लाए, कल सवेरे तक भला उनका कब पता मिलेगा। कितनी मुसीबतों से जुटाई हुई चीजें थी, पर उठने की हिम्मत नही पडी। कही वह चीजो को उठाने गई तो मा उसे मार न बैठे।

बहुत समय निकल गया। एकाएक उसने अनुभव किया कि किसीका हाथ उसके शरीर पर है। अपू ने डरते-डरते पुकारा 'दीदी ?'

दुर्गा उत्तर नही दे पाई थी कि अपू तकिये मे मुह छिपाकर डाढ मारकर रो उठा . 'मैं और नही करूगा, मुझपर गुस्सा न करना दीदी, मैं, तुम्हारे पाव पडता हू।'—रोने के मारे उसका गला रुध गया।

दुर्गा पहले-पहल बहुत आश्चर्य मे पड गई, इसके बाद वह उठ कर बैठ गई और भाई को चुप कराने की चेष्टा करने लगी। बोली 'रो मत, चुप चुप, जो मा ने सुन लिया तो वह मुझपर बिगडेंगी। चुप, रोते नही हैं; अच्छी बात है, मैं गुस्सा नही करूगी। छी! चुप!'

उसे डर लग रहा था कि कही मा ने अपू का रोना सुन लिया, तो वह उसीपर नाराज होगी और उसी को मारेगी।

बडी कठिनाई से वह भाई का रोना रोक पाई। बाद मे दोनो लेटे-लेटे आपस मे तरह-तरह की बातें, विशेषकर रानो की दीदी की शादी की बात कहने लगे। इधर-उधर की बातो के बाद अपू दीदी के बदन पर चुपके से हाथ रखकर बोला : 'एक बात कहू दीदी ? तेरे साथ मास्टर जी की शादी होगी…'

दुर्गा शर्मा गई, साथ ही साथ उसे बहुत कौतूहल भी हुआ, पर छोटे भाई से इस विषय पर बातचीत करने मे सकोच होने के कारण

वह चुप रही ।

अपू ने फिर कहा : 'चाचीजी आज शाम को रानी की मा से कह रही थी । कहती थी कि मास्टर जी राजी हैं···'

कौतूहल की अधिकता के कारण चुप रहना असम्भव हो गया । उसने लापरवाही के लहजे मे कहा : 'कह रही थी नही क्या, चल, तेरी बातें भी अजीब होती हैं ।'

अपू विस्तरे पर लगभग उठकर बैठ गया · मैं तुम्हें सच वता रहा हू दीदी, तुम्हारा वदन छूकर सोगन्ध खा रहा हू कि मैं वही खडा था और मुझको देखकर ही वात चल पडी । पिताजी से मास्टरजी के पिता को चिट्ठी लिखाई जाएगी···'

—मा जानती है ?

—मैंने सोचा था कि आकर मा से पूछूगा, पर भूल गया । तो अव पूछ लू ? मा ने शायद नही सुना। कल चाचीची मा को बुलाकर कहने वाली है ।

वाद मे उसने कहा . 'तू खूव रेलगाडी की सवारी करेगी मास्टर जी यहा से वहुत दूर रहते हैं, रेल मे जाना पडता है ।'

दुर्गा चुप रही ।

उसने रेलगाडी की तस्वीर देखी है, जो अपू की किसी किताव मे है । वहुत लम्बी है, वहुत-से पहिये हैं, सामने की तरफ कल है, वहा आग जलती है और धुआ निकलता है । रेलगाडी एक सिरे से दूसरे सिरे तक लोहे की वनी है, पहिये भी लोहे के है; बैलगाडी की तरह लकडी के पहिये नही हैं । रेल की लाइन के किनारे फूस के घर नही हैं, रह नही सकते क्योकि जल जाएगे । वात यह है कि जव रेलगाडी चलती है तो उसके नल से आग निकलती रहती है । उसने भाई के शरीर पर हाथ फेरते हुए कहा : 'तुझे भी साथ ले जाऊगी ।'

इसके वाद दोनो चुपचाप सोने की तैयारी करने लगे । लेटते समय एक ही वात दुर्गा के मन मे वार-वार आ रही थी कि सुदर्शन वावा ने उसकी वात सुन ली है । आज ही तो उसने सुदर्शन वावा से·· । वावा वडे दयालु हैं । मा जी कहती है सो विलकुल ठीक है !

अपू बोला 'लीला दीदी के लिए कैसी बढिया साडी खरीदी गई है, आज लीला दीदी के चाचा शादी के लिए रानाघाट से खरीद लाए हैं; सझली ताई ने कहा कि साडी का नाम बालूचर (बालूतट) साडी है...

दुर्गा ने हसते हुए कहा · 'एक तुकबन्दी मालूम है,' फूफी कहा करती थी :

बालुचरेर बालुर चरे एकटा कथा कई,
मोषेर पेटे मयूर छाना देखे ऐलाम सई ।[1]

११

सर्वजया ने पनघट पर जाकर मुहल्ले की स्त्रियो से यह बात सुनी कि कई दिनो से नीरेन के साथ अन्नदाराय की, विशेषकर उसके लडके गोकुल के साथ अनबन चल रही है। कल दोपहर को शायद बहुत झगडा और हल्ला-गुल्ला हुआ। इसके फलस्वरूप कल रात को ही नीरेन चीज़-वस्त लेकर चला गया।

अन्नदाराय की पडोसी यज्ञेश्वर दीघडो की स्त्री हरिमति कह रही थी : 'सच-झूठ नही मालूम। कई दिनो से तरह-तरह की बातें सुन रही हू। पर मैं इन बातो पर विश्वास नही करती। वह बहू ऐसी नही है। फिर सुनने मे आया कि नीरेन ने छिपाकर रुपये दिए हैं, बहू ने कही रुपये भेजे थे, नीरेन की लिखी हुई रसीद लौटकर गोकुल के हाथ मे पडी है इत्यादि। पर दूसरो के किस्सो से हमे क्या मतलब ? सुना है कि नीरेन ने कहा है कि आप सब लोग मिलकर एक स्त्री पर अत्याचार करते हैं। क्या यह बुरा नही है ? आप जो चाहे सो सोचें। बहूजी एक बार हुकुम दें तो मैं उन्हें इसी क्षण अपनी स्वर्गीय मा ही जानकर सिर पर रखकर ले जाऊ। उसके बाद आप जो चाहें सो करें। उसके बाद थोडी देर तक बहुत शोर-गुल मचा। सन्ध्या के पहले ही वह ग्वालो के टोले से एक

---

१. बालू तट के बालू के तट पर एक बात कहती हू कि हे सहेली ! मैं भैंस के पेट में मोर का बच्चा देख आई।

बैलगाडी ले आया और चीज़-वस्त लेकर चला गया।'

सर्वजया ने जो बातें सुनी तो उसे एक धक्का-सा लगा। इस बीच मे उसने पति के ज़रिये से नीरेन के पिता को शादी के सम्बन्ध मे पत्र लिखने का अनुरोध करवाया था। उसने नीरेन को घर पर और भी दो बार न्यौता देकर खिलाया था। वह लडका सर्वजया को बहुत ही पसन्द आया था। हरिहर ने उसे कई बार समझाया कि नीरेन के पिता बडे आदमी है, वे इस घर मे अपने पुत्र का विवाह थोडे ही करने लगे हैं ? पर सर्वजया ने आशा नही त्यागी थी।

उसके मन मे कही इस प्रकार का साहस हो रहा था कि यह विवाह दुराशामात्र नही है, यह होकर रहेगा। हरिहर मन ही मन विश्वास तो नही करता था, पर पत्नी के अनुरोध पर उसने अन्नदा-राय से कई बार तकाज़े किए थे।

पर यह तो बडी भारी विपत्ति हो गई।

इस बीच मे एक दिन दुर्गा के साथ गोकुल की बहू से राह चलते भेंट हो गई। बहू ने चुपके से दुर्गा को बहुत-सी बातें बतलाईं, नीरेन क्यो चला गया इत्यादि। कहते-कहते उसकी आखो से टपटप आसू बहने लगे।

—इसी प्रकार लात-घूसे खाकर ही दिन बीतेंगे। कही कोई भी तो नही है दुर्गा। जो अपना भाई भी आदमी होता ? कही दो दिन जाकर जुड़ा आऊ, उसके लिए भी तो कोई जगह नही है।

दुर्गा का हृदय सहानुभूति से द्रवित हो गया, साथ ही साथ उसके मन मे चाचीजी पर लगाए हुए आरोप के विरुद्ध तीव्र प्रतिवाद और उसके दुःख में समवेदना की कई तरह की अस्पष्ट बातें लहराने लगी। पर वह अपनी बातें ढंग से कह न पाई, केवल इतना ही बोली : 'सखी दादी भी अजीब औरत है। पर वह कहने को जो चाहे सो कहे, वह कर क्या सकती है ? मेरी अच्छी चाची, तुम रोओ मत। मैं रोज तुम्हारे यहा आऊगी।'

सर्वजया ने सारी बात सुनकर आग्रह के लहजे मे पूछा : 'बहू ने क्या कहा वहा ? कुछ नीरेन की भी बातें हुई ?'

दुर्गा ने झेंपकर कहा . 'तुम कल घाट पर पूछ लेना। मैं कुछ

नही जानती।'

अपू ने एक वार पूछा 'क्या चाचीजी ने वताया कि मास्टर साहव अव कभी नही आने के ?'

दुर्गा ने डाटते हुए कहा 'सो मैं क्या जानू ?...'

ढलती हुई धूप मे छायावाला मार्ग जाने किस प्रकार से मन मे एक टीस उठा देता है। यह टीस भाई के लिए है। ऐसा अक्सर होता है। कितनी ही वार हो चुका है। यदि वह ज्यादा देर घर पर न रहे या भाई को न देखे, तो भाई के सैकडो काल्पनिक दुःखो की वात याद करके मन भीतर ही भीतर कचोटने लगता है।

दूध और आलता की मिलावट से वने हुए रग जैसा गोरा-चिकटा और सोने की गुडिया जैसा भाई एक मैली अधफटी धोती पहिनकर दरवाजे के सामने अकेले-अकेले कौडी डाल-डालकर बैंगन के वीज हार-जीत रहा है। वह उससे एकाध चीज खरीदने के लिए पैसा मागता है, पर वह दे नही पाती, इसलिए मन मे पीडा वनी रहती है।

कई दिनो के वाद। भुवनमुकर्जी के घर मे रानी की दीदी की शादी तो समाप्त हो गई है, पर अभी सव नाते-रिश्तेदार नही गए है। लडके-वच्चे भी वहुत हैं। एक छोटी-सी लडकी के साथ दुर्गा का घनिष्ठ परिचय हो गया है। उसका नाम टूनी है। उसके पिता जी भी आए। आज दोपहर के वाद अपनी कन्या और पत्नी को वही छोडकर अपने काम की जगह पर गए हैं। लगभग एक घटा वाद सझली मालकिन का ध्यान, जो इस कमरे मे काम कर रही थी, टूनी की मा की तरफ गया।

सझली मालकिन ने सहन मे आते हुए कहा 'क्यो री हसी, क्या वात है ? तू घवडाई हुई क्यो लगती है ?'

टूनी की मा घवडाकर हडवडाहट मे विस्तरे, तकिये के नीचे कुछ टटोल रही थी, इधर-उधर देख रही थी, गद्दे उलट रही थी, बोली . 'अभी-अभी मेरी सोने की सिन्दूर की डिविया यही विस्तरे के वगल मे रखी हुई थी। उधर मुन्ना पालने से चिल्ला उठा। दे घर से गए, उठाकर रखने की याद नही रही, कहा गई। अव मिल नही रही है।'

सझली मालकिन ने कहा · 'ऐसा कैसे हुआ ? कही तू हाथ में लिए तो नही चली गई थी ?'

—नही नानीजी, मैंने उसे यही रखा था। अच्छी तरह याद है।

सब लोग मिलकर कुछ देर तक चारो तरफ खोजते रहे, पर डिबिया का कही पता नही चला। सझली मालकिन ने पूछकर पता लगाया कि पहले सहन मे इसी घर के लड़के-बच्चे थे। इसके बाद जब खाना खाने के लिए बुलावा आया, तो सब लडके खाने को चले गए। उस समय बाहरवालो मे बस दुर्गा ही थी। सझली मालकिन की छोटी लडकी टॆंपी धीरे से बोली . 'इधर हम लोग खाना खाने गईं, और इधर दुर्गा दीदी पीछे के दरवाजे से चली गई, अभी-अभी फिर से आई है।'

सझली मालकिन ने चुपचाप कुछ सलाह-मशवरा किया। फिर रुखाई के साथ दुर्गा से बोली · 'दुर्गा, डिबिया दे दे। बता उसे कहा रखा है ? अ—भी निकाल···'

सुनकर दुर्गा का मुह सूखकर इतना-सा हो गया। सझली मालकिन के रग-ढग देखकर उसकी जीभ मुह के अन्दर ऐंठ-सी गई। उसने अस्पष्ट स्वर मे क्या कहा, यह समझ मे नही आया। टूनी की मां इतनी देर तक चुप थी, एक भद्र घर की लड़की पर इस तरह चोरी का आरोप लगाते देखकर वह अवाक् रह गई। विशेषकर वह दुर्गा को कई दिनों से देख रही थी। देखने मे सुन्दर है, इसलिए दुर्गा उसे पसन्द भी आई थी। क्या उसके लिए चोरी करना सम्भव है ? बोली : 'सझली नानी, उसने शायद न ली हो, वह क्यो ··'

सझली मालकिन बोली : 'तू चुप रह—तू उसे क्या जानती है? उसने ली है या नही ली है, इसे मैं अच्छी तरह जानती हू।'

एक ने कहा 'तूने ली हो, तो निकाल दे, नही तो बता दे कि कहा है, बस सारा मामला खत्म हो जाएगा। अच्छी बेटी, दे दे न, क्यो झूठ-मूठ...'

दुर्गा जाने कैसी हो गई थी। उसके पैर थरथर काप रहे थे। उसने दीवार से पीठ लगाकर कहा : 'चाचाजी, मैं तो नही जानती कि डिबिया कहा है। मैं तो···'

सझली मालकिन ने कहा : 'तेरे इस कहने से मैं माननेवाली थोडी हू। जरूर इसीने ली है। इसकी आख से मुझे पक्का विश्वास है। सीधी तरह कह रही हू कि कहा रखी है, दे दे, चीज मिल जाए तो कुछ नही कहने को, मुझे तो चीज चाहिए।'

बाद को उसने दुर्गा का हाथ पकडकर घसीटते हुए कहा : 'बोल कहा रखी है ?' और बात समाप्त किए बिना ही वह दुर्गा पर टूट पड़ी।

टूनी मार देखकर रो उठी। पहलेवाली नातेदारिन ने कहा : 'अरे यह तो खून आ रहा है...'

किसीने नही देखा था कि दुर्गा की नाक से टप-टप खून गिर रहा है। छाती के पास का कपडा खून से लाल पड गया था।

टूनी की मा बोली : 'टॅपी, जल्दी से पानी ले आ, आगन की बाल्टी मे है। जल्दी ला।'

हल्ला-गुल्ला और शोर-गुल सुनकर बगल के मकान के लुहारो की लडकिया और बहुए मामला क्या है, देखने के लिए आ गईं। रानी की मा अब तक नही थी। दोपहर को खाना-पीना खत्म कर वह लुहारो के घर जाकर गप-शप कर रही थी। वह भी आ गई।

मार के मारे दुर्गा का सिर घूम रहा था। उसने उसी सुध-बुध हीन हालत में भीड की ओर ताककर कुछ देख लिया।

पानी आ जाने पर रानी की मा ने दुर्गा की आखो और मुह पर छीटे देकर उसे पकडकर बैठाया। दुर्गा को चक्कर आ रहे थे। वह वही खोई-खोई-सी बैठ गई। रानी की मा बोली : 'सझली दीदी, ऐसे कही किसीको मारा जाता है। कमजोर लडकी है छि।'

—तुम लोग उसे नही जानती। मार के अलावा चोर का कोई इलाज नही है। अभी मार पडी कहा है ? चीज नही मिली, तो छोड थोडे ही दूगी ? बाद को हरिराय का बस चले तो हमे शूली या फासी चाहे जिसपर चढा ले।

रानो की मां बोली . 'जाने दो, सझली दीदी, अभी जरा सभल तो लेने दो। तुमने ऐसा काण्ड मचा दिया कि · '

टूनी की मा बोली : बात यहां तक पहुचेगी, यह जानती तो मैं डिबिया की बात थोडे ही कहती। मुझे डिबिया नही चाहिए। सझली

नानी, आप उसे छोड दीजिए।'

सझली मालकिन इतनी आसानी से शायद न छोड़ती, पर जनमत उनके विरुद्ध था, इसलिए वह अपराधी को छोडने के लिए मजबूर होगईं।

रानी की मा उसे पकडकर उधर का दरवाजा खोलकर पीछेवाले आगन मे निकाल आई। बोली · 'न जाने किस बुरी साइत पर तू आज घर से निकली थी। जा, धीरे-धीरे चली जा। टेंपी, दरवाजे को अच्छी तरह खोल तो दे।'

दुर्गा उसी तरफ खोई-खोई-सी दरवाजे से निकल गई। जो लड़के-बच्चे वहा उपस्थित थे, वे उसे घूरकर देखने लगे। एक ने कहा 'फिर कबूल नही किया। देख लिया न। आंख से भी आसू की एक बूद नही आयी।'

रानी की मा बोली: 'आसू क्या गिरें ? डर के मारे सूख गए। आसू हैं कहां ? सझली दीदी, ऐसे कही मारा जाता है ?'

१२

साझे की चडक पूजा का समय आ गया। गाव के वैद्यनाथ मजुमदार चन्दे की वही लेकर घर-घर चन्दा वसूल करने लगे। हरिहर ने कहा: 'अबकी बार मेरे नाम से एक रुपया लिखना उचित नही है, एक रुपया देने की हालत यहा थोडे ही रही ?'

वैद्यनाथ ने कहा . 'क्या बात करते हो, अबकी नीलमणि हाजरा की पार्टी आ रही है। इस इलाके मे इतना अच्छा दल कभी आया ही नही। बात यह है कि अबकी बार पालपाडा के बाजार मे महेश सुनार के बालक कीर्तन वाले आएगे, उनसे घटिया चीज देकर अपने गाव की नाक नही कटवानी है।'

वैद्यनाथ ने ऐसा ढग दिखलाया, मानो इस होड की सफलता पर ही निश्चिन्दिपुर वालो का जीवन या मृत्यु निर्भर है।

सामूहिक पूजा के स्थान पर घास छीलकर बासो का ढाचा खडा करके शामियाना ताना गया था। नौटकीवाले आने ही वाले थे, पर अभी पहुचे नही थे। जब सन्ध्या ढल गई, तो लोग कहते कल सवेरे

की गाडी से आएगे, फिर सवेरा वीत जाने पर लोग शाम की आशा मे वठे रहते थे। अपू की ऐसी हालत हो गई थी कि खाना, नहाना वन्द-सा हो गया था। रात को उसे नीद नही आती थी। वाध तोडकर वहनेवाली वाढ की तरह उसके कौतूहल और आनद मे उच्छ्वास की प्रवलता इतनी अधिक थी कि वह अदम्य थी। वह विस्तरे पर करवटें लेता रहता था। नौटकी! नौटकी! नौटकी! होगी!

एकाएक सुनाई पडा कि आज शाम को नौटंकी का दल आएगा। सुनते ही जैसे ढेर-सा खून फेफडे से एकदम छलाग मारकर सिर मे पहुच गया!...

कुम्हार टोले के मोड पर दोपहर के वाद से सव लडके खडे थे। उन्हें दूर से एक वैलगाडी आती हुई दिखाई पडी, इसपर नौटकी की साज-सज्जा के एक, दो, तीन, चार, पाच वक्स लदे हुए थे। पटू ने वक्सो को उगली पर गिनते हुए उल्लास-भरे लहजे मे कहा: 'अपू भैया हम लोग इनके पीछे-पीछे चलकर देख न लें कि ये लोग कहा टिक रहे हैं, तुम चलोगे?

साज-सज्जा की वैलगाडियो के पीछे नौटकी के दल वाले चल रहे थे। सवके सिर पर माग वनी हुई थी, और कइयो के हाथ में जूते थे। पटू ने एक दाढी वाले को दिखाते हुए कहा. 'यह राजा बनता है? क्यो अपू भैया?'

चडक के मैदान मे जाने से पहले दुर्गा ने अपू को पीछे मे बुलाकर कहा: 'अपू सुन जा।'

वाद मे उसने मुस्कराते हुए उससे कहा: 'जरा हाथ तो फैला।'

जब अपू ने हाथ फैलाया तो दुर्गा ने उसके हाथ मे दो पैसे रख दिए और उसके हाथ को अपने हाथ मे रखकर मुट्ठी वाधते हुए कहा: 'दो पैसे की मीठी खील खा लेना, नही तो लीची मिले तो खा लेना।'

इसके सात दिन पहले अपू ने एक दिन चुपचाप दीदी से आकर पूछा था. 'तेरे गुडियो के वक्स मे कोई पैसा पडा है? मुझे एक पैसा देगी?

दुर्गा ने पूछा था: 'पैसे का क्या करेगा?'

अपू ने दीदी के मुंह की तरफ ताककर जरा हसते हुए कहा : 'लीची खाऊगा'—कहकर ही वह शरमाकर हस पड़ा।

बाद मे सफाई-सी देते हुए बोला : 'वैष्णवो के बाग में मचान बाधी है, बहुत लीचियां गिरी हैं। दो टोकरे-भर होगी। पैसे मे बडी-बडी छ. लीचियां मिल रही हैं। सतू ने खरीदी, साधन ने खरीदी'—कहकर वह रुककर फिर बोला : 'पैसा है ?'

पर दुर्गा के गुडियो के बक्स मे उस दिन कुछ भी नही था, इसलिए वह भाई की माग पूरी नही कर सकी। अपू को निराश होकर लौटते देखकर उसके मन मे बहुत कष्ट हुआ था, इसलिए कल शाम को चडक का तमाशा देखने के नाम पर दो पैसे माग लिए थे। भाई एक सोने की गेंद की तरह गोल-मटोल है, यदि यह भाई किसी बात पर मचल जाए और वह उसकी बात पूरी न कर सके, तो उसके मन मे बहुत दु.ख होता है।

नौटंकी शुरू हुई। दुनिया नही है, कोई नही है, बस अपू है और नीलमणि हाजरा का दल है। सन्ध्या से पहले बेहाला पर ईमन का आलाप हुआ। बेहाला बजानेवाला अच्छा है। अपू गाव का लडका है, उसे कभी कोई अच्छी चीज़ सुनने को नही मिलती, इसलिए उसका मन उदास और करुण स्वर से भर जाता है, उसके मन मे यह बात आती है कि पिताजी अभी तक घर पर बैठकर जाने क्या लिख रहे हैं, और दीदी यहा आने के लिए मचलने पर भी आ न सकी। पहले-पहल जब सुनहली पोशाको से सुसज्जित होकर राजा और मंत्री झुड के झुड टगे हुए झाड़-फानूस के नीचे आने लगे, तो अपू का मन कराह उठा कि हाय, पिताजी को यह सब देखने को नही मिला। गाव के सभी लोग यहा मौजूद हैं, उनके मोहल्ले का कोई आदमी छूट गया हो ऐसा तो मालूम नही देता, फिर भी पिताजी अभी तक······?

नाटक ज़ोर से आगे बढने लगा।

उस बार उसने लडको के कीर्तन वाली नौटंकी देखी थी, पर कहा राजा भोज और कहा भुजुआ तेली ? कैसे एक से एक बढिया कपडे हैं ! और चेहरे ?

एकाएक छेपी से किसीने कहा : 'मुन्ना, अच्छी तरह देख पा रहे हो न ?'

उसके पिताजी कब आकर पीछे बैठे थे, अपू को पता भी नही लगा था। उसने पिता की ओर लौटते हुए कहा : 'पिताजी, दीदी आई है न ? चिक के अन्दर है न ?'

जब मन्त्री के गुप्त षडयन्त्र के कारण राजा राजच्युत होकर रानी और राजकुमारो को लेकर जगल मे जा रहे थे, तो उस समय बेहाला से रुंआसा स्वर निकल रहा था। राजा बडी देर तक करुण रस उत्पन्न करने के लिए रानी और राजकुमारो का हाथ पकडकर एक कदम आगे बढता था, फिर रुक जाता था, इसके बाद फिर कदम उठाता था। वास्तविक जगत मे वनवास के लिए उद्यत कोई राजा बिल्कुल पागल हुए बिना इतने लोगो के सामने ऐसा नही कर सकता। साथ ही राजा के विश्वासपात्र सेनापति क्रोध से ऐसे थरथर काप रहे थे कि किसी मिरगी के रोगी के लिए भी यह ईर्ष्या का विषय हो सकता था। पर अपू को इतना आनन्द आ रहा था कि वह निष्पलक नेत्रो से यह सब देख रहा था और उसके मन मे यह भावना आ रही थी कि उसने ऐसा तो कभी नही देखा।

इसके बाद जाने राजा और रानी कहा चले गए।' ...

घने जगल मे महज राजकुमार अजय और राजकुमारी इन्दुलेखा घूमते हुए दिखाई पड रहे थे। उनकी सुधि लेनेवाला या उन्हें इस बीहड जगल मे रास्ता दिखानेवाला कोई नही था। राजकुमारी इन्दु-लेखा छोटे भाई के लिए फल लाने गई, सो वह भी नही लौटी। अजय जगल मे बहन को खोजता फिर रहा है, इसके बाद उसे घूमते-घूमते एकाएक नदी किनारे इन्दुलेखा की लाश मिली। भूख के कारण जहरीला फल खाकर इन्दुलेखा मर गई थी। इसपर अजय का करुण रस से भरा हुआ गाना शुरू होता है, जिसका अर्थ यह है कि प्राण-प्रिय, प्राणसाथी, तू मुझे इस बीहड जंगल मे-छोडकर कहा चली गई। अपू तब तक बडी-बडी आखें खोलकर सब कुछ देख रहा था पर अब उससे नही रहा गया, वह फफक-फफककर रोने लगा।

कलिंग राजा के साथ विचित्रकेतु की जो लडाई हुई उनमे तलवार

का क्या खेल दिखाया गया ! मालूम होता था कि अब कोई न कोई झाड गिर पडेगा या किसी अभागे दर्शक की गर्दन कटेगी। तजर्बेकार लोग आवाज़ देते हैं—'झाड सभालकर, बाधकर,' पर युद्ध का कौशल इतना विचित्र है कि सब कुछ बचा रहता है। विचित्रकेतु तुम धन्य हो !

बीच मे देर तक गाना और बेहाला की कसरत दिखाई जाती रही, उस समय पिताजी ने अपू को पुकारकर कहा . 'नीद आ रही है ? बेटा, घर चलोगे ?'

क्या मुसीबत है ? नींद ? यहा नीद कहा ? अरे राम राम ! वह हरगिज़ घर नही जाएगा। तब उसके पिता ने उसे बाहर बुलाकर कहा : 'यह दो पैसे रख लो कुछ खरीदकर खा लेना, मैं घर चला।'

अपू के मन मे इच्छा हुई कि वह एक पैसे का पान लेकर खाए। पान की दुकान के पास बहुत भीड देखकर वह आगे बढकर दंग रह गया। सेनापति विचित्रकेतु हथियारबन्द हालत मे ही बर्डसाई सिगरेट खरीदकर सुलगा रहे थे। उन्ही के चारो तरफ यह भीड जमा हो गई थी। आश्चर्य और परमाश्चर्य ! उधर से राजकुमार अजय ने कही से आकर विचित्रकेतु की कोहनी मे हाथ मारते हुए कहा : 'किसोरी भैया, एक पैसे का पान तो खिलाओ।'

पर राजकुमार के प्रति सेनापति की राजभक्ति का कोई लक्षण दिखाई नही पडा, उसने हाथ छुडाते हुए कहा . 'चल बे, पैसे नही हैं, तुम लोगो ने मिलकर उस वक्त साबुन लगाया, तो मुझे किसीने पूछा था ?'

फिर भी राजकुमार ने मचलकर कहा : 'किसोरी भैया, मान भी जाओ। क्या मैं तुम्हे कभी कुछ नही देता ?'

पर विचित्रकेतु हाथ छुडाकर चलता बना।

राजकुमार अपू का ही हमउम्र था। देखने-सुनने मे सुन्दर था और गाने मे भी बडा निपुण था। अपू मुग्ध होकर उसकी ओर घूरता रहा, उसके मन मे उससे बातचीत करने की तीव्र इच्छा हुई। अचानक न जाने उसमे कहा से हिम्मत आ गई और उसने आगे बढकर कुछ

शर्म के साथ कहा 'पान खाओगे ?'

अजय ज़रा अवाक् होकर बोला . 'तुम खिलाओगे ? तो लाओ ।'

दोनो मे परिचय हो गया । पर परिचय शब्द शायद गलत है । अपू मुग्ध और विभोर था । इसी को वह इतने दिनो से मन ही मन चाहता आ रहा है, इस राजकुमार अजय को । उसकी मा की सैकडो कहानियो के बीच, शैशव की सैकडो स्वप्निल मुग्ध कल्पनाओ के आवेश मे उसके प्राण ने इसीको चाहा है, - यही आखें, यही चेहरा, यही कठस्वर उसके काम्य रहे हैं । यह वही है जिसे वह चाहता है ।

अजय ने पूछा 'भाई, तुम्हारा घर कहा है ? मेरे खाने लिए एक घर तै किया गया है, पर वहा बडी देर मे खाना मिलता है । तुम्हारे घर मे कौन खाता है ?'

खुशी के मारे अपू का सारा शरीर हिलोरें लेने लगा, बोला . 'भई, हमारे यहा एक आदमी खाता है, अभी देखा कि वह ढोलकिया है । तुम भी कल से आना मैं आकर बुला ले जाऊगा । नही तो ऐसा हो जाएगा कि तुम जहा खाते हो वहा ढोलकिया खा लेगा ।

थोडी देर तक दोनो इधर-उधर चहलकदमी करते रहे, फिर अजय बोला · 'भई, मैं चलू, अन्तिम सीन मे मेरा गाना है, मेरा पार्ट तुम्हे कैसा लग रहा है ?

रात के अन्तिम पहर मे नौटकी खत्म हुई तो अपू घर पर आया । वह रास्ते मे आ रहा था, तो उसने जिसे भी बात करते सुना, उसे ऐसा मालूम हुआ कि नौटकी का ही वार्तालाप हो रहा है । घर आने पर दीदी ने पूछा 'अपू, तुझे नौटकी कैसी लगी ?'

अपू को ऐसा मालूम हुआ जैसे बीहड जगल के अन्दर राजकुमारी इन्दुलेखा ने कुछ कहा । उसपर कुछ नशा-सा छाया हुआ था । उसने खुशी के साथ कहा . मा, जो अजय बना था वह कल से हम लोगो के घर खाना खाएगा ।'

मा बोली 'दो जने खाएगे ? दो को कहा से ······

अपू बोला 'नही, एक चला जाएगा, सिर्फ अजय खाएगा ।'

दुर्गा बोली 'अपू, तुझे नौटकी कैसी लगी ? ऐसी कभी नहीं देखी न ? जब राजकुमारी मर गई, तो कैसा बढिया गाना हुआ ?'

अपू की तो ऐसी हालत थी कि अब वह नीद मे वेहाला सुन रहा था। वह देर तक सोता रहा और नींद भी अच्छी नही आई। सूर्य की तेज रोशनी आखो में सुई की तरह छिद रही थी। आख मे पानी दिया तो आखें जल रही थीं, पर उसके कानो मे अभी तक बेहाला, ढोल और मजीरे का सम्मिलित सगीत लहरा रहा था। उसे ऐसा मालूम हो रहा था जैसे वह अभी तक रगभूमि मे ही बैठा हो।

पनघट मे जाती हुई मोहल्ले की लड़किया आपस मे बातचीत करती जा रही थी। अपू को ऐसा मालूम हुआ कि इनमे से कोई धीरावती है तो कोई कलिग देश की महारानी है तो कोई राजकुमार अजय की मा वसुमती है। दीदी की हर बात मे तथा अंग सचालन में राजकुमारी इन्दुलखा की पूरी झलक थी। कल जो इन्दुलेखा बना था वह बुरा नही लगता था, पर उसके मन मे राजकुमारी इन्दुलेखा की जो मूर्ति विराजमान है, वह अपनी दीदी को लेकर है; उसी तरह का रग, रूप, वैसी ही बडी-बडी आखें, वैसा सुन्दर मुखड़ा और वैसे सुन्दर बाल।

उसे ऐसा ज्ञात होता था जैसे इन्दुलेखा अपनी सारी करुणा, स्नेह और माधुर्य लेकर उस प्राचीन देश के अतीत जीवन के बाद फिर उसकी दीदी बनकर लौट आई है, इसलिए इन्दुलेखा के बातचीत करने के ढंग तथा उसके हर कदम में मानो दीदी का ही प्रकाश होता था। जब उसके सामने वह दृश्य आया था जिसमे इन्दुलेखा ने घने जगल के अन्दर अपने नन्हे-से भाई को स्नेह से घेरकर रखा था और उसे खिलाने के लिए फल ढूढते हुए वीहड़ जगल मे खो गई, तो उसके मन मे माकाल फल वाली घटना ही बार-बार उदित हुई थी।

दोपहर के समय अपू जाकर अजय को खाने के लिए बुला लाया। दोनो के सामने खाना परोसकर सर्वजया अजय का परिचय आदि पूछने लगी। मालूम हुआ कि वह ब्राह्मण का लड़का है, उसका कोई नही है। मौसी ने उसे पाला-पोसा था। वह भी मर गई। एक साल से वह नौटकी के दल मे काम कर रहा है। उस लड़के पर सर्वजया की ममता उमड पडी और उसने उसे बार-बार और लो, यह खाओ, वह खाओ कहकर खिलाया। खाने की चीजें बहुत थोडी थी, फिर भी

लड़के ने बड़ी खुशी से खाना खाया। इसके बाद दुर्गा ने मा से चुपचाप कहा : 'मा, उसे कलवाला गाना गाने को कहो न, वही गाना—कहा छोड गए······

अजय ने गला खोलकर गाना गाया। अपू मुग्ध हो गया और सर्वजया की आखें नम हो गईं। हाय, हाय, ऐसे लड़के की मा नही है। इसके बाद उसने और भी गाने गाए।

सर्वजया बोली : 'शाम को चावल की लाई बनाऊगी उस समय आकर जरूर ही लाई खा जाना। शर्म न करना। जब खुशी हो आ जाया करो। इसे अपना ही घर समझो।'

अपू उसे साथ लेकर नदी के किनारे घूमने गया। वहा अजय ने कहा . 'भई, तुम्हारा गला बड़ा मीठा है, एक गाना सुना दो न।'

अपू के मन मे बड़ी इच्छा हुई कि वह इसके सामने गाकर यश लूटे, पर साथ ही सकोच लग रहा था कि यह नौटंकी मे काम करता है, इसके सामने कैसे गाना गाया जाए। नदी के किनारे बड़े सेमर के पेड़ के नीचे पगडंडियो से दूर वे दोनो बास की झाडी की आड़ मे बैठ गए। अपू ने बड़ी चेष्टा के बाद लज्जा छोड़कर एक गाना गाया—श्रीचरणे भार एक बार गा तो लो हे अनन्त [श्रीचरण का भरोसा एक बार उठ खड़े हो हे अनन्त !]

यह गाना दाशूराय की पाचाली का था। अपू ने इसे अपने पिता से सुनकर लिख लिया था। सुनकर अजय अवाक् रह गया बोला : 'भाई, तुम्हारा गला इतना अच्छा है ? तो तुम गाते क्यो नही हो ? और एक गाना सुनाओ।'

अपू ने प्रोत्साहन पाकर और एक गाना शुरू किया—खेयार आशे बसे रे मन डुबलो बेला खेयार घारे [खेवा की आस मे बैठा हू, अब घाट के किनारे दिन ढल रहा है।]

उसकी दीदी इस गाने को कही से सीख आई थी। इसका स्वर अच्छा लगा था, इसलिए उसने इसे सीख लिया था। घर पर जब कोई नही होता, तो कई बार दोनो मिलकर इस गाने को गाया करते हैं।

गाना समाप्त होने पर अजय ने उसकी तारीफ के पुल बाध दिए।

बोल 'ऐसा गला हो तो किसी भी दल मे तुम्हारी खुशामद करके पन्द्रह रुपया तनखाह देंगे, हां इसपर और सीखो तो सोने पर सुहागा हो जाए।'

घर पर जब कोई नही होता, तो दीदी के सामने गाना गाकर अपू ने कई बार उससे पूछा था : 'अच्छा दीदी यह तो बता कि मेरा गला कैसा है ?'

दीदी बराबर उसकी हिम्मत बधाती रहती थी, पर दीदी द्वारा की हुई प्रशसा चाहे जितनी आशाप्रद हो, आज नौटकी के दल के कई तम्गे जीते हुए उस्ताद ने जो उसकी तारीफ कर दी, तो वह बात ही कुछ और हुई। अपू प्रशसा सुनकर फूले नही समाया। बोला 'मुझे अपना वह गाना सिखा दो न'......

इसके बाद दोनो उस गाने को गाने लगे।

बडी देर हो गई। नदी पर छप-छप शब्द करती हुई नाव चल रही थी। नदी के किनारे पानी के पास कोई कुछ खोज रहा था। अजय ने पूछा . 'यह क्या खोज रहा है ?'

अपू बोला . यह मेढक का बच्चा खोज रहा है। बसी मे लगाकर मछली पकड़ेगा'—कहकर वह फिर बोला : 'अच्छा भाई, तुम हमारे यहा रह क्यो न जाओ ? अब कही न जाओ यही रह जाओ।'

ऐसी आखें और इतना मीठा गला। तिसपर वह अपू की आखो मे राजकुमार अजय भी है। किस जगल मे फिरते-फिरते असहाय, हतभाग्य, सुन्दर राजकुमार से उसकी एकाएक भेंट हो गई और दोस्ती भी हो गई। आजन्म मित्र ! अब उसे छोडा कैसे जाए ?

अजय ने भी अपने मन की बहुत-सी बातें कही। ऐसा साथी उसे और नही मिला था। उसने बताया कि उसने लगभग चालीस रुपये जमा किए है। कुछ और बडा होने पर वह इस दल को छोड देगा। अधिकारी मारता बहुत है। वह आशुतोषपाल के दल मे जाएगा, वहा बहुत मोज है, रोज रात को लूची खाने को मिलती है। न खाने पर तीन आना खुराक खर्च मिलता है। इस दल को छोडने के बाद वह फिर अपू के घर पर आएगा और कुछ दिनो तक रहेगा। शाम के कुछ पहले अजय ने कहा : 'चलो भाई, अब फौरन ही खेल शुरू

होगा, जल्दी लौटना चाहिए। जो 'परशुराम का दर्पसंहार' मेन हुआ तो मैं नियति बनूंगा, उसमे एक बढ़िया-सा गाना है।'

और भी तीन दिन नौटंकी होती रही। गाव वाले दिन-रात जब देखो तब इसी की बात करते थे। रास्ते मे, पनघट पर, मैदान में, गाव के मल्लाह नाव चलाते-चलाते, चरवाहे गाय चराते-चराते, नये गाने गुनगुनाते रहते थे। गाव की स्त्रिया नौटंकी दल मे काम करने-वाले लडको को घर पर बुलाकर उन गानो को सुनती थीं, जो उन्हें पसन्द थे।

अपू ने और भी तीन-चार गाने सीख डाले। वह एक दिन नौटंकी वाले जहा रहते थे, वहा अजय के साथ गया। वहा दल के लोगो ने उसे एक गाना गाने के लिए कहा। उन लोगो ने अजय से सुन रखा था कि वह बहुत अच्छा गाता है। बडी खुशामद के बाद अपू ने अपनी विद्या प्रकट करने के लिए एक गाना गाया। सब लोग उसे अधिकारी के पास ले गए। वहा भी उसे एक गाना सुनाना पडा।

अधिकारी एक काला-कलूटा तोंदियल आदमी था। दलपति होने के अतिरिक्त वह सबके साथ मिलकर तान दिया करता था। उसने अपू का गाना सुनकर कहा : 'मुन्ना, आओ न, तुम हमारे दल मे आ जाओ।'

अपू का हृदय आनन्द और गर्व से मानो उछल पडा, और भी लोगो ने उसे कहा कि तुम हमारे दल मे आ जाओ। अपू की इच्छा तो यह थी कि वह फौरन ऐसा करे। उसे इसी बात का आश्चर्य रहा कि इतने दिनों से वह इस छोटी-सी बात को नही जानता कि नौटकी मे काम करना ही मनुष्य जीवन का परम उद्देश्य है। उसने गुप्त रूप से अजय से पूछा 'अच्छा भाई, अगर मैं दल मे जाऊ तो मुझे क्या बनना पडेगा ?'

अजय बोला 'अभी सखी-वखी या बालक का पार्ट मिलेगा, इसके बाद अच्छी तरह सीखने पर......

पर अपू सखी बनना नही चाहता था। वह सिर पर जरीदार ताज रखकर सेनापति बनकर तलवार बाधना और युद्ध करना चाहता था। जब वह बडा होगा तो वह नौटकी के दल मे जाएगा, वहीं

उसके जीवन का लक्ष्य है। अजय ने उसे चुपके से कसौटी के रंग के एक लडके को दिखाते हुए कहा : 'इसका नाम विष्णु तेली है। मुझसे इसकी बिलकुल नही बनती । मैं अपने पैसे से खरीदी हुई दियासलाई तकिए के नीचे रखकर सोता हू, यह चुरट पीने के लिए वहा से दियासलाई तराट कर देता है, फिर देने का नाम नही लेता। मैं उससे कहता हू, भई रात को डर लगता है, दियासलाई दो। अधेरे में दिल धुकुर-पुकुर होता है, इसलिए मैंने उस दिन दियासलाई मागी तो इस दुष्ट ने मुझे एक तमाचा मारा । यह अच्छा नचैया है, इसलिए अधिकारी इसे बहुत मानता है, कुछ कह भी नही सकता।'

कोई पाच दिन बाद नौटको का काम खत्म होने पर दल रवाना हो गया। अजय घर के लडके की तरह जब-तब अपू के घर इस प्रकार आता-जाता था, मानो वह अपू का भाई ही हो। वह अपू की उम्र का था और साथ ही अनाथ था यह जानकर सर्वजया ने इन दिनो उसके साथ अपू की तरह स्नेहपूर्ण व्यवहार किया था। दुर्गा भी उसे अपने भाई की तरह मानती थी; उससे गाने सीखे, उसे कहानिया सुनाईं, उसे फूफी की बात बताईं। तीनो मिलकर आगन मे बड़ा-सा घर खीचकर गगा-यमुना खेले हैं। जब वह खाने आता था, तो उसे सब लोग और लो, कहकर खिलाते थे। वह नौटको के दल मे रहता था, उसे न तो कोई देखनेवाला था और खाने-पीने की देखभाल करनेवाला। शायद जब से वह पैदा हुआ, तब से उसे घरेलू स्नेह का स्पर्श मिला ही नही, इसलिए अप्रत्याशित रूप से स्नेह का स्वाद पाकर वह लोभी की तरह उससे अलग नही होना चाहता था।

वह जाते समय एकाएक अपनी कष्टसचित रकम की थैली मे से पाच रुपए निकालकर सर्वजया के हाथ मे देने लगा। साथ ही ज़रा लजाकर बोला . 'दीदी की शादी मे इन पाच रुपयो से एक अच्छी-सी साड़ी ...

सर्वजया बोली : 'नही, बेटा नही। तुमने कह दिया और हमे मिल गए। तुम्हें इस समय रुपयो की ज़रूरत है. ब्याह-शादी करके घर बसाना।'

फिर भी वह नही मान रहा था। बहुत समझाने पर ही उसे

मनाया जा सका।

इसके बाद सभी घर से कुछ दूर तक उसके साथ गए। जाते समय वह बार-बार कह गया . 'दीदी की शादी के समय मुझे पत्र जरूर दिया जाए।'

शरीफे के पेड के नीचे की छाया मे उसकी सुकुमार बालमूर्ति भाट-सॅवडा झाडी की आड मे अदृश्य हो गई। उस समय सर्वजया को ऐसा मालूम हुआ कि वह निरा बच्चा ही है, और इस उम्र में इसे अपना पेट पालना पडता है। कही अपू को भी ऐसा करना पड़ता। अरे बाप-रे! सोचते भी नही बनता!

१३

जब पहले-पहल हरिहर काशीजी से आया था, तब सभी कहा करते थे कि उसका भविष्य बडा उज्ज्वल है, क्योकि इस इलाके मे इतनी अधिक विद्या किसीने नही सीखी। सब उसकी विद्या की प्रशसा करते थे। सब यह कहा करते थे कि वह अब कुछ करने ही वाला है। सर्वजया भी सोचती थी कि जल्दी ही ये लोग उसके पति को बुलाकर एक अच्छी-सी नौकरी दे देंगे। (कौन लोग नौकरी देते हैं, इस सम्बन्ध मे उसकी धारणा कुहासे से घिरे समुद्र की तरह अस्पष्ट थी।)

महीने के बाद महीने और साल के बाद साल निकलते चले गए, परन्तु आधी रात के समय जरी की वर्दी पहने हुए कोई घुडसवार उसे राजपुरोहित बनाने का परवाना लेकर नही आया और न अलिफ लैला का कोई दैत्य उनकी टूटी मडैया की जगह मणि माणिक्य खचित हवेली ही बनाकर छोड़ गया, बल्कि जो घर था उसके दरवाजे के कीडे खाए हुए पल्ले दिन-ब-दिन और पुराने हो चले, शहतीरें और भी झुकने लगी। पहले जो थोडा-बहुत था, उसे भी कायम रखना दुश्वार हो रहा था फिर भी उसने आशा बिलकुल नही छोडी। हरिहर जब भी प्रवास से लौटता था, तो हर बार वह कोई ऐसी आशा-भरी बात कह देता था मानो सब कुछ ठीक है, थोडी-सी देर-भर है, फिर तो आनन्द ही आनन्द रहेगा। पर ऐसा हुआ कहा?

जीवन मधुमय इसीलिए तो है कि उसकी मधुरता एक हद तक स्वप्न और कल्पना पर आधारित होती है। स्वप्न भले ही झूठा हो, कल्पना मे भले ही वास्तविकता का पुट न हो, भले ही उनके पीछे कोई सार्थकता न हो, पर वे ही जीवन की श्रेष्ठ सम्पदा हैं; वे आते जाए और जीवन का उनका सम्बन्ध अक्षय हो ! सार्थकता तो तुच्छ है, लाभ कुछ भी नही है।

हरिहर घर से लगभग दो-तीन महीने से बाहर गया हुआ था। बहुत दिनो से उसने रुपये-पैसे नही भेजे थे। दुर्गा कुछ ज्यादा बीमार है। दो-चार दिन अच्छी-भली रहती है, फिर बीमार पड़ती है, फिर दो-तीन दिन कुछ अच्छी रहती है, फिर बीमार पड़ जाती है।

सर्वजया लड़की की शादी के लिए अपने पति से अक्सर तकाजे किया करती थी। उसने अपने पति से नीरेन के पिता राज्येश्वर बाबू को दो-तीन पत्र लिखाए थे। अभी उसने उधर की आशा नही छोड़ी। हरिहर कहता था 'क्या तुम सनक गई हो ? बड़े लोगो का ऐसा ही होता है। राज्येश्वर चाचा अब हमे क्यो पूछने लगे ?'

फिर भी सर्वजया पीछे पडी रहती थी, कहती थी : 'लिखकर देख तो लो, एक पत्र और लिखो, नीरेन तो लड़की को पसन्द कर ही गया है।'

एक-दो महीने निकल जाते हैं, पर कोई जवाब नही आता, फिर वह पति को पत्र लिखने के लिए तकाजा करना शुरू कर देती है।

अबकी बार जब हरिहर प्रवास मे जा रहा था, तब वह कहता गया था कि इस बार वह यहा से चलकर कही और बसने का पक्का बन्दोबस्त कर ही आएगा।

मोहल्ले के एक किनारे लिपे-पुते फूस के दो-तीन कमरे। गोशाला मे मोटी-ताज़ी दूधवाली गाय बंधी हुई है, चारे से गोदाम भरा हुआ है, खलिहान मे धान भरा हुआ है। मैदान के किनारे मटर की फली के खेत की ताजी हरी महक हवा से आगन मे फैलती जाती है। चिड़िया चहकती हैं, नीलकठ, बया, श्यामा। अपू सवेरे उठकर मिट्टी के सकोरे मे ताज़ा झागदार गर्म दूध के साथ लाई खाकर पढ़ने के लिए बैठ जाता है। दुर्गा मलेरिया से बीमार नही है। सभी जानते-

मानते हैं, आकर पालागि करते हैं, गरीब जानकर अवज्ञा नही करते।

यही स्वप्न है, इसीको सर्वजया दिन-रात देखा करती है, उसे ऐसा मालूम होता है कि इतने दिनो के बाद कुछ न कुछ होकर ही रहेगा। मन के अन्दर से जैसे इसी बात की आवाज आती रहती है।

इतने दिनो तक क्यो यह बात नही हुई ? क्यो इतने दिनो के बाद यह होने जा रही है ? बचपन के दिनो मे जामुन और महजन के नीचे घूमते समय सन्ध्या की आल्पना बनाने के मन्त्र के साथ यह साध उनके मन मे बराबर रही है कि लक्ष्मी के आलता लगे हुए पैरो के चिह्न से अकित आगन मे वह ससुराल मे गृहस्थी जमाएगी। उसने इस तरह की टूटी मडैया और बास की झाडिया कब चाही थी ?

दुर्गा कही से एक छोटी-सी मानकचू[1] लाकर रसोईघर मे धरना देकर बैठी थी। मा ने कहा 'दुर्गा, तू कहती क्या है ? आज तू भात कैसे खा सकती है ? कल साझ को भी तो बुखार से थोक रही थी।'

दुर्गा ने कहा 'यह बुखार थोडे ही था। बस कुछ जाडा लग गया था। तुम यह मानकचू उबालकर जरा भात' '

मा बोली 'जब से बीमार रहने लगी तब से तू बहुत चटोरी हो गई है। जो तू आज और कल दो दिन ठीक रहेगी, तो परसो भात खाने को मिलेगा।'

जब बहुत निहोरा करने के बाद भी मा राजी नही हुई, तो दुर्गा ने मानकचू उठाकर रख दी। वह कुछ देर चुपचाप बैठी रही, अपने से कहने लगी—आज मैं बहुत अच्छी हू, बुखार नही आने का ! उस जून दो रोटिया और आलू भाजा खाऊगी।

थोडी देर मे उसे जमुहाई आने लगी, वह जानती थी कि यह बुखार आने का पूर्व लक्षण है, पर वह मन को समझाती है, आने दो जमुहाई, ऐसे भी तो जमुहाई आती है, बुखार अब नही आने का। धीरे-धीरे जाडा बढने लगता है, चलकर धूप मे बैठने की इच्छा होती है। वह धूप मे न जाकर अपने मन को समझाती है कि जाडा लगना एक मामूली बात है, बुखार आने के साथ भला इसका काहे का

---

१. ऊचे दर्जे की एक प्रकार की अरवी।

गठबन्धन ?

पर कोई तसल्ली काम नही आती। धूप अभी ढल नही पाती और बुखार आ जाता है। वह छिपककर धूप मे जाकर बैठती है कि कही मा को मालूम न हो जाए। उसका मन हाहाकार से भर जाता है; सोचती है, बुखार की बात सोचते-सोचते ऐसा हुआ है, असल में उसे बुखार नही है।···

लाल धूप सेवार लगी हुई टूटी दीवार पर पडती है। शाम की छाया घनी होती है। दुर्गा सोचती है कि यदि वह मन को बुखार से हटा ले, तो बुखार चला जाएगा। अपू से कहती है : 'जरा मेरे पास तो बैठ। चल, हम लोग कहानिया कहें।'

आजकल पिताजी घर पर नही हैं, इसलिए अपू का पता मुश्किल से मिलता है। किताबो के बस्ते मे दीमक लगने को हो गई है। सवेरे-सवेरे वह कौडियो की एक झोली लेकर निकल पड़ता है, फिर तो दोपहर के समय खाने के लिए ही आता है। मा नाराज होती है, डाटती है : 'जाने कहा का लडका है, पढना-लिखना एकदम छूट गया। अब के घर लौटें तो सारी बात बता दूगी, फिर तुम देखना···

अपू डरते-डरते बस्ता लेकर बैठता है, पुस्तकों को खूब इधर-उधर फैलाता है। मा से कहता है : 'मां, जरा कत्था दो, मैं दवात की स्याही मे डालूगा।'

इसके बाद वह उठकर सुलेख लिखता है और उसे सुखाने के लिए धूप मे रख देता है। जब वह सूख जाता है तो कत्था पड़ी हुई स्याही चमकती है। अपू बडी खुशी से उस तरफ ताकता रहता है। वह मन ही मन तय करता है कि कल थोड़ा और कत्था डालूगा, कितना सुन्दर चमकता है। फिर वह पानदान से मा से छिपाकर कत्थे का बडा सा टुकडा दवात मे डाल देता है। बाद मे उसी स्याही से सुलेख लिखकर उसकी तरफ देखता रहता है कि अब चमका और अब चमका। फिर सोचता है कि कत्थे की मात्रा और बढा दूगा।

एक दिन मा ने उसकी चोरी पकड ली। मा बोली : लिखने-पढ़ने के नाम पर तो सिफर है और रोज-रोज कत्थे की डली लेकर खराब करता है। रख दे डली।'

रगे हाथो पकडे जाने पर झेंपते हुए अपू ने कहा . 'कहीं कत्थे के बिना भी स्याही बनती है ? मैं कत्था ऐसे थोडे ही लेता हू !'

—नही, कत्थे के बिना कहा स्याही बनती है ? दुनिया-भर के लडके पढते-लिखते हैं, उन्ही के लिए तो दुकानो में मनों कत्था जमा है ना · चल यहा से।

अपू बैठे-बैठे एक कापी पर नाटक लिखता है। उसने लिख-लिखकर लगभग एक कापी भर डाली है। कहानी इस प्रकार है कि मत्री के विश्वासघात के कारण राजा राज्य छोडकर जगल में जाते हैं। राजकुमार नीलाम्बर और राजकुमारी अम्बा जगल के अन्दर डाकुओ के हाथ पडते हैं, इस पर घमासान युद्ध होता है, बाद में राजकुमारी की लाश नदी किनारे मिलती है। नाटक मे सतू नाम से एक जटिल चरित्र की सृष्टि होती है, जो थोडी देर बाद ही बिना किसी प्रकार का भयकर अपराध किए ही प्राणदण्ड से दण्डित होता है। नाटक के अन्त मे राजकुमारी अम्बा नारद के वर से फिर से जिन्दा हो जाती है और विश्वासपात्र सेनापति जीवनकेतु के साथ उसकी शादी हो जाती है।

नाटक की इन घटनाओ को देखकर यदि कोई यह कहे कि विगत बैसाख महीने में जो नौटकी हुई थी, उससे यह नाटक नामो के अलावा और किसी रूप मे भी भिन्न नही है या उसीसे इसका कथानक हू-ब-हू उडाया गया है, तो वह यह भूल जाएगा कि अतीत युग की किसी नीरव ज्योत्स्नामयी रात्री मे लगभग बुझे हुए दीपक वाले सुनसान कमरे मे शैया पर लेटा हुआ एक प्राचीन कवि नीले मेघो को देखकर मोरो की गूजती हुई दूर वनभूमि का स्वप्न देख सकता है, यदि कालिदास इतने ही से मुक्त मेघ के वर्णन के लिए अनुप्राणित हो सकते हैं, तो आश्चर्य क्या है ? क्या मनुष्य उस भूली हुई शुभ यामिनी को अपने अनजान मे हजार वर्षों से वन्दना करता आ रहा है ?

ज्योत से ही ज्योत जलती है। कही राखो के ढेर मे कोई मशाल जलाकर भी लगा दे तो उससे आग थोडे ही लगती है ?

बस्ते मे एक पुस्तक है जिसका नाम है 'चरितमाला'। इसपर

लिखा है—ईश्वरचन्द्र विद्यासागर। पुरानी पुस्तक है। हरिहर को अपने लडके के लिए पुस्तकें एकत्र करने का मर्ज है। कही से वह यह पुस्तक ले आया था। अपू बीच-बीच में इसे पढता है। पुस्तक में जिन लोगो की बात लिखी है, अपू उनकी तरह होना चाहता है। किसान का लडका रस्को अब आलू बेचने के लिए बाजार मे भेजा जाता था तो वह मेड पर बैठकर बीजगणित का अध्ययन करता था। कागज नही था, इसलिए वह भोथरी नोक से चमड़े पर हिसाब लगाया करता था। चरवाहा ड्यूवाल अपनी भेडो को इधर-उधर भटकने देता था और पेड़ के नीचे बैठकर भूगोल पढा करता था।

अपू भी इन लोगो की तरह बनना चाहता है, पर यह बीजगणित क्या बला है ? वह रस्को की तरह बीजगणित पढना चाहता है, उसे न तो सुलेख लिखना पसन्द है, न पहाडा घोखना और न शुभकरी से हिसाब लगाना। वह उसी तरह पेड़ के नीचे बैठकर सन्नाटे मे, जगल की छाया मे या मेड पर बैठकर भूगोल (यह कौन-सी चिडिया है ?) पढ़ना चाहता है। वह बड़ी-बड़ी पुस्तकें पढेगा और पडित बनेगा, पर वह इन चीजों को कहा से पाए ? भूगोल या बीजगणित कहा मिल सकते हैं और लैटिन का व्याकरण ? यहा तो बस कौड़ियो का हिसाब लगाते जाओ और पहाड़े घोखो।

मा नाराज होती है, पर वह क्या करे ? वह जो कुछ पढना चाहता है, वह तो यहा है ही नही।

१४

कई दिनो से खूब पानी पड रहा था। अन्नदाराय के चौपाल मे सन्ध्या समय अड्डा जमता था। नील की कोठी की कहानी से शुरू करके जगन्नाथपुरी के किस मन्दिर के कंगूरे पर पाच मन वजन का चुम्बक लगा है, जिसके खिचाव के कारण पास के समुद्र मे चलनेवाले जहाज अक्सर पथभ्रष्ट होकर किनारे के चट्टान से टकराकर चूर-चूर हो जाते थे, इत्यादि विचित्र कहानिया अलिफ लैला की कहानियो से मानो होड लगाकर कही जाती थी। सुननेवालो मे कोई

उठना नही चाहता था। भला ऐमी अद्‌भुत कहानियो को छोटकर कौन घर जाए ? उस दिन भूगोल मे बहते-बहते कहानियों की धारा जल्दी ही ज्योतिष मे पहुच गई। दीनू चौधरी ने कहा : 'भृगुसंहिता की तरह नायाब पुस्तक कही नही है। बस जन्म की राशिभर बता दो, पिता का नाम, किस कुल मे तुम्हारा जन्म है, तुम्हारा भूत-भविष्य सब बता दिया जाएगा। मिलाकर देखो तो ग्रह और राशिचक्र सब उसमे दिया हुआ है। यहा तक कि तुम पिछले जन्म में क्या थे यह भी जान लो।'

सब लोग बडे चाव से सुन रहे थे, इतने मे राममय ने एकाएक बाहर की तरफ देखते हुए कहा: 'नही अब चला जाए, वरना इनके बाद तो जाना भी असम्भव हो जाएगा। देख नही रहे हो ? देव कुपित है। कही कोई आधी-बाधी न आए तो गनीमत है। लच्छन बडे खराब है। चलो भई चलो।'

पानी बराबर पड रहा था। कभी कुछ मद्धिम पड जाता था, तो फिर तेज हो जाता था। पानी की उल्टी-सीधी धारो के मारे चारो तरफ धुआ ही धुआ मालूम हो रहा था।

हरिहर ने सिर्फ पाच रुपये भेजे थे। न उसके बाद कोई चिट्ठी आई और न रुपए ही ! उसके बाद भी बहुत दिन निकल गए। रोज सवेरे उठकर सर्वजया सोचती थी कि आज जरूर पैसे आएगे। लडके से कहती थी : 'तू मारा-मारा फिरता रहता है, इसलिए देख नहीं पाता। तू लैटरबक्स के पास बैठे रहना, जब डाकिया चिट्ठी निकालने आएगा तो उससे पूछना।'

अपू बोला : 'वाह, मैं कोई बेखबर थोडे ही रहता हू। कल भी तो पूटी के घर पर चिट्ठी आई और हम लोगो का अखबार आया। जरा पूटी से पूछ तो लेना। जो डाकिया नही आया तो कल अखबार कैसे आया ? मैं डाकिया की टोह मे नही रहता, तो फिर मुझे यह सब पता कैसे लगता है ?'

वर्षा जोरो से शुरू हो गई थी। अपू मा की बात मानकर अन्नदाराय के चौपाल मे डाकिये की बाट देखता रहता है। साधु कर्मकार के मकान के छप्पर से कबूतरो के झुड भीगते-भीगते पर

फड़फडाते हुए राय वडी के पछाह वाले कमरे के कानिस पर बैठते हैं। अपू उन्हे घूर घूरकर देखता है। उसे वादलो की गडगड़ाहट में बहुत डर लगता है। विजली चमकने पर वह मन ही मन सोचता है कि अब विजली चमक रही है, अभी वादल गरजेगा, यह सोचकर वह आख वन्द करके कान मे उगली डाल लेता है। वह झट लौटकर देखता है कि मा और दीदी ने घटो भीगकर अरूई के ढेर-से पत्ते सहन मे इक्ट्ठे किए हैं।

अपू ने कहा: 'मा कहा से लाई हो ? बहुत हैं !'

दुर्गा ने हसकर कहा 'तू तो खूब मौज उडाता है। यहा हम लोग तो जामुन के नीचे वाले पोखर में घुटने-घुटने-भर पानी मे··· और तू मटरगश्ती मे ··'

सवेरे पनघट पर नाइयो की वहू से भेंट हो गई। सर्वजया ने कपडे के अन्दर से फूल की एक तश्तरी निकालते हुए कहा: 'यह देखो, वह चीज़ है। बहुत अच्छी है। विलकुल असली कासा है। यह हमारी शादी की चीज़ है, आजकल कह चीज़ मिलती नही।'

बहुत मोल-भाव के बाद नाइयो की वहू ने आचल से खोलकर एक अठन्नी दे दी और फिर तश्तरी को आचल मे छिपा लिया।

सर्वजया ने वार-वार कहा . 'वहू, किसीसे कहना नही।'

दो-एक दिन मे तेज़ वर्षा शुरू हुई। पुरवैया हाहाकर करती हुई चलने लगी। जहा भी छोटे-वडे गडहे थे, वे लवालव भर गए। कच्ची सडक पर घुटने तक पानी था। वास की झाड़ी मे दिन-रात आधी की साय-साय वनी रहती थी। जहा-तहा बास मिट्टी मे लोट रहे थे। आसमान मे वादलो के बीच कही कोई दरार नही थी। बीच-बीच मे कुछ समय के लिए अन्धेरा गहरा हो जाता था। काले-काले बादल मनमाने ढग से उडते हुए पूरव से पश्चिम जा रहे थे, जैसे दूर आकाश मे देवताओ और असुरो मे महा सग्राम छिडा हुआ हो और किसी कुशल सेनापति के परिचालन मे दैत्यो की विराट सेना अक्षौहिणी के बाद अक्षौहिणी जल, थल और अन्तरिक्ष पर छाकर अदृश्य रथी और महारथियो के नेतृत्व मे आधी की तेज़ी से आगे वढ रही हो। उधर देवताओ की सेना जलते हुए वज्र छोडकर पलक मारते ही

इस विशाल काली सेना को छिन्न-भिन्न किए दे रही थी, पर यह ठहरा रक्तबीज का वंश; वह तिसपर भी नष्ट नही होती थी और बादलो की कराल काली छाया पृथ्वी और अन्तरिक्ष को अन्धकारमय बना रही थी।

भयंकर तूफान जारी था।

रात-दिन साय-साय और गडगडाहट। नदी का पानी बढ गया था। कितने ही घर-द्वार जगह-जगह बैठ रहे थे। नाले तो पानी के मारे आपस मे मिलकर एकाकार हो रहे थे। गाय-बछडे पेडो के नीचे बास के जगल मे, मकानो के सहन मे खडे-खडे बुरी तरह भीग रहे थे। चिडियो का चहचहाना कही सुनाई नही पडता था। इसी प्रकार मुसीबत मे चार-पाच दिन कट गए। आधी-पानी की पटपट, साय-साय, सन्‌सन्‌ और मूसलाधार वर्षा।

अपू सहन मे आकर जल्दी-जल्दी भीगा हुआ सिर पोछते-पोछते बोला 'दीदी हमारे बासो की झाडी मे पानी भर गया है देखने चलोगी ?'

दुर्गा कथडी ओढे पडी थी, बिना उठे ही बोली 'कितना पानी है रे ?'

अपू बोला . तेरा बुखार उतर जाए तो कल देख आना। उसकी के नीचे वाली पगडडी पर घुटना-भर पानी है।'

बाद मे उसने पूछा : 'मा कहा है ?'

घर मे एक दाना भी नही था। बस थोडे-से बासी भुने चावल-भर थे। अपू इसपर रो पडा, बोला इससे काम नही चलने का। क्या मुझे भूख नही लगती ? मैं थोडा भात खाऊगा ! ऊ—ऊ'

मा ने कहा : 'मेरा राजा बेटा, ऐसा नही करते। मैं भुने चावल मे तेल-नमक डाल दूगी। इस वक्त मैं पका कैसे सकती हू। देख नही रहे हो कि किस तरह सारी चीजें गीली हो रही है। चूल्हे मे भी पानी भरा पडा है।'

बाद मे सर्वजया ने कपडे के अन्दर से कुछ निकालकर हसते हुए कहा 'यह देख एक कोई मछली है। बास की झाडी के नीचे कातो के बल चल रही थी बाढ के पानी से नदी से आ गई है। दसोज्योना

का गढा और नदी दोनो मिलकर एक हो गए हैं न ? इसीलिए यह मछली भटककर आ गई ।'

दुर्गा अवाक् होकर कथडी फेंककर उठ बैठी, बोली : 'मां, देखू ज़रा मछली । 'अच्छा, मा यह मछली कान पर रेंगकर चलती है ? और है या एक ही ?···

अपू सारी वात सुनकर मछली ढूढने के लिए पानी मे ही दौड पडनेवाला था, बडी मुसीवत से मा उसे रोक पाई ।

दुर्गा बोली 'बुखार ज़रा उतर जाए तो अपू चल, कल सवेरे तू और मैं वास की झाडी से मछली ढूढ लाएगे ।'

वाद मे वह अवाक् होकर सोचने लगी—वांस की झाडी मे मछली ! कैसे आई ? वाह ! मा ने अच्छी तरह थोडे ही ढूढा होगा । ज़रूर वहा और भी मछलिया होगी । मैं यह देखने से रह गई कि कोई मछली कान पर रेंगकर कैसे चलती है । कल सवेरे देखूगी । सवेरे बुखार ज़रूर ही उतर जाएगा···

चारो तरफ के जंगल और वागो को अपने आचल से ढककर सन्ध्या उतरी । बादल और त्रयोदशी के अंधेरे मे सारी सृष्टि डूवी हुई थी । दुर्गा जिस विस्तरे पर लेटी थी उसीपर एक तरफ अपू और मा भी बैठे थे । सर्वजया सोच रही थी कि आज कही नीरेन बेटा का पत्र आ जाता, तो बहुत अच्छा रहता । पर पता नही ऐसा हो भी सकता है या नही । नीरेन तो पसन्द ही कर गया है, अव पता नही तकदीर मे क्या है ? नही, ऐसी वात हमारी तकदीर में कहा लिखी होगी ? जो तकदीर ऐसी ही होती, तो चिन्ता काहे की थी।

वहुत रात बीतने पर सर्वजया की नीद टूट गई । अपू पुकार रहा था . 'मा, ओ मा उठो, मुझपर पानी टपका पड रहा है ।'

सर्वजया ने उठकर जल्दी से वत्ती जलाई। बाहर पानी पडने की भयकर आवाज़ हो रही थी । फूटी छत के कमरे मे हर जगह पानी टपक रहा था। उसने विस्तरा हटाकर बिछा दिया । दुर्गा बुखार के मारे बेसुध पडी थी । मा ने उसे टटोलकर देखा तो उसकी कथडी बुरी तरह भीग गई थी । वह पुकारकर वोली : 'दुर्गा, ओ दुर्गा, सुन रही है ? जरा उठो तो, विस्तरा हटा लू ! ओ दुर्गा, दुर्गा,

जल्दी कर, एकदम भीग गया।'

लडका और लडकी दोनो सो रहे थे, फिर भी सर्वज्या को नीद नही आ रही थी। अंधेरी रात और तिसपर इतनी भरकर वर्षा! उसका मन शकित हो रहा था। ऐसा मालूम हो रहा था जैसे कोई बात···कोई बात होने ही वाली है। भीतर ही भीतर बडी अद्भुत भावना हो रही थी। सोच रही थी कि आखिर उस आदमी का हुआ क्या। रुपये न आए न सही, पर चिट्ठी तो आए। ऐसा तो कभी नही हुआ था। उनकी तबीयत तो ठीक है न? माता सिद्धेश्वरी, सवा पाच आने का भोग लगाऊगी, अच्छी खबर मगा दो।

अगले दिन सवेरे पानी कुछ थम गया। सर्वजया ने घर से निकलकर देखा कि बास की झाडी के अन्दर का गढा पानी से भर गया है। पनघट के रास्ते निवारण की मा भीगते-भीगते कही जा रही थी। सर्वजया ने उसे पुकारकर कहा 'निवारण की मा, सुनो'—फिर कुछ लजाकर बोली 'तूने एक बार कहा था कि अपने लडके के लिए वृन्दावनी चादर लूगी, सो लेगी?'

निवारण की मा बोली 'तुम्हारे पास है? जरा पानी रुकने दो, अभी मैं अपने लडके को साथ मे ले आऊगी। मालकिन, चादर नई है या पुरानी···'

सर्वजया बोली 'तू अभी आकर देख न जा। रखे-रखे पुरानी हो गई है, पर किसीने कभी ओढी नही। धुली रखी है'—कहकर कुछ रुकते हुए बोली 'आजकल तू धान नही कूट रही है?'

निवारण की मा बोली: 'ऐसे आधी-पानी मे मालकिन धान सूखता कब है? खाने के लिए थोडे-से चावल रख लिए है।'

सर्वजया बोली 'एक काम जरा कर दे, मुझे आधा काठा[1] चावल दे जा···' फिर जरा पास आकर मिन्नत के स्वर मे बोली 'पानी के मारे बाजार से चावल मगा नही पा रही हू, रुपया लेकर घूम रही हू कि कोई राजी हो जाए। बडी मुश्किल मे हू।'

निवारण की मा राजी हो गई। बोली 'मैं लेकर आऊगी पर मालकिन, आप उस घटिया धान का भात खा सकेंगी? बहुत ही मोटा है।

---

१. एक नाप।

अब दुर्गा से नीम की छाल का काढा पिया नही जाता। उसकी बीमारी ज्यो की त्यो है। न दवा-दारू है. न डाक्टर है न वैद्य है, बस घरेलू काढा है। बोली 'मा एक पैसे का नमकीन विस्कुट मगा दोगी ? बहुत अच्छा लगेगा।'

—साबूदाना ही नही जुटता तो बिस्कुट···

शाम से फिर तेज पानी पडने लगा। पानी के साथ-साथ आधी भी चलने लगी। वर्षा के कारण चारो तरफ सन्नाटा था, सर्वत्र पानी भरा हुआ था और तेज पुरवैया चल रही थी। बादल कहा समाप्त हुए और अधेरा कहा शुरू हुआ, यह भादो की इस सध्या मे पता नही लग रहा था। फिर उसी तरह धुनी हुई काली रुई के ढेरो की तरह बादल उडते हुए चलते थे। वर्षा के पटपट शब्द से कान बहरे हो जाते थे। दरवाजा, जगला या जहा भी सास है, ठडी हवा के साथ-साथ पानी घुस पडता था। टूटा हुआ दरवाज़ा, यद्यपि उसमे जहा-तहा फटा टाट और चीथडे ठूसे गए थे, कब तक आधी-पानी के भयकर आक्रमण के सामने खडा रहता।

जब रात अधिक हो गई और सब लोग सो गए, तो वर्षा और तेज हो गई। सर्वजया को नीद नही आ रही थी, वह बिस्तरे पर उठ बैठी। बाहर लगातार पानी पडने की आवाज आ रही थी। रुष्ट दैत्य की तरह गरजती हुई आधी ने मकान को घेर रखा था। यह पुराना मकान रह-रहकर जैसे थरथर काप उठता था। सर्वजया डर के मारे बहुत परेशान हो रही थी। गाव के एक किनारे बास की झाडी मे छोटे-छोटे बच्चो को लेकर वह असहाय पडी थी। वह मन ही मन बोली : ठाकुरजी, मैं मरू तो इससे कुछ आता-जाता नही, पर इनका क्या करू ? इतनी रात को कहा जाऊ ?'

वह बैठकर सोचने लगी कि अच्छा, यदि यह मकान गिरा. तो शायद दालान वाली दीवार ही सबसे पहले गिरे, ज्योही उसके गिरने की आवाज होगी त्योही उधर के दरवाजे से इन्हे खीचकर ले जाऊगी।

अब उससे बैठा भी नही जाता था। कई दिनो से वह जमीकन्द और अरवी की पत्तिया उबालकर खा रही थी। स्वय उपवास कर रही थी और जो कुछ खाना था उसे बच्चो को खिला रही थी।

चिन्ता तथा अनाहार के कारण शरीर दुर्बल हो रहा था, सिर मे जाने कैसा दर्द हो रहा था।

साय-साय आधी चल रही थी। बहुत रात होने पर और ज़ोर से आधी चलने लगी। बाहर कुछ झटका-सा मालूम हुआ। अब क्या करे ? आधी के एक झकोरे से डरकर वह आधी का रुख जानने के लिए दरवाज़ा ज़रा-सा खोलकर सम्भलकर खडी हो गई। उसने मुह बढाकर देखा, तो बौछार से बाल और कपडे भीग गए। हवा की इकरस साय-साय चल रही थी पर पानी की पटपट के मारे उसकी आवाज़ दब गई थी। बाहर कुछ दिखाई नही पड रहा था। अधेरा, बादल, आसमान, पेड-पालो—सब एकाकार हो रहे थे। आधी-पानी के कारण कुछ सुझाई नही पड रहा था।

आतक के मारे सर्वजया ने दरवाज़ा बन्द कर दिया। जो इस समय कुछ भीतर आ जाए तो ? क्या मनुष्य भी अन्य प्राणियो की तरह एक जानवर-मात्र है ? चारो तरफ बास की घनी झाडिया और जगल था। दूर तक बस्ती नही थी। बाप रे बाप ! पानी की बौछार से कमरा भर रहा था। उसने हाथ लगाकर देखा कि अपू बुरी तरह भीग गया है। अब वह क्या करे ? कितनी रात और बाकी है ?

उसने बिस्तरा टटोलकर दियासलाई निकाली और फिर मिट्टी के तेल की कुप्पी जला ली। बोली 'अरे अपू, उठ तो। अपू, तू सुन रहा है ? ज़रा, उठ।'

फिर दुर्गा से बोली 'दुर्गा, करवट तो बदल ले। बहुत पानी पड रहा है। ज़रा हटकर लेट। इधर !...'

अपू उठ बैठा और उनीदी आखो से इधर-उधर देखकर फिर सो गया। एकाएक किसी भारी चीज़ के गिरने का धमाका हुआ। सर्व-जया ने जल्दी से दरवाज़ा खोलकर बाहर झाका तो देखा कि बास की झाडी के तरफ वाला हिस्सा कुछ दिखाई पड रहा था। अच्छा तो रसोईघर की दीवार गिर पडी। वह एक बार काप उठी। अब पुराने मकान की बारी है। अब वह किससे मदद मागे। मन ही मन बोली 'ठाकुरजी, किसी तरह आज की रात पार कर दो। ठाकुरजी, इनका मुह ताको...'

अभी अच्छी तरह सुबह नही हुई थी। आधी थम गई थी, पर पानी थोडा-थोडा पड रहा था। मुहल्ले के नीलमणि मुकर्जी की स्त्री यह देखने आई थी कि गोशाला मे क्या हाल है। इतने मे पीछे के दरवाजे के बार-बार भडभडाए जाने पर उसने दरवाजा खोला और सामने ही सर्वजया को देखकर आश्चर्य के साथ बोल उठी : 'नई बहू, तुम !'

सर्वजया ने घबडाहट मे कहा · 'छोटी दीदी, एक बार जेठजी को बुलाओ तो सही। जल्दी से उन्हे हमारे घर चलने के लिए कहो। दुर्गा की हालत जाने कैसी हो रही है।'

नीलमणि मुकर्जी की स्त्री आश्चर्य से बोली . 'दुर्गा ! दुर्गा को क्या हुआ ?'

सर्वजया बोली . 'कई दिनो से बुखार चल रहा है, कभी आता था, कभी उतर जाता था। कल सध्या से बुखार बहुत तेज है। फिर कल रात को तो जानती ही हो क्या हालत रही। जल्दी से जेठजी को एक बार……'

बिखरे हुए बाल और रतजगी के कारण लाल-लाल आखो मे खोई-खोई-सी दृष्टि देखकर नीलमणि मुकर्जी की स्त्री ने कहा · 'बहू, डर काहे का ? खडी रहो। अभी उन्हे बुलाए देती हू। चलो, मैं भी चलती हू। कल रात को गोशाला का छप्पर भी उड गया। कल रात की तरह काड तो मैंने कभी नही देखा। वे रात के अन्तिम पहर मे गाय-बैल सम्हालकर सोए हैं न। मैं अभी चलकर पुकारती हू।'

थोडी देर बाद नीलमणि मुकर्जी, उनका बडा लड़का फणीन्द्र, पत्नी और दो लडकिया सब अपू के घर पहुचे। रात-अधेरे मे वह दैत्य मानो सारे गाव को पैरो तले रौंदकर, पीसकर, मथकर आकाश-मार्ग से गायब हो गया था। जिधर देखो, उधर पेडो की टूटी डालें, पत्ते, छप्पर का फूस, बास की हरी पत्तिया और बास के टुकडे जमा होकर रास्ता बन्द कर रहे थे। कही-कही बासो के झुकने के कारण रास्ता बन्द हो गया था। फणीन्द्र बोला . 'पिता जी आपने देखा, कितना भयकर काड हुआ है ? नवाबगज की पक्की सडक से विलायती चटका पेड के पत्ते उड आए हैं।'

नीलमणि मुकर्जी के छोटे लडके ने वाम की पत्तियो मे से एक मरी हुई गौरैया वाहर निकाल ली।

दुर्गा के विस्तरे के वगल मे अपू वैठा था। नीलमणि मुकर्जी ने कमरे मे प्रवेश करते हुए कहा 'वेटा अपू, मामला क्या है ?'

अपू के चेहरे पर घवड़ाहट के चिह्न थे। वोला : 'ताऊजी, दीदी पता नही क्या वक रही थी।'

नीलमणि मुकर्जी विस्तरे की वगल मे वैठकर वोले 'जरा हाथ देख लू ··अच्छा, वुखार कुछ तेज है, पर कोई डर नही है। फणी, तू चट से नवावगज के शरत डाक्टर के यहा चला जा और उन्हे साथ लेता आ।'

वाद को उन्होने पुकारा : 'दुर्गा, ओ दुर्गा !'

पर दुर्गा विलकुल वेसुध थी। उसने कोई जवाव नही दिया। नीलमणि वोले : 'अरे घर-द्वार का तो वुरा हाल हो रहा है। कल रात को पानी पडने के कारण तमाम पानी भर गया है। तो वहू को इसमे शरमाने की वात क्या है। वहा आकर रह जाती तो क्या होता और इस हरिया की भी उम्र वीत गई पर अक्ल नही आई। जव यह हालत है, घर-द्वार ऐसा है तो उसे ठीक-ठाक विना किए पता नही कहा गया, यह भी मालूम नही। उसकी तो सारी जिन्दगी इसी तरह वीत गई।'

उनकी पत्नी वोली . 'घर क्या मरम्मत कराए ? घर मे खाने तक को नही है। नही तो इस तरह छोड-छाडकर कोई परदेश जाता है ? हाय, यह वीमार लडकी कल रात-भर भीगी है। जरा पानी तो गरम करो। फणी, वह जगला तो खोल दे।'

दिन काफी चढने पर नवावगज से शरत डाक्टर आए और दवा-दारू की व्यवस्था हुई। कह गए . 'चिन्ता की विशेष वात नही है। वुखार जरूर ज्यादा है। माथे पर वरावर पानी की पट्टी रखी जाए।'

हरिहर का कोई पता-ठिकाना नही था, फिर भी अन्तिम पते पर एक पत्र छोड दिया गया। अगले दिन आधी-पानी थम गया और वादल छटने लगे। नीलमणि मुकर्जी दोनो जून आकर देख-भाल करने लगे। आधी-पानी थमने के अगले दिन से ही दुर्गा का वुखार फिर

तेज हो गया। शरत डाक्टर की भौहे चढ गई। हरिहर को एक पत्र और लिखा गया।

अपू अपनी दीदी के सिरहाने बैठकर भीगी पट्टिया रख रहा था। उसने दीदी को दो-एक बार पुकारा . दीदी, सुन रही हो। कैसी हो ? ओ दीदी !'

दुर्गा अजीब सुध-बुधहीन खोई-खोई-सी थी। होठ हिल रहे थे। वह मन ही मन कुछ कह रही थी। जैसे कोई नशे मे हो। अपू मुह के पास दो-एक-बार कान ले गया, पर उसकी कुछ समझ मे नही आया।

शाम के समय बुखार उतरने लगा। दुर्गा इतनी देर के बाद आख खोलकर फिर-ताक सकी। बहुत ही कमजोर हो गई थी। बहुत ही महीन आवाज मे बोल रही थी। अच्छी तरह सुने बिना यह समझ मे नही आता था कि क्या बोल रही है।

मा घर के काम-काज करने उठ गई, अपू दीदी के पास बैठा रहा। दुर्गा ने आख उठाकर उससे कहा · 'क्या समय है रे ?'

अपू बोला 'अब भी दिन बहुत बाकी है। दीदी, तुमने देखा, आज धूप निकली ? अब भी हमारे नारियल के पेड की फुनगी पर धूप है।'

बडी देर तक दोनो कुछ नही बोले। बहुत दिनो के बाद धूप निकली थी, इसलिए अपू बहुत खुश था। वह जगले के बाहर धूप से उज्ज्वल पेड़ की फुनगियो को देखता रहा।

थोडी देर बाद दुर्गा बोली 'सुन अपू, एक बात सुन।'

—क्या दीदी ?—कहकर वह दीदी के मुह के पास मुह ले गया।

—मुझे तू एक दिन रेलगाडी दिखाएगा ?

—जरूर, तू अच्छी हो जाए तो पिताजी से कहकर हम सब लोग रेलगाडी पर चढकर गगास्नान करने जाएगे···

एक दिन और एक रात कट गई। अब मौसम ऐसा हो गया कि मालूम होता था कि कभी आधी-पानी आया ही नही। चारो तरफ शरत की धूप खिल रही थी।

सवेरे लगभग दस वजे के समय नीलमणि मुकर्जी बहुत दिनो के बाद नदी मे नहाने की सोचकर बैठे-बैठे तेल मल रहे थे, इतने मे उनकी स्त्री की घबराहट-भरी बात उनके कानो मे आई 'अजी जल्दी से इधर तो आओ। अपू के घर से रोने की आवाज आ रही है।'

मामला क्या है, देखने के लिए सब लोग दौड पडे।

सर्वजया लडकी के चेहरे पर झुककर कह रही थी 'दुर्गा, जरा ताक तो, बेटी जरा अच्छी तरह ताक तो, ओ दुर्गा······'

नीलमणि मुकर्जी ने घर मे प्रवेश करते हुए कहा 'क्या है ? जरा सब लोग हटो तो, अरे हवा क्यो बन्द करते हो ? हवा आने दो।'

जेठ लगनेवाले प्रवीण पडोसी की कमरे मे मौजूदगी[1] सर्वजया भुलाकर चिल्ला उठी 'अजी यह क्या है, लडकी ऐसा क्यों कर रही है ?'

दुर्गा इसके बाद नही ताकी।

आकाश के नील आवरण को भेदकर बीच-बीच मे अनन्त की पुकार आती है, धरती की छाती मे लडके-बच्चे चचल होकर दौड पडते है और अनन्त नीलिमा मे डूब जाते है। वे जिस मार्ग मे जाते है वह परिचित और गतानुगतिक मार्ग से बहुत दूर उस पार होता है। दुर्गा के अशान्त चचल प्राण के लिए जीवन की वह सबसे बडी, अज्ञात की पुकार आई थी।

फिर शरत डाक्टर को बुलाया गया। बोला 'यह मलेरिया का अन्तिम स्टेज था। तेज बुखार के बाद ज्यो ही बुखार उतरा, बस हार्टफेल हो गया। ठीक ऐसा ही केस उस दिन दशघरे मे हुआ।'

आधे घटे के अन्दर मोहल्ले के लोगो से आगन भर गया।

१५

हरिहर को घर की चिट्ठी नही मिली थी।

१ पुरानी रीति के अनुसार जेठ से पर्दा किया जाता था।

अबकी बार घर से निकलकर हरिहर पहले-पहल गवाड़ी कृष्णनगर गया था। वहा किसी से परिचय नही था। अच्छा-खासा शहर और बाज़ार था, इस आशा से गया था कि वहा कुछ न कुछ हो जाएगा। वहा रहते समय उसे पता लगा कि शहर मे वकील या ज़मीदारो के घर पर चण्डी का पाठ करने के लिए मासिक या दैनिक हिसाब पर काम अक्सर मिल जाता है। इसी आशा मे पन्द्रह दिन कट गए और राहखर्च के नाम पर घर से जो थोड़े-से पैसे लाया था, वे चुक गए, और इधर एक टके का भी काम नही बना।

वह बड़ी मुसीबत मे फस गया। अपरिचित स्थान था, कोई एक पैसे की भी मदद करनेवाला नही था। बाज़ार मे जिस होटल में ठहरा था, वहा से पैसा खत्म होते ही निकलना पड़ा। किसीसे सुना कि स्थानीय हरिसभा मे परदेश से नये आए हुए गरीब ब्राह्मणों को मुफ्त मे खाना और रहना मिलता है। वहा कह-सुनकर उसे हरिसभा की एक कोठरी मे रहने को जगह तो मिल गई, पर वहा बडी असुविधा थी। बहुत-से बेकार गजेडी रात-भर हो-हल्ला मचाते थे। यहा तक कि रात मे वहा उसने ऐसी स्त्रियो को आते-जाते देखा, जिन्हे देखकर यह नही मालूम होता था कि ये हरिमन्दिर मे दर्शन करने आई हैं।

बडी मुसीबत मे दिन काटकर वह शहर के बड़े वकीलों और बनियो के घरो का फेरा लगाने लगा। दिन-भर घूमकर वह जब रात को लौटता था तो अक्सर देखता था कि कोई अज्ञात व्यक्ति मज़े मे उसके बिस्तरे पर खर्राटे भर रहा है। हरिहर ने कई दिन बरामदे मे गुज़ारे। अक्सर ऐसा होने के कारण गजेडियो के साथ उसकी कहा-सुनी हो गई। अगले दिन सुबह उन लोगो ने न जाने हरिसभा के मन्त्री महोदय से क्या कहा कि मन्त्री महोदय ने हरिहर को घर पर बुलवाकर कहा कि हरिसभा मे किसीके लिए तीन दिन से ज़्यादा रहने का हुक्म नही है, तुम किसी और जगह रहने का प्रबन्ध कर लो।

नतीजा यह हुआ कि सध्या के बाद हरिहर को हरिसभा भवन छोड़कर चल देना पड़ा।

वह नदी किनारे एक निर्जन स्थान मे एक सुनसान जगह पर

अपनी पोटली उतारकर नदी के पानी मे हाथ धोने गया।

उस दिन हरिहर ने दिन-भर कुछ नहीं खाया था। लकड़ी की एक टाल पर बैठकर उसने कालीजी पर भजन गाए थे, इसपर टाल के मालिक ने उसे एक रुपया दक्षिणा दी थी। उसी रुपये को तुड़ाकर कुछ पैसे का दही और लाई ले आया था, पर खाना गले से उतर नही रहा था। दस दिन के लायक पूजी छोड़कर वह घर से निकला था, पर आज दो महीने होने आए। अभी तक एक पैसा भी नही भेज सका था, पता नही उनपर क्या बीत रही होगी। घर से चलते समय अपू ने बार-बार कहा था कि पिताजी, लौटते समय पद्मपुराण जरूर लेते आना। लड़का पुस्तक-प्रेमी है, वह बीच-बीच मे पिता के बक्स और बस्ता खोलकर किताब निकालकर पढ़ता है, यह हरिहर को मालूम हो गया था। बात यह है कि बक्स के भीतर पुस्तकें अनाड़ी ढग से लगाई जाती थी; लड़के को यह मालूम तो था नही कि पिताजी कौन-सी पुस्तक कहा रखते हैं इसलिए किताबें उलटी-सीधी लगी मिलती हैं। घर लौटने पर हरिहर को पता लग जाता है कि लड़के ने यह काण्ड किया है।

घर आने से पहले हरिहर जोगीटोला से एक सस्ता पद्मपुराण कुछ दिनो के लिए ले आया। अपू ने पुस्तक पर अधिकार जमा लिया और उसे प्रतिदिन पढ़ने लगा। उसमे कुचुनीपाड़ा के शिवठाकुर की मछली पकड़नेवाली जो कहानी है, उसे पढ़ने मे अपू को बहुत रस आता था। हरिहर कहता था . 'बेटा, पुस्तक दे दो। जिसकी पुस्तक है उसको वापस करनी है।'

जब हरिहर ने यह वायदा किया कि वह पद्मपुराण खरीद देगा, तभी वह किताब वापस मिली थी। अबकी बार सफर पर निकलने से पहले उसे पक्का वादा करना पड़ा था कि वह पुस्तक जरूर ही खरीद लाएगा। दुर्गा को इतनी बड़ी-बड़ी बातो से कोई मतलब नही था, इसलिए उसने यह फरमाइश की थी कि उसके लिए एक रुईदानाड़ी और आलते का एक पत्ता लाया जाए। पर ये बातें तो बहुत बड़ी बातें हैं, समस्या तो यह थी कि इस समय घर का खर्च कैसे चल रहा होगा। सन्ध्या के बाद वह पूर्वपरिचित लकड़ी के टाल से बाहर नो

गया। अच्छी नीद नही आई। बिस्तरे पर पड़े-पड़े यही सोचता रहा कि घर को कुछ कैसे भेजे।

वह सबेरे उठकर बिना किसी मतलब के घूमते हुए उद्देश्यहीन ढग से रास्ते मे एक जगह पर खड़ा हो गया। सड़क के उस पार लोहे के फाटकवाला लाल ईंटो का एक मकान था। देर तक उस मकान की ओर घूरते रहने पर उसे ऐसा लगा कि यदि वह उस मकान मे जाकर अपनी गाथा सुनाए, तो कुछ न कुछ उपाय निकल आएगा। वह यन्त्र-चालित गुड्डे की तरह फाटक के अन्दर दाखिल हो गया। बैठक खूब सजी हुई थी, सगमर्मर की सीढियो पर एक के बाद एक फूलो के गमले लगे थे, पत्थर की मूर्तिया, पाम, दरवाज़े पर पैरपोश बिछा हुआ था। एक अधेड उम्र के सज्जन बैठक मे अखबार पढ रहे थे। एक अपरिचित आदमी को देखकर वे अखबार बगल मे रखकर बोले : 'तुम कौन हो ? क्या जरूरत है ?'

हरिहर ने नम्रतापूर्वक कहा : 'जी मैं ब्राह्मण हू, सस्कृत जानता हू, चण्डी का पाठ आदि कर लेता हूं, इसके अलावा भागवत या गीता का पाठ भी कर सकता हू।'

अधेड सज्जन ने बात अच्छी तरह बिना सुने ही यह कह दिया कि उनका समय कीमती है, फिजूल बातें सुनने के लिए उनके पास समय नही है। अत्यन्त सक्षिप्त रूप से बोले : 'यहां यह सब तमाशा नही चलेगा, दूसरा घर देखिए।'

हरिहर ने अन्तिम साहस बटोरकर कहा : 'जी, मैं नए-नए शहर मे आया हू। खाली हाथ हू, बडी विपत्ति मे फस गया हू, कई दिनो से बस···'

अधेड सज्जन ने मानो जल्दी छुटकारा पाने के लिए तकिया उठाकर उसके नीचे से कुछ हरिहर की तरफ बढाते हुए कहा : 'यह लीजिए, जाइए, और कुछ नही मिलेगा।'

यह सिक्का चाहे जो भी रहा हो, उसे यदि वे सज्जनता और ढग से देते तो हरिहर को लेने मे कोई आपत्ति नही होती, ऐसा उसने बहुत बार किया भी है पर इस समय उसने विनय के साथ कहा : 'जी, आप उसे रखिए, मैं ऐसे किसीसे कुछ नही लेता, मैं

शास्त्र पाठ करता हू, इसके अलावा किसीसे कुछ नही··· ··अच्छा रहने दीजिए ।'

पर कोई शुभ सयोग शायद हुआ था । रक्षित महाशय के टाल पर एक दिन एक पता मिल गया । कृष्णनगर के पार, किसी गाव मे एक धनी महाजन अपने गृहदेवता की पूजा और पाठ के लिए किसी ऐसे ब्राह्मण की तलाश कर रहे थे जो उन्हीके पास बस जाए। रक्षित महाशय के चेष्टा करने पर हरिहर वहा पहुचा और घर के मालिक ने उसे पसन्द भी किया । रहने के लिए कमरा भी दिया और आवभगत मे किसी प्रकार की कमी नही रही ।

कई दिनो तक काम करने के बाद ही दशहरा आ गया। घर जाते समय मालिक ने दस रुपए दक्षिणा और आने-जाने का किराया दिया । रास्ते में रक्षित महाशय से विदाई लेते समय पाच रुपए दक्षिणा मे मिले ।

चारो तरफ आकाश और हवा मे गरम धूप की गन्ध थी; नील मेघयुक्त आकाश की ओर देखने पर मन मे सहज ही उल्लास की भावना जगती थी । वर्षा के अन्त की सरस और हरी लताओ और पत्तो मे तथा पथिक की चाल-ढाल मे आनन्द का पुट था । रेल लाइन के दोनो किनारे कास के फूल गाडी के झकोरे के कारण जमीन पर लोट रहे थे । चलते-चलते हर समय घर की ही याद आती थी ।

शान्तिपुर के कुछ व्यापारी पूजा के पहले कपडे की गाठ खरीदने कलकत्ता गए थे, वे चूरनी घाट की खेवावाली नाव पर चढकर शोर-गुल कर रहे थे । जिधर देखो उधर उत्सव का उल्लास था । उसने रानाघाट के बाजार मे पत्नी और बेटा-बेटी के लिए कपडे खरीदे । दुर्गा को लाल किनारी की साडी पसन्द है, इसलिए उसके लिए एक लाल साडी और आलता की कुछ पत्तिया ली गई । बडी दौड-धूप करने पर भी अपू का पद्मपुराण नही मिला, इसलिए छ: आने देकर 'सचित्र चण्डी माहात्म्य या कालकेतु का उपाख्यान' लिया गया । गृहस्थी की छोटी-मोटी दो-एक चीजें, सर्वजया ने एक लकडी के चकले-बेलन के लिए कहा था, खरीदी गई ।

अपने स्टेशन पर उतरकर पैदल चलते-चलकर वह सध्या समय गाव मे पहुंचा। रास्ते मे कोई नही मिला, दूर से कोई दिखाई भी पड़ा तो उसकी ओर ध्यान दिए बिना वह घर की ओर चला। घर में घुसते समय उसने मन ही मन कहा—जरा देखो, बास की झाडी एकदम दीवार पर झुक गई है। भुवन चाचा वास काटने के नही, अब बडी मुसीबत है। उसके बाद वह हमेशा की तरह आग्रह के साथ पुकारने लगा : 'बेटी दुर्गा, ओ अपू !'

उसकी आवाज़ सुनकर सर्वजया मकान से बाहर आ गई।

हरिहर ने हसकर पूछा . 'सब ठीक-ठाक है ? यह लोग सब कहा गए ? घर पर कोई नही है क्या ?'

सर्वजया ने शान्त होकर पति के हाथ से भारी पोटली लेते हुए कहा : 'आओ, भीतर आओ।'

पत्नी का अभूतपूर्व शान्त रुख देखकर भी हरिहर के मन मे कोई खटका पैदा नही हुआ। उसकी कल्पना का स्रोत उस समय बहुत ही तेजी से दूसरी तरफ दौड़ रहा था। अभी लडकी और लड़का दौडे हुए आएगे। दुर्गा हसकर बोलेगी 'पिताजी, इसमे क्या है ?'

बस वह फौरन ही पोटली खोलकर उसमे से उसके लिए लाई हुई साडी और आलते की पत्तिया दे देगा और साथ ही 'सचित्र चण्डी माहात्म्य या कालकेतु का उपाख्यान' तथा टीन की रेलगाडी निकालकर उन्हे आश्चर्य मे डाल देगा। उसने घर मे घुसते हुए कहा : 'कटहल की लकड़ी का चकला और बेलन ले आया हू।' इसके बाद निराशा-मिश्रित आग्रह के साथ उसने चारो ओर ताककर कहा : 'क्या अपू और दुर्गा दोनो बाहर गए हैं ?'

अब सर्वजया से किसी तरह रुका नही गया। वह एकाएक फूट पडी और चिल्लाकर रोती हुई बोली : 'अजी, अब दुर्गा कहां है। बेटी हम लोगो को छलकर चली गई। इतने दिन कहां रहे ?'

दुर्गा के मरने के वाद मे सर्वजया वरावर पति पर दवाव डाल रही थी कि यह गाव छोड दिया जाए। असल मे अपू सोया नही था, वह जगा हुआ था। उसकी आखें मुदी हुई थी, पर रात के समय मा और वाप में जो वातचीत हो रही थी, वह उसने सुन ली थी। वे यहा का वूदोवास उठाकर काशीजी जा रहे थे। पिताजी मा से यह वता रहे थे कि इस देश के मुकावले मे काशी मे कई सुविधाए हैं। हरिहर कम उम्र मे वहा वहुत दिनो तक रहा है। वहा वह वहुत-से लोगो को जानता था। सब उसे जानते और मानते हैं। वहा चीजें भी सस्ती हैं। मा ने इसपर वहुत आग्रह किया, उन स्वर्णिम देशो मे कभी किसीको अभाव नही होता जवकि यहा वारहो महीने तकलीफ ही तकलीफ है। वस साहस करके वहा चले गए तो सारे दुख मिट जाएगे। मा का रुख तो यह था कि अगर कल जाना है, तो आज ही चला जाए। यहा और एक दिन भी रहने की इच्छा नही है। अन्त मे यह तय हुआ कि वैसाख के महीने मे उधर चल दिया जाए।

चडक के अगले दिन माल-टाल की वधाई शुरू हो गई। कल दोपहर को खाने के वाद रवाना होना है।

सन्ध्या समय रसोईघर के सहन में उसकी मा उसके लिए गरम पराठे बना रही थी। नीलमणि ताऊ के परित्यक्त घरघूरे मे नारियल के पेड के पत्ते चादनी मे चमचमा रहे थे, देखकर अपू का मन वहुत दु.खी हो गया। इतने दिनो मे नये देश मे जाने के लिए उसके मन मे जो उत्साह था, जाने का दिन जितना ही पास आता जाता था, वह उतना ही घटता जाता था और आसन्न विछोह की गहरी व्यथा से उसका मन दुखी होता जा रहा था। यह रहा उनका घरघूरा, यह रही वास की झाडिया, पलीताखोर आम का वाग, नदी का किनारा। दीदी के साथ वनभोजन करने का वह स्थान। उसे इन सबसे कितना प्यार है! वह जहा जा रहा है, क्या वहा नारियल के ऐसे पेड होगे? उसने जव से होश सम्भाला तब से

नारियल के इस पेड को यही देख रहा है, चादनी रातो मे उसके पत्ते कितने प्यारे लगते हैं। इन्ही दिनो चादनी मे इसी सहन मे बैठकर चादनी की छटावाली नारियल की डालो की ओर देखते हुए वह कितनी ही बार दीदी के साथ 'दस पचीस' खेलता रहा है, कितनी ही बार मन मे यह विचार आया है कि यह निश्चिन्दिपुर कितना सुन्दर देश है। वह जहा आ रहा है, क्या वहा भी रसोई-घर के सहन के किनारे जगल से मिलता हुआ इस तरह का नारियल का पेड है ? क्या वहा वह मछली पकड सकेगा, आम बीन सकेगा, डोगी खे सकेगा, रेल-रेल खेल सकेगा ? क्या वहा पर कदम्ब तल्ले साहब घाट की तरह घाट होगे ? क्या वहा रानी दीदी होगी ? सोनाडाग का मैदान होगा ? वे यहा अच्छे खासे तो थे, फिर इस देश को छोडकर क्यो जा रहे हैं ?

दोपहर के समय एक काण्ड हो गया।

उसकी मा सावित्री व्रत का न्योता जीमने गई थी। हरिहर खाना खाकर बगल के कमरे मे सो रहा था और अपू कमरे के अन्दर ताखे के ऊपर की चीजो को देख रहा था कि इनमे से कितनी ले जाई जा सकती है। ऊचे ताखे पर वह एक मिट्टी का कलसा हटाने लगा, तो उसके अन्दर से कोई चीज निकलकर फर्श पर गिर गई। वह नीचे उतरा और उसने जो उस चीज को उठाकर देखा तो वह दग रह गया। धूल और मकड़ी का जाला लगा होने पर भी वह क्या वस्तु है और उसका इतिहास क्या है, यह जानने मे उसको तनिक भी देर नही लगी।

यह वही छोटी-सी सोने की डिबिया थी, जिसकी चोरी परसाल सझली मालकिन के घर से हुई थी।

दोपहर को कोई घर पर नही था। वह डिबिया हाथ मे लेकर बडी देर तक अन्यमनस्क होकर खडा रहा। बैसाख की दोपहरी की गरम धूप-भरी एकान्तता मे बास की झाडी की साय-साय बहुत दूर की वार्ता की तरह कान मे आती थी। उसने अपने ही मन मे कहा कि कम्बख्त दीदी ने चुराकर उसे कलसे के अन्दर छिपा रखा था।

थोडी देर तक वह सोचता रहा, बाद मे धीरे-धीरे पीछे के

दरवाज़े की ओर जाकर खडा हो गया। ऐसा लगा कि बहुत दूर तक बांस की झाडी जैसे दोपहर की धूप मे पीनक मे झूम रही है। वह शंखचील किसी पेड की फुनगी पर रमा-रमाकर बोल रही है। मानो द्वैपायन झील मे छिपे हुए प्राचीन युग के उस पराजित अभागे राजकुमार की वेदना से करुण मध्याह्न था। थोडी देर खडा रहकर उसने हाथ की डिबिया को एक ही झटके मे बांस की घनी झाडियो मे फेंक दिया। उसकी दीदी जब भुलुआ कुत्ते को पुकारती थी तो वह जिन घनी झाडियो मे से हाफते हुए तीर की तरह आता था, ठीक उसीके आसपास सूखे बांसो और पत्तो के ढेर मे बेंतो की झाडियो मे जाने कहा वह लुप्त हो गई ...

वह मन ही मन बोला कि रहो वह डिबिया यहा पर। कभी किसीको इसका पता नही मालूम होगा, भला वहा कौन जानेवाला है?

अपू ने सोने की डिबिया की बात किसीसे नही बताई, आगे भी नही बताई, यहा तक कि मा को भी नही बताई।

कुछ दिन ढलने पर हीरू गाडीवान की बैलगाडी रवाना हुई। सवेरे की तरफ आसमान मे कुछ-कुछ बादल थे, पर दस बजे से पहले ही बादल छट गए और बैसाख की दोपहरी की धूप पट-पानो पर जैसे आग बरसाने लगी। पटु गाडी के पीछे-पीछे बडी दूर तक आया था।

लगभग रात के दस बजे गाडी आकर स्टेशन पर पहुची। आज बडी देर से वह बैलगाडी के स्टेशन पर पहुचने की प्रतीक्षा कर रहा था, इसलिए बैलगाडी पहुचते ही वह एक छलाग मे स्टेशन के प्लेटफार्म पर पहुचा। रात के साढे आठ बजे की गाडी बहुत पहले ही निकल चुकी थी। पिताजी से पूछने पर मालूम हुआ कि रात-भर और कोई गाडी नही आती। यह सारी झंझट हीरू गाडीवान के बैलो के कारण हुई, नही तो वह अभी रेलगाडी देख पाता। प्लेटफार्म पर तमाखू की बहुत-सी गाठें लगी हुई थी। रेल के दो आदमी लोहे के बक्स की तरह लम्बे-लम्बे डडेवाली एक कल पर तम्बाकू की गाठो को चढाकर जाने क्या-क्या कर रहे थे। चादनी से रेल की पटरिया

चादी की तरह चमचमा रही थी। उधर रेल लाइन के किनारे एक ऊची खूटी पर दो लाल बत्तियां और इधर भी ऐसी ही दो लाल बत्तिया थी। स्टेशन के कमरे मे मेज़ पर चार टागोंवाली मिट्टी के तेल की लालटेन जल रही थी। बहुत-सी जिल्द बधी हुई कापियां और कागज़ात रखे थे। अपू ने दरवाज़े के अन्दर से ज़रा झाककर देखा कि स्टेशन के बाबू खडाऊ की छोटी खूटी की तरह किसी चीज़ को दबाकर खट-खट करने मे मगन हैं।

स्टेशन ! स्टेशन ! बहुत देर नही है, कल सवेरे ही वह न केवल रेल की गाडी देखेगा, बल्कि उसपर चढेगा।···

प्लेटफार्म से जाने को उसका भी जी नही करता था पर पिताजी बुलाने आए, उन्होने बताया कि खड़ाऊ की खूटी की तरह जो चीज़ है, वह टेलीग्राफ की कल है।

अपू ने लौटकर देखा कि स्टेशन के पास पोखर के किनारे खाना पकाने का ढग हो रहा है। एक और गाडी पहले ही से वहां खड़ी थी। सवारियो मे अठारह-उन्नीस साल की एक बहू और एक युवक था। अपू को मालूम हुआ कि यह बहू हबीबपुर के बिस्वास घराने की है, भाई के साथ मायके जा रही थी। इसी बीच मे उसकी मा के साथ बहू की अच्छी जान-पहचान हो चुकी थी। उसकी मां खिचडी के चावल-दाल धो रही थी और बहू आलू छील रही थी। खाना एकसाथ पकेगा।

सवेरे सात बजे रेल आई। अपू मुंह बाकर बड़ी देर से रेल देखने के लिए प्लेटफार्म के किनारे खडा था। उसका गला आगे बढ़ा हुआ था, इतने में हरिहर ने कहा : 'बेटा, उतना आगे मत बढो, इधर आओ।'

एक चौकीदार भी लोगो को सावधान करके पीछे हटा रहा था।

ट्रेन कितनी बड़ी है ! कितनी आवाज़ करती है। जो सामने है उसीको इजन कहते हैं ? ओह ! कितनी अजीब है !

हबीबपुर वाली बहू घूघट खोलकर कौतूहल के साथ स्टेशन पर आनेवाली गाडी की ओर देख रही थी।

जल्दी-जल्दी मे गाड़ी मे सारा माल लादा गया। आमने-सामने

लकडी के बेंच थे। गाडी का फर्श सीमेण्ट का बना हुआ लगा। मानो एक कमरा हो, जंगले और दरवाज़े सब उसी प्रकार थे। अपू को यह विश्वास नही हो रहा था कि यह भारी गाडी जो आकर खडी हुई थी, फिर चलेगी। क्या मालूम शायद न चले। शायद वे अभी यह कहे कि तुम लोग उतर जाओ, हमारी गाडी आज नही चलेगी। तार के घेरे के उस पार एक आदमी लम्बी घास का एक बोझ सिर पर रखकर ट्रेन छूटने की बाट देख रहा था। अपू को लगा कि यह आदमी कृपापात्र है, आज के दिन जिसे रेल पर चढने नही मिला, वह जीएगा कैसे ? हीरू गाडीवान फाटक के बाहर खडा होकर रेल की तरफ देख रहा था।

आखिर गाडी चली। अजीब अनोखा झकोला देकर ! देखते-देखते माझेरपाडा स्टेशन, लोग-बाग, तमाखू की गांठें, मुह बनाकर घूरता हुआ हीरू गाडीवान सबको पीछे छोडकर रेलगाडी मरघत के मैदान मे आ गई। पेड-पालो फटाफट दोनो तरफ की खिडकियो की तरह देकर भाग रहे थे। कितनी तेज़ी थी ! इसीका नाम रेलगाडी है ? ओह ऐसा मालूम होता है, जैसे सारे मैदान को चक्कर दे रही है। झाडिया, पेड-पालो, फूस से छाए हुए किसानो के छोटे घर सबको पीछे छोडती जा रही है। गाडी के नीचे से चक्की पीसने की सी इकरस आवाज़ आ रही है। सामने जो इजन लगा है, वह कितना शोर कर रहा है।

माझेरपाडा स्टेशन का डिस्टेंण्ट सिगनल भी धीरे-धीरे लुप्त हो रहा था।

बहुत दिन हो गए उस दिन को ! वह दिन जिस दिन वह अपनी दीदी के साथ बछडा खोजते-खोजते मैदान और निचान पार करते हुए रेल की पटरी देखने के लिए बेतहाशा भाग रहा था। वह दिन और आज ? वह, जहा पर आसमान के नीचे असाढू दुर्गापुर की सडक पर लगी हुई पेड की कतारें दूर और दूर होती जा रही थी, उन्हीके उस तरफ जहा उनके गाव का रास्ता तिरछा होकर सोना-डागा मैदान में चढ आया था, वहा रास्ते के उस मोड पर, गाव के किनारे पुराने

जामुन के नीचे खडी होकर उसकी दीदी जैसे बुझी हुई आखो से उन लोगो की रेलगाडी की तरफ घूर रही थी ।···

उसे कोई नही ले आया, सब उसे छोड आए । दीदी मर जाने पर भी दोनो के खेलने के रास्ते, पनघट, वास की झाडिया, आम के वाग मे, फिर भी वह दीदी को अपने पास पाता था, दीदी का अदृश्य स्नेहस्पर्श निश्चिन्दिपुर के टूटे हुए घर के हर कोने मे था, पर आज सचमुच ही दीदी के साथ चिर विच्छेद हो गया···

उसे ऐसे लगा जैसे कोई भी दीदी से प्यार नही करता था, मां भी उससे प्यार नही करती थी, कोई नही करता था । कोई उसे छोड आने मे दुखी नही था ।

अचान··अपू का मन एक विचित्र अनुभूति से भर गया । इसे दु ख नही कह सकते, शोक नही कह सकते, बिछोह नही कह सकते, वह क्या है, यह वह नही जानता । एक मुहूर्त के अन्दर कितनी ही बातें मन मे आई और गई—अतूरी डायन नदी का घाट···उनका घर ··चालता पेड के नीचे का रास्ता·· रानी दीदी ··कितनी ही शाम ···कितने दोपहर···कितनी हसी और खेल·· पटु···दीदी का चेहरा ···दीदी की कितनी ही न मिटी हुई साधें

दीदी अब भी इकटक घूर रही थी ।

अगले ही क्षण उसके मन के अन्दर की वाक्यहीन भाषा ने आसुओ मे, अपने को व्यक्त कर मानो वार-वार यही कहना चाहा दीदी, मैं गया नही, मैंने तुझे भुलाया नही मैं तुझे जान-बूझकर छोडे नही जा रहा हू, वे मुझे लिए जा रहे हैं ।

सचमुच वह भूला नही था ।

बाद के जीवन मे नीलकुन्तला सागर-मेखला धरती के साथ उसका बहुत घनिष्ठ परिचय हुआ था, पर जब भी गति के आवेग मे सारी देह पुलकित होती, समुद्रयात्री जहाज के डैक से प्रतिक्षण नील आकाश का नित्य नवीन मायामय रूप दिखाई पडता था, शायद कोई अगूर की वेल से घिरा हुआ नील पहाड समुद्र की विलीन क्षितिज-सीमा मे दूरी बढती रहने के कारण क्षीण-से-क्षीणतर होती जाती

थी। दूर की अस्पष्टस्प मे देखी हुई समुद्रतट-भूमि एक प्रतिभाशाली सुरशिल्पी की प्रतिमा के दान की तरह उसके भावुक मन में जादू-भरे असर की सृष्टि करती थी, उस समय बल्कि यो कहना चाहिए कि ऐसे सभी मौको पर उसे याद पडती थी कि बडे जोर की वर्षा हो रही है और उस अविश्रान्त वर्षा के दौरान मे एक पुराने मकान के अन्धेरे कमरे मे बीमार पडी हुई एक गरीब देहाती लड़की जिसने कहा था—

—अपू मेरे अच्छे हो जाने पर तू मुझे एक दिन रेलगाडी दिखाएगा ?

माझेरपाडा स्टेशन का डिस्टेंण्ट सिगनल देखते-देखते और अस्पष्ट होते-होते बिलकुल विलीन हो गया।

कितने ही स्टेशन निकल गए, कितने बडे बडे पुल मिले। गाडी चल रही है तो चल रही है, मालूम होता था कि पुल खत्म ही नही होगा। कितनी तरह के सिगनल, कितने कल-कारखाने। किसी एक स्टेशन के कमरे के अन्दर लोहे के खम्भे से लगे हुए चोगे मे मुह डालकर रेल का एक बाबू पता नही क्या कह रहा था—प्राइवेट नम्बर ? हा, अच्छा ··सिक्सटी नाईन · सिक्सटी नाईन···उनहत्तर···छ और उसके बाद नौ···हा, हा ।

उसने अवाक् होकर अपने पिता से पूछा : 'पिताजी वह काहे की कल है ? वह उसके अन्दर मुह रखकर यह कह क्या रहा है ?'

उस समय दिन काफी ढल चुका था। हरिहर बोला : 'अब हम काशी पहुच जाएगे। गगा के पुल पर गाडी चढते ही काशी जी दिखाई पडेंगी।'

अपू बडी देर से एक बात सोच रहा था। आज वह सारे रास्ते मे टेलीग्राफ के तार और खूटी देखते-देखते आ रहा था। उस बार के अलावा उसने बस अब की बार इतने ध्यान से देखा था। जो अब की बार उसे रेल-रेल खेलने की सुविधा मिली तो वह उस तरह के तार के खम्भे बनाएगा। पहले वह कितने गलत तरीके से बनाता था। जहा वह जा रहा है, वहा के जगल मे गिलोय तो मिलेगी न ?

पन्द्रह दिन बीत गए। बास के फाटक की गली के एक मामूली तिमंज़िले मकान की नीचे की मंज़िल मे हरिहर का घर बना है। अभी तक किसी पूर्व परिचित व्यक्ति का पता नही मिला। पहले जो लोग जहा रहते थे, अब उन सब स्थानो मे कोई उनका पता नही दे सका। केवल विश्वनाथ की गली वाला पुराना हलवाई रामगोपाल साहू अभी तक जीवित था।

ऊपर की मंज़िल मे एक पजाबी परिवार रहता था, बीच की मंज़िल मे एक बगाली व्यापारी रहता था। बाहर वाला कमरा उसकी दुकान और गोदाम था, अगल-बगल के दो-तीन कमरो मे सोने का कमरा और रसोईघर था।

इन पाच-छ. दिनो मे सर्वजया ने पति के साथ करीब के सारे द्रष्टव्य स्थान देख लिए थे। उसने कभी भी इतनी बडी बातो की कल्पना भी नही की थी। कैसे-कैसे मन्दिर हैं! कैसे कैसे देवी-देवता हैं! कितने मकान और हवेलिया हैं! अब तक आड़गघाट का जुगल किशोर जी का मन्दिर उसकी आखो मे स्थापत्य शिल्प की पराकाष्ठा थी, पर काशी विश्वनाथ का मन्दिर? अन्नपूर्णा जी का मन्दिर? दशाश्वमेध घाट के ऊपर का लाल मन्दिर? ये फिर क्या थे?

वह इसी बीच मे एक दिन पजाबी सज्जन की स्त्री के साथ रात मे विश्वनाथ जी की आरती देखने गई थी। वह दृश्य इतना अभूतपूर्व था कि वह उसका वर्णन नही कर सकती थी। धूप के धुए से मन्दिर धुधला हो गया, सात-आठ पुजारी एकसाथ मन्त्र पढने लगे। अपार भीड़ थी और तडक-भडक तथा शान-शौकत का क्या कहना! बड़े घर की बहुत-सी स्त्रिया आई थी, उनके कपडे-लत्ते और गहनो का कहा तक बखान किया जाए। कही की एक रानी साहिबा आई थी, जिनके साथ चार-पांच नौकरानिया थी। उन्होने बहुत कीमती बनारसी साडिया पहन रखी थी, सोने की जरी के काम वाला पल्ला आरती के पचप्रदीप की ज्योति से चमचमा रहा था। रानी की आखें कितनी बड़ी और धनुष की तरह थी, भौंहे कितनी सुन्दर थी और चेहरा कितना कोमल था। उसने सचमुच की रानी कभी नही देखी थी, कहानियो ही मे सुना था, पर यह रानी सचमुच रानी लगती थी। वह नही कह

सकती कि उसने उस रानी को अधिक देर तक देखा या ठाकुर जी की आरती अधिक देर तक देखी।

देवी-देवताओ के मन्दिरो को छोड भी दिया जाए तो यहा रहने के घर भी कितने सुन्दर थे। दशहरा के अवसर पर गागुली वाडी मे जो न्योता होता था, उसके उपलक्ष्य मे वह गागुलियो के मन्दिर और रगमंच, दो महलवाला मकान, और बधा हुआ तालाब देखकर किस प्रकार भीतर ही भीतर कुढती थी। उसे याद है कि उसने एक बार दुर्गा से कहा था : 'देखा है, बडे लोगो का घर-द्वार कितना सुन्दर होता है ?'

पर अब वह सडक के दोनो किनारे जो मकान देखती रहती है, उनकी तुलना मे गागुली वाडी क्या है ?

उसने इतनी गाडिया, घोडे आदि एकसाथ नही देखे थे। गाडिया भी कितने प्रकार की थी! आते समय रानाघाट तथा नईहाटी मे उसने घोडागाडी जरूर देखी थी, पर उसने इतनी तरह की गाडिया कभी नही देखी थी। दो पहिये की गाडिया ही कितनी थी। उसे तो इच्छा हुई कि सड़क के किनारे खडी होकर यही सब देखती रहूँ, पर वह स्त्री साथ मे होने के कारण वह शरम के मारे कुछ बोल नही सकी।

अपू को तो बहुत ही अचरज हुआ है। वह कल्पना मे भी नही सोच सकता था कि ऐसी बातें सम्भव हैं। उनके ठीहे मे दशाश्वमेघ घाट बहुत दूर नही है, वह प्रतिदिन सध्या समय वहा टहलने जाता था। वहा तो रोज ही चडक का मेला-सा लगा रहता था। इधर गाना हो रहा है, तो उधर कथा हो रही है, कोई रामायण पढ-कर सुना रहा है। भीड लगी हुई है, लोग हस रहे हैं, उत्सव का वातावरण है। अपू वहा टहल टहलकर सब कुछ देखता था और सध्या के बाद घर लौटकर बडे उत्साह के साथ उनकी बात सुनाता था।

किसीका नौकर एक छोटे लडके को कमर मे रस्सी डालकर टहलाने लाता था। अपू ने उससे परिचय कर लिया। उसका नाम पलटू है, वह अच्छी तरह बात नही कर पाता, पर बडा ही चचल है, इसलिए घर वालो ने उसके साथ कैदियो का-सा व्यवहार कर रखा है कि कही खो न जाए। अपू उसे देख, हसकर लोटपोट होता था।

उसने नौकर से कहा था कि रस्सी खोल दे, पर उसने डर के मारे रस्सी नही खोला। कैदी बहुत ही नन्हा और नासमझ था, इसलिए उसे यह होश भी नही था कि इस तरह का व्यवहार प्रतिवाद के योग्य है।

लौटने पर सर्वजया रोज-रोज उसे डाटती थी : तू अकेले-अकेले ऐसे क्यो फिरता रहता है ? बडा शहर ठहरा, कही खो गया तो ?'

वह इसके उत्तर मे हाथ-पैर हिलाकर मा को यह समझाता था कि उसके सम्बन्ध मे इस प्रकार की शका बिल्कुल व्यर्थ है और उसका कोई कारण नही है।

काशी मे आने पर हरिहर की आमदनी भी बढ गई। कई जगह दौड-धूप करने के बाद उसे कुछ मन्दिरो मे प्रतिदिन पुराण पढने का काम मिला। इसके अतिरिक्त एक दिन सर्वजया ने पति से कहा 'तुम दशाश्वमेध घाट मे रोज शाम को पोथी लेकर क्यो नही बैठते ? लोग कितने ढगो से पैदा करते हैं और तुम तो बस बैठे-बैठे हवाईकिले ही बनाया करते हो।

पत्नी की डाट से प्रभावित होकर हरिहर काशीखड लेकर शाम के समय दशाश्वमेध घाट मे बैठने लगा। धर्म-ग्रन्थ पढकर सुनाना उसके लिए कोई नया काम नही था, अपने देहात मे वह व्रत तथा त्योहारो के उपलक्ष्य मे पुराण पढकर सुनाया करता था। उसने घाट मे जाकर अच्छे स्वर मे वन्दना शुरू की

वर्हापीडाभिराम मृगमदतिलक कुडलाक्रातगड,
········ स्मित सुभगमुख स्वाधरे न्यस्तवेणु
··············· ··· ·· ब्रह्मगोपालवेश ।।

अच्छी भीड लगने लगी।

वह घर पर लौटकर बलुई कागज पर कुछ लिखने लगा। पत्नी से बोला : 'सिर्फ श्लोक पढते जाओ तो कोई नही सुनता, पूर्वी बगाल के उस कथावाचक के यहा मुझसे ज्यादा भीड लगती है, इसलिए मैंने सोचा है कि कुछ लीला प्रस्तुत करूगा जिसमे कुछ गाने भी होगे। ढग कथावाचक का रहेगा, नही तो लोग नही जुडते। परसो पूर्वी बगाल के उस कथावाचक से बात-चीत हुई उसके लिए तो देवनागरी



के अच्छर भी भैंस बराबर हैं, बस तुकबन्दियां सुना-सुना स्त्रियों को ठगकर पैसे ले लेता है। मेरी तश्तरी में छ या आठ आने आते हैं पर उसे रुपए से कम नहीं मिलता। जरा सुनोगी मैंने कैसा लिखा ?'

उसने थोड़ा सा पढ़कर सुनाया। बोला : 'मैंने सोचा है कि उस कथावाचक की पोथी देखकर जंगल का वर्णन लिख लूं, पर वह पोथी देगा थोड़े ही।'

—तुम कहां पर बैठकर कथा बाचते हो ? मैं एक दिन सुनने जाऊंगी।

—जरूर-जरूर। शीतलाजी के मन्दिर के नीचे ही बैठता हूं। कल ही जाना। नई लीला सुनाऊंगा, कल एकादशी है, दिन भी अच्छा है।

—लौटते समय विश्वनाथ की गली की दुकान में अपू के लिए चार पैसे की तीखुर की जलेबी ले आना। ऊपर जो पछाहवाली बहू है, वह कल कोई पूजा करने के बाद मुझे ऊपर जलपान कराने ले गई, तो खाने के लिए तीखुर की जलेबी दी थी। विश्वनाथ की गली में बिकती है। मैंने खाई तो सोचा कि अपू को जलेबी बहुत पसन्द है, पर उस समय जलपान कर रही थी, कैसे कहती ? इसलिए तुम चार पैसे की जलेबी जरूर ले आना।

कुछ दिनों से हरिहर की कथा में अच्छी भीड़ हो रही थी। लकड़ी के एक बड़े-से कठौते में नारदघाट के काली मन्दिर की नौकरानी ने एक बड़ा-सा सीधा लाकर अपू के सहन में रख दिया। सर्वजया खुश होकर बोली . 'आज शायद बाबू की विशेष पूजा है ? अच्छा बहू, तुमने देखा कि वह घर आ रहे है ?'

जब नौकरानी चली गई, तो सर्वजया ने लड़के को पुकारकर कहा 'अपू, इधर आ। यह देख तेरा वह नारियल का फल है। तुझे किशमिश पसन्द है न ?' केला है। देख कितने बड़-बड़े आम है। आ, बैठ खा। यहां बैठ।'

प्रोत्साहन पाने पर हरिहर ने फिर से अपनी पुरानी पोथियां निकाल ली।

सर्वजया बोली : 'ध्रुवचरित्र सुनते-सुनते लोगों के कान पक गए हो

गए, कोई नई लीला शुरू करो न।' तब हरिहर ने पूरा सवेरा और दोपहर लगाकर जडभरत के उपाख्यान को लीला के रूप मे लिखकर तैयार कर लिया। इसी काशी मे आज से बाईस साल पहले जब उसने गीत गोविन्द का पद्यानुवाद प्रस्तुत किया था, तब उसकी उम्र चौबीस साल थी। जब वह अपने देहात मे गया तो जीवन का उद्देश्य उसके निकट और भी स्पष्ट हो गया। काशी मे इतनी सम्भावना नही थी। पर अपने देहात मे चारो तरफ कही दाशूराय का गीत, कही दीवनजी का गाना, कही गोविन्द अधिकारी के तोता मैना की लडाई, लोका धोबी के दल के द्वारा सम्मिलित गीतो का प्रचार, यह सब देखकर उसके मन पर एक नया ही प्रभाव पडा।

वह रात को अपनी स्त्री से कहा करता था: 'बाजार मे बारवारी[1] मे कवियो का गाना हो रहा है। समझी? मैंने बैठकर सुना, समझी, समझी? सीधे-सादे पद थे, बहुत मामूली। ज़रा गृहस्थी सम्भल जाए, तो बस देखना, लीला के नये पद तैयार करूगा। यह लोग तो बस बाबा आदम के ज़माने की चीज़ें गाते है, इसीलिए मैं कल राजू से कह रहा था।'

कभी-कभी हरिहर रात के बीच मे उठ बैठता था और कुछ सोचा करता था। किसी अनिर्दिष्ट आनन्द से उसका मन चिडियो के परो की तरह लघु हो जाता था। उसके सामने कितना उज्जवल भविष्य है!... ...

वह कल्पना-नेत्रो से देखता था कि झाड-फानूस वाले बडी मजलिसो मे सारे देश मे, गाव-गाव मे, उसके बनाए हुए गीत, गाने, काली माई पर भजन, पद, कई-कई रातो तक गाए जाते है। दल का मालिक आकर हाथ-पैर जोडता है और उससे लीला लिखवाकर ले जाता है।

—वाह! बहुत सुन्दर है! किसने ये कवित्त और गीत बनाए है? कवियो के गुरु 'पण्डित हरू', हरू पण्डित का है न? निश्चिन्दिपुर के हरिहरराय महाशय इनके रचयिता हैं न?

---

१. सम्मिलित पूजा।

इसी दशाश्वमेध घाट पर बैठकर ढाई साल पहले इसके मन में कितने ही स्वप्न लहराते रहते थे। इसके बाद वह धीरे-धीरे उनको भूल गया, जो कल्पिया थीं, वे वक्त के अनजाने गुप्त कोनों में जाकर छिप गई, यौवन का स्वप्न-जाल जीवन की दोपहरी की तपिश में कोहासे की तरह क्षितिज में विलीन हो गया।

खोई हुई जवानी की तरह देखने पर हृदय जाने कैसे कुलबुला उठता है, कितनी ही बातें याद पड़ती हैं, क्या जीवन के उन बीते हुए दिनों को और एक बार भी लौटाया नहीं जा सकता?

दशाश्वमेध घाट पर बहुत-से लड़कों के साथ अपू का परिचय हुआ, पर यहां उसकी उम्र के सब लड़के स्कूलों में पढ़ते थे। निश्चिन्दिपुर में मछली पकड़कर और नाव खेकर दिन काटना सम्भव था, पर यहां अपनी उम्र वालों में यह कहने में लज्जा मालूम होती है कि वह कुछ भी नहीं पढ़ता।

इसके अलावा जिन लड़कों के साथ परिचय हुआ था वे सब अच्छे खाते-पीते घरों के थे। पलटू के बड़े भाई ने एक दिन बात-बात में कहा था कि उसके पिता को प्रवास में बहुत रहना पड़ता है, इसपर अपू ने कहा था 'क्यों, तुम लोगों के बहुत-से यजमान हैं क्या?'

इसपर पलटू के बड़े भाई ने आश्चर्य के साथ कहा था, 'यजमान कैसा? कौन यजमान?'

अपू जवाब दे भी नहीं पाया था कि उसने कहा 'पिताजी कन्ट्रैक्टर हैं न?' काशी में छोटी-मोटी जमींदारी भी है, पर आप तो जानते ही हैं आजकल के दिनों में क्या बचता है।'

कभी-कभी अपू दशाश्वमेध घाट पर टहलने जाकर पिता के मुंह से पुराण-पाठ सुनता था। जब हिरण का बच्चा हिंस्र जानवर के हाथों मारा गया, तो हिरण के बच्चे पर मुग्ध राजर्षि भरत ने जिस प्रकार से विलाप किया और अन्त में आकर उसकी मृत्यु की कहानी सुनकर भरत पर जो कुछ बीता उससे उसकी आंखों में आंसू भर आए। जब सिन्धु-सौवीर के राजा रहूगण ने राजर्षि भरत को अज्ञान के कारण अपने यहां डोली ढोनेवाला नियुक्त किया, तब कौतूहल और उत्कंठा से ...

वह आशा करने लगा कि अब कुछ होगा, कोई बात जरूर होगी। कथावाचन के अन्त मे जो आशीर्वचन उच्चारित होते थे, वे उसे बहुत अच्छे लगते थे :

काले वर्षंतु पर्जन्य पृथिवी शस्य शालिनि
लोका: सन्तु निरामया: ....

सध्या की ओर मन्दिरो मे शख और घटो की ध्वनि के साथ-साथ अस्तायमान सूर्य की सिन्दूरी आभा और पूरबी की मूर्च्छना के साथ-साथ हिरण के बच्चे के वियोग से व्याकुल राजर्षि का दु:ख घुला-मिला रहता था।

घर मे कागज और कलम लाकर अपू ने पिताजी से कहा : मुझे वह लिख दो न, जो तुम पढ़ा करते हो—काले वर्षंतु पर्जन्य।'

हरिहर ने खुश होकर कहा : 'तू सुनता है मुन्ना ?'

—मैं तो नित्य रहता हू, जब तुम कल भरत की मा मर जाने की कथा सुना रहे थे तब मैं तुम्हारे पीछे मन्दिर की सीढी पर बैठा था।

—तुझे कैसी लगती है, अच्छी लगती है ?

—ब-हु-उ-उ-त, मैं तो रोज सुनता हू।

पर अपू एक बात बताता नही है, वह यह कि जिस दिन सगी साथी मिल जाते हैं, उस दिन वह कथा सुनने नहीं जाता। उस दिन वह पिता के पास से जा रहा था, तो हरिहर ने पुकारा : 'ओ मुन्ना ! मुन्ना।'

उसके सगी ने कहा : 'क्या वह तुम्हे पहचानता है !'

अपू ने कधा हिलाते हुए कहा : 'हा'—वह संगी-साथियो के साथ कभी पिता के पास नही आता था, वह यह चाहता नही था कि लोग यह जानें कि उसके पिता घाट पर बैठकर कथा बाचते है। पलटू के बडे भाई के मित्र के अतिरिक्त, बाकी सब साथियो से उसने यही कहा है कि काशी मे उनका निजी घर है, वे काशी मे हवाखोरी के लिए आए हैं, अपने देहात मे बहुत बड़ा मकान है, पिताजी ठेकेदार है, इसके अलावा अपने देहात मे जमीनदारी तो है ही। पर अन्त मे बोला : 'पर जानते ही हो आजकल जमीनदारी मे कुछ धरा नही है।'

उसके सगियो की उम्र उससे कुछ अधिक नही है, इसीलिए

शायद उसकी कही हुई बात और उसके कपडों मे जो असामजस्य है, वह पकड मे नही आता । विशेपरूप से उसके सुन्दर चेहरे के कारण सभी बातें खप जाती है ।

पूर्णिमा के दिन पास के कथावाचक के यहा बडी भीड हुई । सध्या के बाद हरिहर कथा समाप्त कर घाट के एक चबूतरे पर बैठकर विश्राम कर रहा था, इतने मे कथवाचक महोदय पानी मे हाथ धोने के लिए उतरे । उन्होने हरिहर को देखकर कहा : 'तो आप भी हैं ? आपने देखा ? पूर्णिमा का दिन है, पहले जमाने मे आज के दिन विशेप चढावे मे पद्रह सेर, आधा मन तक चावल आ जाता था, पर आजकल विशेष चढावा कोई नही मानता । कोई चावल का एक दाना भी नही लाता । मुश्किल से रुपया-सवा-रुपया बैठा है, इसमे भी दो खोटी दुअन्निया हैं। अच्छा, यह बताइए कि आपकी शिक्षा कहा हुई थी ?'

—शिक्षा तो इसी काशी में ही हुई थी, पर यह बहुत दिन की बात है । इतने दिनो तक अपने देहात मे ही था, अबकी आकर यहा जमा हू...

—क्या आपका घर पास ही है ? जरा चाय पिला सकेंगे ? कई दिन से सोच रहा हू, जरा चाय पीऊ, सो देखिए चादर मे चाय गठिया कर फिर रहा हू । कही न मिले तो हलवाई के यहा जाकर गरम पानी बनवा लू, गला बैठा हुआ है, जरा नमकीन चाय पीऊ तो...

—हा, हा, आइए मेरा घर पास ही है, चलिए न ?

हरिहर साथी कथावाचक को लेकर घर पर गया ।

घर मे चाय पीने की परिपाटी कभी नही थी । कढाई मे पानी गरम किया गया, फिर चाय तैयार हुई । अपू ने फूल के गिलास मे चाय और तश्तरी मे कुछ मीठा रखकर कथावाचकजी के सामने रख दिया । मीठा देखकर कथावाचक खिल गए, उन्हे इतनी आशा नही थी ।

—यह आपका लडका है ? वाह, बहुत अच्छा लडका है । वाह, आओ, आओ बेटा, रहने दो, रहने दो, कल्याण हो । नमकीन चाय है न ? देखू ।

हरिहर बोला . 'आपके बाल-बच्चे यही हैं ?'

—यहा घरवाली ही नही है तो बाल-बच्चे कैसे ? दस बीघा जमीन भी मेरे हाथ से निकल गई, और जिन्होने ली, वे भी फटीचर के फटीचर ही रहे। जो दो-चार बीघे जमीन भी होती तो क्या इतनी दूर आकर जान खपाते ? अजी यह कोई रहने लायक जगह है ? बाबा विश्वनाथ मेरे सिर पर रहें, पर यह तो सोचिए कि जाडा चल रहा है, पर न तो खजूर के रस का पता है और न खजूर का गुड या मिठाई आख से देखने मे आती है। मेरे अपने ही दो कोडी खजूर के पेड हैं। और यह हाल देखिए···

—आपकी जन्मभूमि कहा है ?

सतखीरे के पास चमगादडो वाले शीतलकाठी गाव सुना है न ? शीतलकाठी के चक्रवर्ती बडे ऊचे ब्राह्मण माने जाते हैं।

हरिहर ने तमाखू भरकर स्वय कई-एक कश लेकर कथावाचकजी के हाथ मे हुक्का थमा दिया, बोले 'शौक कीजिए।'

—कुछ नही साहब, फागुन महीने मे गया था, एक बाग था सो उसे भी बट्टेखाते लगा आया। हम लोग श्रोत्रिय ब्राह्मण हैं न ? दस बीघे जमीन थी, सो उसे गिरवी रखकर दहेज का पैसा इकट्ठा किया, शादी की, दस साल तक गृहस्थी भी की, नतीजा क्या हुआ ? सध्या समय रसोईघर के छप्पर से सीताफल उतारने गई; वहा काला नाग तैयार बैठा था, बस उसने हाथ मे डस लिया। अब देखिए सयोग कि मैं उस दिन घर पर नही था, इसलिए न वैद्य ने देखा न किसी कविराज ने; किसीने कुछ नही किया। मैं पटोली मे नदी पार कर रहा था, इतने मे अपने गाव के महेश साधुखान उलटी तरफ से आ रहे थे, बोले . 'जल्दी घर जाइए, घर मे बडी विपत्ति है।'—मैंने पूछा कि क्या विपत्ति है, उसने बताया नही। घर पहुचकर देखा कि वहा तो मुर्दा भी बासी हो चुका है। जमीन की जमीन गई, इधर यह हाल हुआ। तब मैंने सोचा कि अब जन्म-भूमि मे क्या रहना, अब न तीन-चार सौ रुपये मिल सकते है न दोबारा शादी ही हो सकती है। इसीलिए चलू बाबा विश्वनाथ के चरणो में, कम से कम भूखो तो नही मरूगा। यहा आठ साल हो गए, एक चचेरा भाई है, सो उसने जो थोडी-

वहुत जमीन थी, उसपर कब्जा जमा लिया और कहता है कि तुम्हारा कोई हिस्सा नही है। मैंने कहा, 'नही है जाने दो।' कौन इस जूत-पजार मे पडे। अव चलता हू। आपके यहा चाय खूव मिली, आपका लडका किधर गया ? वडा अच्छा लडका है···

अपने पुराने कैनवैस के जूतो को (जिनपर चमडे की थेगलिया लगी हुई थी) झाडकर पहनने के वाद कथावाचक महोदय निकल पडे, चलते-चलते वोले 'कल को विशेष चढावा है, देखें कैसे रहता है।'

१७

हरिहर का घर कोई अच्छा नही है। नीचे की मज़िल के सीले हुए दो कमरे है, दिन मे भी इतना अन्धेरा वना रहता है कि एकाएक वाहर से कोई आ जाए तो उसे कुछ दिखाई नही पडता। सर्वजया कभी ऐसी जगह मे नही रही। उसका देहाती घर पुराना होने पर भी उसमे धूप और हवा के आने-जाने के लिए वडे-वडे दरवाजे और जगले वने हुए थे। पुराने जमाने की ऊची कुर्सी का मकान था, हर समय सूखा वना रहता था। इस घर की सील और अन्धेरे मे सर्वजया के सिर मे दर्द होता है। अपू तो विलकुल ही घर मे नही रहता था, सूर्य-किरण से पुष्ट नये पौधे की तरह उसका मुह तो हर समय रोशनी की तरफ ही रहता था। वह निश्चिन्दिपुर के खुले मैदान तथा नदी किनारे की रोशनी और हवा मे वडा हुआ था, इस कारण वन्द कमरे के अन्धेरे मे वह हाफ उठता था, वह एक क्षण भी वहा टिक नही पाता था।

उसे काशी से कुछ निराशा हुई थी। यहा वडे-वडे घर और हवे-लिया जरूर हैं, पर यहा जगल नही है।

सध्या की ओर एक दिन कथावाचक महोदय हरिहर के घर पर आए, इधर-उधर की वात-चीत के वाद वोले · मैं आपके लडके को नही देख रहा हू।'

हरिहर वोला : 'कही खेलने निकला होगा। शायद दशाश्वमेध

घाट की तरफ गया हो ।'

कथावाचक महोदय दुपट्टे के किनारे मे बधी किसी चीज को खोलते हुए बोले : 'आपके लडके के साथ मेरा बहुत परिचय हो गया है। उस दिन मैंने घाट के पास उसे बुलाकर उससे बातचीत की तो मालूम हुआ कि कौडी खेलना उसे बहुत पसन्द है। मुझे किसी ने व्रत के सीधे मे समुद्र की दो कौडिया दी हैं, सोचा कि अपू को दे आऊ। तो आप रख लीजिए, आने पर दीजिएगा।'

अगहन के अन्त की ओर अपू ने अपने पिताजी से कहा कि मैं स्कूल में भरती होना चाहता हू। बोला 'पिताजी, सभी स्कूल में पढते हैं। मैं भी पढूगा। गली के मोड से आगे एक अच्छा-सा स्कूल है।'

हरिहर ने लडके को स्कूल मे भरती कर दिया। यद्यपि छात्रवृत्ति का पाठ्यक्रम था, फिर भी अग्रेजी की पढाई होती थी। प्रसन्न गुरुजी की पाठशाला छोडने के बाद पाच साल हो गए थे। अब वह फिर स्कूल मे दाखिल हो गया।

माह महीने के बीचोबीच कथावाचक महोदय देसी कागज का एक टुकडा हाथ मे लाकर हरिहर के पास आकर बोले : 'देखिए तो महाशय, ऐसा लिखा जाए तो काम बनेगा ?'

हरिहर ने पढकर देखा कि काशी के श्रीराम गोपाल चक्रवर्ती नाम के किसी व्यक्ति ने कथावाचक महोदय के नाम अपने गाव की दस बीघे जमीन का दानपत्र लिखा है। अमुक व्यक्ति गवाह हैं, स्थान दशाश्वमेध घाट और अमुक तारीख है।

कथावाचक महोदय ने बताया 'मामला यह है कि हमारे देहात मे कुमुरे गाव के रामगोपाल चक्रवर्ती बड़े पण्डित थे। मरने से एक साल पहले उन्होने मुझसे कहा—रामधन, तुम्हारे पास तो कुछ भी नही है, सोच रहा हू कि तुम्हे दस बीघा जमीन दे दू, ले तो लोगे न ?—तो मैंने सोचा कि अच्छे ब्राह्मण हैं, दान देना चाहते हैं तो इसमे बुराई ही क्या है ? उन्होने मुह जबानी जमीन मुझे दे दी। वही मामला खत्म हो गया, मैंने भी कोई ध्यान नही दिया क्योकि रहना तो काशी मे था, फिर वहा जमीन लेकर क्या करता। इसके

वाद चक्रवर्ती परलोक सिधार गए। दान मुहजवानी रह गया। इतने दिनों बाद फिर सोच रहा हू कि घर लौटूगा, जो लडके-वाले न हुए, तो फिर क्या जिन्दगी रही ? आपसे छिपाना क्या है, भूखों रह रहकर तीन सौ रुपये जोड लिए हैं। सौ रुपये और मिल जाए तो श्रोत्रिय-कुल की लडकी मिल सकती है। सो ऐसा अगर होना है तो ज़मीन भी काम मे आएगी। मैंने सोचा दान तो ज़वानी किया था, उसे भला चक्रवर्ती महाशय के लडके क्यो मानने लगे ? इसलिए सोच साचकर यह दस्तावेज़ तैयार किया है। लिखावट मेरी है, दस्तखत भी मेरे ही हैं। जो दो गवाह हैं वे भी बनावटी हैं। अब देखू अगर उनके लडके मानें। जाकर कहूगा कि तुम लोगो के पिताजी ने ज़मीन दान दी है···

उठते समय कथावाचक महोदय ने कहा अच्छी बात याद आई। मगलवार माघी पूर्णिमा के दिन मैं आपके लडके को साथ मे लेकर टमटार के राजा के ठाकुरद्वारे मे ले जाऊगा, मानमन्दिर से लगा हुआ है। सध्या के बाद हर साल ब्रह्मभोज होता है।' कुछ गर्व के साथ बोला 'मुझे एक न्योते की चिट्ठी बराबर आती है, खूब अच्छा खिलाना-पिलाता है। तो ठीक रहा कि उस दिन मैं लडके को ले जाऊगा ?'

माघी पूर्णिमा के दिन कुछ रात रहते से रास्ते मे स्नान-यात्रियो की भीड देखकर सर्वजया दग रह गई। लोग, पुरुष और स्त्रिया, गोल बाधकर 'जय विश्वनाथजी की जय, बम् भोला, बवम् बवम् बम्' आदि कहते हुए भयकर जाडे की उपेक्षा करके स्नान के लिए चले थे। ज़रा दिन चढने पर सर्वजया भी पजाबी महिला के साथ नहान के लिए चली। गगा का पानी, सीढिया, मन्दिर, रास्ते सब उत्सव के वस्त्रो मे सज्जित नर-नारियो से भरे हुए थे। पानी मे उतरना एक मुसीबत हो गई। षष्ठी देवी के मन्दिर में लाल झडा लहरा रहा था।

संध्या के पहले कथावाचक महोदय अपू को लेने आए। सर्वजया बोली : 'भेज दो, उनका कोई है तो नही इसलिए अपू पर कुछ स्नेह हो गया है। घाट पर बुलाकर उसके साथ बातचीत करते हैं, एक

दिन शायद पपीता खरीदकर खिलाया था । भेज दो…'

अपू पहले कथावाचक महोदय के साथ उनके ठीहे पर गया । खपरैल की छत थी, मिट्टी की दीवार पर कई जगह खरिया मिट्टी से इस प्रकार के हिसाब लिखे थे

मियरसोल की रानी के घर भागवतपाठ	—	४) रु०
मुसम्मात कुन्ता के ठाकुरद्वारे पर वही	—	३) रु०
धारकलालजी दूबे की एक दिन की खुराक	—	।)

कोई खास सामान नही था । एक पतली-सी चौकी बिछी हुई थी, टीन का एक छोटा-सा बक्स था, रस्सी की एक अरगनी, एक जोडा खडाऊ, दीवार में कील पर कमलगट्टे की एक बडी-सी माला लटकी हुई थी ।

कथावाचक ने कहा सन्तरा खाओगे ?'

अपू ने हामी भरते हुए कहा : 'आपके पास है ?'

न जाने क्यो कथावाचक से उसे किसी प्रकार का सकोच नही हो रहा था । उसने सन्तरा छीलते हुए कहा . 'आपको 'काले वर्षतुपर्जन्य' आता है ?'

—जरूर, रोज तो कहता हू, एक दिन सुनना ।

—इस समय कहिए न ।

कथावाचक ने गाकर कहा पर अपू को ऐसा लगा कि उसके पिता इससे ज्यादा अच्छी तरह कहते हैं। कथावाचक का गला बहुत मोटा है ।

अपने घर ले जाने के लिए कथावाचक ने मिट्टी और पत्थर की बहुत-सी फुटकर चीजें, गुडिस, खिलौने, शिवलिंग, मालाए, लकडी की कघिया सजो रखी थी । अपू को दिखाते हुए बोले : 'काशी की चीजें हैं, लोग पूछेंगे, क्या लाए हो, सो इन्हे ले जा रहा हू ।'

बहुत-सी पतली गलिया पार करते हुए एक अन्धेरे मकान के दरवाज़े के सामने कथावाचक जी खडे हो गए । दरवाज़ा बहुत नीचा था । किसी तरह कथावाचक के साथ उसके अन्दर पहुचकर उनको ऐसा मालूम हुआ कि वहा कोई नही है, सन्नाटा छाया हुआ था । कथावाचक ने दो-एक बार खासा तो इसपर आगन की चारपाई पर लेटे हुए किसी आदमी की नीद खुल गई और उसने मोटी आवाज में हिन्दी में कुछ

पूछा जो अपू की समझ में नही आया। कथावाचक ने अपना परिचय बताया फिर भी ऐसा मालूम हुआ कि वह उसे न तो पहचानता था और न इस समय उसके आने की आशा ही करता था। बाद मे वह आदमी कुछ झुंझलाकर किसीसे कुछ पूछने गया। पर उसके लौटने में इतनी देर होने लगी कि अपू को ऐसा मालूम हुआ कि वह अभी लौटकर यह कहेगा 'तुम लोगो का न्योता नही है यहा से चलते बनो।'

जो कुछ हो, लगभग पन्द्रह मिनट बाद उस आदमी ने आगन के एक कोने में आधे अंधेरे में पत्तल बिछा दिए। पीतल के मोटे लोटे में पानी रख दिया गया। कथावाचक मानो कुछ डरते-डरते आसन पर जाकर बैठ गए। राजा का घर है पता नही क्या खिलाए। बडे आग्रह के साथ लगभग और भी बीस मिनट पत्तल बिछाकर बैठा रहा, पर किसीका पता नही लगा। जब अपू के मन में यह सन्देह हो रहा था कि शायद न्योता न होगा तब परोसनेवाला आदमी रगमच पर प्रकट हुआ। आटे की मोटी-मोटी पूड़िया और बिना स्वाद की बैंगन की तरकारी, अन्त मे बडे-बडे लड्डू। अपू ने लड्डू दात से फोडना चाहा पर वह मुश्किल से फूटा। कथावाचक महोदय ने माग-मागकर दस-बारह मोटी पूडिया खाई। बीच-बीच मे अपू की तरफ देखकर कहते जाते थे 'बेटा शर्म नही करते। बहुत अच्छा खाना है न ? लड्डू बडे सुन्दर है न ? अभी दात ठीक हैं, खूब मजे में चबा लेता हू।'

सो साल एक साथ रहने पर भी सम्भव है कि दो आदमियो मे हृदय की लेन-देन न हो, बशर्ते किसी विशेष घटना के कारण एक दूसरे के हृदय के द्वार को खोलने मे समर्थ न हो जाए। अपू ने बच्चा होते हुए भी यह समझ लिया था कि इस न्योते में बहुत ही अनादर और हेठी हुई। इसके बाद भी जब इस खाने की तारीफ सुना और खुशी प्रकट करते हुए देखा, तो अपू का दिल हिल गया। उसे ऐसा मालूम हुआ कि कथावाचक महोदय बडे ही नदीदे हैं। उसने समझ लिया कि इस अभागे को कभी कुछ खाने को नही मिलता, इसलिए इन लड्डुओ को भी इतने चाव से खा रहा है, मा से कहकर इसे

एक दिन घर मे न्योता देकर खिलाना चाहिए ।

करुणा प्यार का सबसे मूल्यवान उपकरण है, उसीकी चिनाई बडी पक्की होती है । उसके शिशु-मन पर इस परदेशी, दो दिन परिचित पूर्व बगाली कथावाचक का स्थान अपनी दीदी और गुलकी के साथ ही हो गया, वह सिर्फ इसलिए कि लड्डू खाने के लिए इतना अजीव आग्रह दिखलाया ।

इसके थोडे ही दिन बाद कथावाचक बगाल लौट गया । कथा-वाचक के अतिशय अनुरोध के कारण हरिहर अपू को साथ लेकर राजघाट स्टेशन पर उन्हे गाडी चढाने गया । हरिहर को याद पडा कि आज से बाईस साल पहले वह जिस बात को करने घर लौटा था, आज यह व्यक्ति उसकी इस समय की उम्र से आठ साल अधिक उम्र का होते हुए भी, उसी बात को यानी गृहस्थी शुरू करने के लिए चला है । इसलिए उसे लगा कि उसकी भी उम्र कोई अधिक नही है । अब भी वह कोई काम करना चाहे तो कर सकता है ।

गाडी छूट जाने पर अपू की आखो मे आसू आ गए । बच्चे के हृदय मे कई बार अधिक उम्र के व्यक्ति पर भी प्रेम हो जाता है । वह दुर्लभ है, इसलिए उसका मूल्य भी बहुत है ।

माह महीने के अन्त की ओर एक दिन हरिहर एकाएक घर मे घुसकर ही आगन के किनारे बैठ गया । सर्वजया कुछ कर रही थी, जल्दी से काम छोडकर उठ आई 'क्या मामला है ? ऐसे बैठ क्यो गए ? तबियत तो ठीक है ?'

पर पति के मुह की ओर देखकर उसकी बात मुह ही मे रह गई । हरिहर की दोनो आखें लाल सुर्ख हो रही थी । दाहिना हाथ थर-थर काप रहा था । सर्वजया ने हाथ पकडकर ऊपर उठाया तो उसने खोए हुए की तरह कहा : 'मुन्ना कहा है ?'

सर्वजया ने शरीर पर हाथ रखकर देखा तो बुखार के मारे बदन जल रहा था । उसने सावधानी से उसे कमरे मे ले जाकर बिस्तरे पर लिटा दिया । बोली : 'अपू आ रहा है, उसे ऊपर के नन्द बाबू शायद बुलाकर गुदौलिया के मोड पर अपनी दुकान मे ले गए हैं···'

अपू दुकान मे नही गया था, नन्द बाबू के कमरे के सामने छत

पर बैठकर पुस्तक पढ रहा था। एक महीने से नन्द बाबू के साथ अपू का परिचय घनिष्ठ हो गया था। नन्द बाबू की कितनी उम्र थी यह अपू को नही मालूम था, पर वह उसके पिता से छोटा मालूम होता था। उसने नन्द बाबू के कमरे मे कई पुस्तकों को ढूढ निकाला था। जब नन्द बाबू घर पर रहते हैं तो वह पुस्तक लेकर छत पर बैठता है, पर डरता रहता है कि कही नन्द बाबू पुस्तक न छीन लें। एक दिन ऐसा ही हुआ था। छत के एक कोने पर धूप मे बैठकर अपू किताब पढ रहा था, इतने मे नन्द बाबू घर के अन्दर कुछ खोजने आए और उसे देखकर डाटते हुए बोले : 'रख, रख दे। बस बैठे-बैठे कोई काम नही, पढना रहता है। कहा की चीज कहा रख देना है, काम के वक्त खोजे नही मिलती। चल, रख दे किताब, भाग जा।'

वह तो घर की किसी और चीज को छूता ही नही था, फिर इस तरह डाटने की जरूरत क्या थी ? तब से वह डरते डरते किताब लेता था।

नन्द बाबू सध्या समय माग निकाल, अच्छा कुरता पहिन, शीशी से कोई खुशबू लगाकर घूमने जाते हैं। उन्होने अपू पर एक दिन वह खुशबू छिडक दी थी, अच्छी-खासी भीनी खुशबू है।

वह पहले-पहल सध्या के बाद नन्द बाबू के कमरे मे पढने जाता था, पर सन्ध्या के बाद नन्द बाबू अलमारी से एक बोतल निकालकर उसमे से लाल-सी एक दवा पीते हैं। एक दिन अपू उनके कमरे मे उस समय जा पडा था, जब वे दवा पी रहे थे। इसपर उसपर बहुत डाट पडी थी। नन्द बाबू के कमरे मे जाने की सीढी दूसरी तरफ से है। एक दिन क्या हुआ कि अपू एकाएक रात मे उस कमरे मे पहुच गया तो उसने देखा कि कोई अपरिचित स्त्री कमरे मे बैठी है। उस समय नन्द बाबू ने अपू से कहा था : 'अपू, इस समय तुम जाओ, यह मेरी साली हैं, मुझे देखने आई हैं, अभी चली जाएगी।'

लौटते हुए उसने सुना कि नन्द बाबू अपनी साली से कह रहे थे : 'यह हमारे नीचे के किरायेदार का लडका है, इसे कुछ समझ-

वमझ नही है।'

नन्द वावू अक्सर उससे उसकी मा की वात पूछा करते थे। एक दिन वोले 'जाकर अपनी मा से कहकर मेरे लिए पान तो ले आ। मेरा नौकर पान नही लगा पाता।'

अपू कई वार मा से मचल जाता है और ऊपर के लिए पान लगाकर ले जाता है। नन्द वावू जब-तब कहते हैं : 'तुम्हारी मा मेरे सम्बन्ध मे कुछ कहती वहती हैं ?'

अपू घर जाकर मा से कहता हे . 'नन्द वावू वडे अच्छे आदमी हैं, रोज़ तुम्हारी बात पूछते हैं।'

—मेरी बात ? मेरी वात क्या पूछता है ?

—कह रहा था कि अपनी मा से कहना कि मैं उनकी वात पूछा करता हू और अच्छा आदमी हू ......

—पूछने दो। तू पाजी लडका है, ऊपर इतना क्यो जाया करता है ? शाम के समय ऊपर वैठकर क्या करता है ?

हरिहर का वुखार कुछ कम हुआ। अपू स्कूल से आकर कुछ पुस्तकें रख रहा था। पैर की आहट पाकर हरिहर ने पूछा . 'मुन्ना, आओ, ज़रा वैठो।'

अपू वैठकर स्कूल की वातें करने लगा। वह हसकर धीमी आवाज़ मे कहने लगा। 'स्कूल जाते हुए सिर्फ दो ही महीने हुए, पर इसी बीच मे स्कूल के सभी लोग मुझसे प्रेम करते हैं, नित्य फर्स्ट की जगह पर वैठता हू, अव स्कूल की हमारी कक्षा मे हर दूसरे महीने एक पत्र निकला करेगा। मुझे भी पत्र के सचालको मे रखा है, पत्र निकलने पर दिखलाऊगा।'

हरिहर के हृदय मे ममता और वेदना के कारण खलवली मच जाती है। अपू ने एक पत्र निकालकर कहा 'मैंने एक लेख लिखा है, पत्रवालो ने कहा है कि छापेंगे, पर उन लोगो ने कहा है कि जो लोग दो रुपये चन्दा देंगे, उन्ही का लेख छपेगा। पिताजी, दो रुपए दोगे ?

हरिहर ने लडके के हाथ मे उसका लेख लेकर पढना शुरू किया। उसे यह पता नही था कि लडका लिखता भी है। राजकुमार के आखेट की कहानी अच्छी-खासी वनी हे। हरिहर खुशी के मारे

तकिए के सहारे उठकर बैठते हुए बोला : 'मुन्ना, तूने लिखा है ?'

—मैंने तो और भी कितनी ही चीजें लिखी हैं। भूत-प्रेत की कहानी, राजकुमारी को कहानी, घर पर रहते समय रानी दीदी की कापी मे कितनी हो चीज लिख देता था' ....

सर्वजया ने कहानी सुनने मे आग्रह इसलिए नही दिखाया कि रुपये की बात आ गई थी। बीमार पडे हैं, इस हालत मे जो थोटा-बहुत है, उससे घर का खर्च ही नहीं चलता। कोई जरूरत नही है, पत्र मे लेख छपाने की। हरिहर ने समझा-बुझाकर रुपये दिलवाए, बोला 'अजी दे दो, मुन्ने का लेख छप जाए, बीमारी ठीक होते ही, ठाकुरद्वारे का भागवत पाठ तो है ही, उससे दसेक रुपये मिल जाएगे' .. '

दो दिन बाद अपू ने निराश होकर लाल-लाल होठ फुलाकर पिता से चुपके से कहा . 'काम नही बना, छापेखानेवालो ने अधिक दाम मागे है, इसलिए आज स्कूल मे कह दिया है कि चन्दा के चार रुपये होगे।'

लडके को निराश देखकर हरिहर का दिल एक बार बैठ-सा गया। थोडी देर इधर-उधर की बात कहने के बाद उसने कहा : 'मुन्ना देख तो बेटा, तेरी मा किधर गई ?'—फिर तकिये के नीचे से चाभी का गुच्छा निकालकर बोला 'चुपचाप उस छापवाले लकडी के बक्स को, जिसमे मेरी कलमो का बण्डल है, खोल तो ले। कोने मे देख तो कितने रुपये हैं।'

इसके बाद हरिहर सावधानी से बक्स खोलते हुए लडके की तरफ ममता से देखने लगा। भोला, भोला, एकदम भोला ! उसका सुन्दर चाद-सा मुखडा उसकी मा का ही मुखडा है, उसकी आखें उसकी मा की ही आखे है। जब हरिहर नई-नई शादी करके पत्नी को घर ले आया था, तो नई बहू सर्वजया के चेहरे पर जो हसी रहती थी, वह ग्यारह साल के अपू के कलुषहीन चेहरे पर दिखाई पडती है।

बिना कारण हरिहर का स्नेह-समुद्र उद्वेलित होता है और उसकी आखें भर आती है।

अपू जैसे प्रथम वसन्त की नई कोपल है। उसके मुखडे पर जो आनन्द रहता है, वह जैसे प्रभात की नव-अरुणाभा है। उसकी वडी-वडी नील आभायुक्त आखो की चितवन मे उसे अपने विगत यौवन के असीम स्वप्न, सुनील पहाड के नये शाल-वृक्षो की कतारों की उल्लसित मर्मरध्वनि तथा तटहीन समुद्र की दूर से आई हुई सगीत-ध्वनि सुनाई पडती हैं।

अपू ने चुपके से पिता को दिखाते हुए कहा : 'पिताजी चार रुपये हैं।'

हरिहर ने वक्त-वेवक्त के लिए इन चार रुपयो को अपने बक्स मे छिपाकर रखा है। सर्वजया को इनका पता नही है, इसलिए वह निश्चिन्त होकर बोल सका 'वेटा रुपये ले जा, चन्दा दे देना, पर मा से न वताना।'

अपू ने खुश होकर कहा . 'छप जाने पर तुम्हे दिखलाऊगा। कहा है कि मेरा नाम छपेगा। इस सोमवार से अगले सोमवार को निकलेगा।'

अगले दिन सवेरे से हरिहर की बीमारी फिर वढी। सर्वजया ने डरकर लड़के से कहा . 'जा नन्द बाबू से कह दे, आकर एकबार देख जाए।'

नन्द वावू ने देखकर कहा 'अपूर्व डाक्टर को वुलाना पडेगा, तुम अपनी मा से कहो।'

शाम के समय नन्द वावू स्वय ही एक डाक्टर को साथ ले आए। डाक्टर ने देखने-दाखने के वाद कहा : 'ठड मार गई है, ब्राको निमोनिया है। अच्छी नर्सिग चाहिए। नीचे के कमरे मे इस तरह कही कोई रहता है ? मुन्ना, तुम एक शीशी लेकर मेरे दवा-खाने मे आओ, मैं दवा दूगा।'

अपू कई दिनो तक दशाश्वमेघ घाट से डाक्टर की डिस्पेंसरी से दवा लाता रहा, पर खास फायदा नही मालूम हुआ। हरिहर दिन-दिन कमज़ोर पडने लगा। इधर जो थोडे-वहुत रुपये थे, वे फीस और पथ्य मे खर्च हो गए। डाक्टर ने कहा 'कम से कम सेर-भर दूध और दूसरे फल न खाने पर रोगी कमज़ोर हो

जाएगा।'

उसने साढे तीन रुपए दाम की एक विलायती भोजन की भी व्यवस्था की। परदेश था। एक बार कोई आकर हिम्मत बधाए, ऐसी भी सम्भावना नही थी। सर्वजया की आखो मे अधेरा छा गया।

इस विपत्ति मे भी सर्वजया और एक नई मुसीवत मे फस गई। ऊपर की छत पर कोई खडा होकर देखे, तो वहा से वह जगह दिखाई देती थी जहा सर्वजया रसोई करती थी। इससे पहले भी कई बार सर्वजया ने नन्द वावू को उसके रसोईघर की तरफ ताक-झाक करते देखा है, पर हरिहर के बीमार पडने के बाद मे नन्द वाबू की शरारतें वहुत वढ गई। तरह-तरह के वहानो से वह दस-बीस वार उसके कमरे मे आते थे। पहले-पहल वह अपू को बीच मे रख-कर वात करता था पर अब सीधे-सीधे वात करने लगा था। पहले-पहल सर्वजया ने इसपर ध्यान नही दिया बल्कि विपत्ति के समय इस आदमी ने गैर होते हुए भी वडी सहायता की है, यह सोचकर वह मन ही मन कृतज्ञ थी, पर धीरे-धीरे उसे ऐसा मालूम होने लगा कि कही कुछ दाल मे काला है और ऐसी वात हो रही है जो नही होनी चाहिए। नन्दवावू स्वय पान के पत्ते खरीदकर सर्वजया के सामने रखते हुए कहता था 'जिन्दगी-भर नौकरो का लगाया हुआ पान खाते तबियत उकता गई। जरा आप पान तो लगाइए, भाभीजी!'

इसपर भी सर्वजया ने कोई आपत्ति नही की बल्कि इस प्रवासी स्वजन स्नेहवचित व्यक्ति पर उसके मन मे कुछ करुणा ही उत्पन्न होती थी, पर आना-जाना धीरे-धीरे इतना बढने लगा कि वह भद्रता की सीमा लाघ गया। आजकल पान लाकर कहता है : 'भाभीजी, पान तो ले लीजिए।'

मानो वह यह चाहता है कि सर्वजया पान उसके हाथ से ले ले। अपू तो पगला है। अक्सर घर पर उसका पता नही मिलता। उस कमरे मे हरिहर बेसुध पडा है, अपू गायव है और ठीक ऐसे ही मौके पर नन्द वाबू रोगी देखने आता है। इधर-उधर की वातो और वहानो मे वह आध घटे से पहले टलता नही। कहता है 'भाभीजी, बिलकुल

आप चिन्ता न करें। मैं तो ऊपर रहता ही हूं। अपू न मिले तो आप सीढ़ी पर चढकर आवाज़ दीजिए। विपत्ति के समय सभी कुछ करना पड़ता है। जरा चूना तो लाइए ! पान का डठल नहीं है ? तो लाइए उगली से ही दे दीजिए।'

हरिहर को ज्योंही होश आता है, वह लड़के के लिए व्याकुल हो जाता है। इधर-उधर ताककर उसने महीन आवाज मे कहा : 'लड़का कहा है ?'

सर्वजया ने कहा : 'आ रहा होगा। यह कम्बख्त लड़का जरा पास भी नही बैठता। शायद घाट पर गया हो।'

जब लडका घर पर आता है, तो वह उससे कहती है : 'अपने पिता के पास भी नही जाता ? उधर वे हैं कि मुन्ना-मुन्ना करके पागल हैं, पर मुन्ना को कोई परवाह नही। चल, पास बैठ, सिर पर और बदन पर हाथ नही फेरते बनता। लड़का है तो क्या स्वर्ग मे सीढी लगवा देगा ? चल बैठ।'

अपू झेंपकर पिताजी के सिरहाने बैठता है, पर थोडी देर बैठकर मन ही मन सोचता है कि कितनी देर बैठू। मुझे खेलना या घूमना नही है ! कड़ाके की सर्दी के कारण पैर ठिठुर जाते हैं। उसका मन छटपटाता है। और वह एक ही छलाग मे दशाश्वमेध घाट पहुच जाता है। जल की स्वच्छ धारा, निर्मल, खुली हवा, अच्छे कपड़े पहने हुए लोगो की भीड, पलटू, सुधीर, गुल्लू, पटल, पलटू के बड़े भैया। रामनगर के राजा की मोरपखी आज दिन चार बजे रेस करने वाली है। वह फिर भी शर्मा-शर्मी मे सन्ध्या तक निकल नही पाता, मां के डर के मारे जाने की हिम्मत नही पडती।

एक दिन सवेरे सर्वजया ने लडके से कहा . 'यह तो बता कि उस सफेद मकान के बगल मे कौन-सा छेत्र है ?'

—मुझे नहीं मालूम।

—यहां आकर तूने एक दिन भी छेत्र मे खाना नही खाया ? पर काशी में आने पर छेत्र मे खाना पड़ता है, यह तुझे नही मालूम? आज जा, वहां खा आ और देख आ······

—काशी में आने पर छेत्र में क्यो खाना पडता है ?

—खाने पर सवाब होता है। आज दशाश्वमेध घाट पर नहाकर उधर से खाते आना।

दिन के बारह बजे अपू छेत्र से खाकर घर लौटा। उसकी मा रसोईघर के बरामदे मे बैठकर कटोरी मे से कुछ खा रही थी। उसे देखकर पहले उसने छिपाने की चेष्टा की, पर अपू बिलकुल पास आ गया था, इसलिए कही शक न पड जाए, यह सोचकर उसने बहुत साधारण ढग से कहने की चेष्टा की 'खा आया ? कैसा खिलाया ?'

मा भीगी हुई अरहड की दाल खा रही थी।

—बिलकुल रद्दी। कुम्हडे की कुछ लेई-सी बनाई थी। बैठे-बैठे परेशान होते रहे। बिलकुल मैले-कुचैले कपड़े पहने हुए लोग वहा खाते हैं, मैं वहा अब नही जाने का। मुझे सवाब नही लेना है। मा, यह क्या खा रही हो ? क्या तुम्हारा कोई व्रत है ? क्या घर मे खाना नही पका ?

आज तो मेरा कुलुइचण्डी व्रत है, इसलिए भीगी हुई दाल खा रही हू। खाने मे अच्छी लगती है। बहुत पसन्द है। उस जून भी भीगी दाल खाना।

रात को भी चूल्हा नही जला। मा बोली 'अरहड की भीगी हुई दाल खाकर तो देख। बहुत अच्छी लगेगी। इस जून खाना नही पकाया। और तू खाता ही कितनी है। दाल खा लेगा तो फिर तुझसे खाया क्या जाएगा ? जरा-सा तो पेट है।'

अगले दिन दोपहर के समय नन्द बाबू ने अपू के हाथ मे बहुत सारे पान देते हुए कहा 'जा अपनी मा से कह कि पान लगा दे।'

सर्वजया रोगी के कमरे के पास बैठकर पान लगा रही थी, उधर नन्द बाबू जूते चटर-पटर करते हुए ऊपर से उतरा और रोगी के कमरे मे गया, फिर वहा से फौरन ही सर्वजया जहा पान लगा रही थी वहा पहुचा। सारी रात जागकर सर्वजया ऊघ रही थी, जूते की आवाज से उसकी नीद टूट गई और उसने देखा कि एकदम सामने नन्द बाबू खडा है। नन्द बाबू ने छूटते ही कहा : 'भाभीजी, पान लगा लिए ?'

सर्वजया ने बिना कुछ कहे पान की गिलोरियो की तश्तरी को सामने को ओर कर दिया। नन्द बाबू ने एक पान मुह मे रखते हुए

कहा · 'भाभीजी, आपके पान मे चूना बहुत कम रहता है। जरा हटो तो मैं लेता हू।'

पानदान सर्वजया की गोद के पास था। घर मे कोई नही था। अपू कही गया हुआ था। बगल के कमरे मे हरिहर दवा के असर से सो रहा था। ठीक दोपहरी मे सन्नाटा छाया हुआ था। एकाएक सर्वजया को ऐसा लगा कि नन्द बाबू चूना लेने के बहाने से उसके बहुत पास आने की चेष्टा कर रहा है, वह एकाएक चीखकर पलक मारते ही कमरे के बाहर चली गई। उसके अन्दर एक बिजली-सी दौड गई। उसने उगली से सीढी दिखाकर तेजी के साथ कहा : 'अभी ऊपर चले जाइए, फिर कभी नीचे न आइए। जो आप नीचे आए तो मैं सिर फोड लूगी। आप क्यो आते हैं ? खबरदार, फिर न आइएगा।'

सर्वजया बुरी फसी थी। प्रवास, तिसपर घर मे रोगी, हाथ मे कौडी नही, कही कोई जान-पहचान का नही, लडके की उम्र सिर्फ ग्यारह वर्ष, सो भी बिलकुल बुद्धू और सिलबिल्ला। इधर यह उत्पात लगा रहता है।

ऊपरवाली पजाबी महिला नीचे बहुत कम आती थी। वह एकाध बार सर्वजया को ऊपर अपने कमरे में ले गई थी, पर पाच छ महीने काशी मे रहने पर भी सर्वजया न तो हिन्दी बोल पाती थी और न समझ पाती थी, इसलिए बातचीत बिलकुल नही जमती थी। आज वह उसके पास जाकर नन्द बाबू की सारी करतूत बताकर रोने लगी। पजाबी महिला का नाम सूर्यकुमारी था। पति-पत्नी दोनो ठेठ पजाब के रहनेवाले थे। पति रेल में ओवरसियर था। यद्यपि महिला की उम्र कम नही थी, पर देखने मे उसकी उम्र कम लगती थी। वह गोरी-चिट्टी, बडी-बड़ी आखोवाली तथा गठे हुए शरीर की थी। उसने सब कुछ सुनकर कहा · 'कोई डर की बात नही है। आप चिन्ता न करें। अगर कुछ बदमाशी की गल करें, तो मुझे बतलाइएगा, मैं अपने पति से उसकी नाक कटवा लूगी···'

ठीक दोपहर का समय था। कई रात जगने के बाद सर्वजया फर्श पर आचल बिछाकर सो रही थी। उत्तरवाले कमरे के जगले से धूप की एक पतली तख्ती छोटे-से आगन मे तिरछी होकर पड रही

थी। अपू ने मिट्टी के सकोरे में गेंदे के पौधे लगाए थे। दो-तीन मामूली गेंदे के फूल लगे हुए थे। नीचे बिल्ली का एक बच्चा बैठा था, अपू पिताजी के बिस्तरे के पास ही बैठा था। उसका पिता आज सबेरे से कुछ ठीक-सा था। डाक्टर ने कहा था कि शायद अब जीवन की आशा हो गई है। रोगी पहले से ठीक होने पर भी इस समय पूरे होश में नहीं था।

हरिहर ने एकाएक आख खोलकर लडके की ओर घूमकर कुछ कहा। अपू को ऐसा लगा कि पिताजी उसको पास आने के लिए कह रहे हैं। अपू पास गया तो हरिहर ने उसे अपने रोग-जीर्ण दुबले हाथो से गले से लगा लिया और बडी देर तक घूरता रहा। अपू को कुछ आश्चर्य हुआ। उसने अपने पिताजी की आखो मे ऐसी दृष्टि कभी नही देखी थी।

रात दस बजे के समय सोए हुए अपू की नीद किसी बात से खुल गई। घर मे बहुत मद्धिम रोशनी थी। मा गहरी नीद मे सो रही थी, पर पिताजी के गले से कोई अजीब ढग की आवाजें निकल रही थी। उसे जाने कैसा भय-सा लगा। कालिख लगी हुई शहतीरें, सीला हुआ फर्श, कडाके की सर्दी, लकडी के कोयले का धुआ, सब कुछ मिलकर जैसे एक भयकर दु स्वप्न था। पिता की बीमारी अच्छी हो जाए तो जान मे जान आए।

रात के अन्तिम पहर मे मा ने अपू को जोर से धक्का दिया, जिसपर अपू की नीद टूट गई 'अपू, ओ अपू, जल्दी से ऊपर जाकर हिन्दुस्तानी बहू को बुला तो ला।'

अपू ने उठकर देखा कि पिताजी के गले से निकलने वाली वह आवाज और भी बढ गई है। ऊपर से सूर्यकुमारी के आने के थोडी देर बाद ही रात चार बजे हरिहर का प्राणपखेरू उड गया।

जब वर्षा का बीच होता है और मूसलाधार पानी पडता है और धुन्ध छाई रहती है, उस समय यह शक होता है कि पृथ्वी पर धूप से उद्दीप्त जो दिन होते हैं वह कल्पना-मात्र है या सत्य है। ये बादल, यह दुर्दिन, भविष्य के अनन्त मार्ग मे ये ही चिरसाथी के रूप मे रह गए। क्षितिज की माया-भरी लीला की तरह चैत-बैसाख के जो दिन भूत-

काल मे विलीन हो गए, वे भला अब कहां लौटते है ?

सर्वजया चारो तरफ से जैसे एक भयकर धुन्ध से घिर गई। न तो उसके अन्दर से रास्ता सूझ रहा था, न साथी पहचान मे आता था, न यह मालूम होता था कि हम कहा हैं। उस समय यही लगता था कि शायद दिन निकलने पर और धूप चढ़ने पर भी यह धुन्ध बनी रहेगी, बात यह है कि इसके पीछे आसमान को छा देनेवाले फीके, मटमैले दिन-भर के बादल जमा हैं।

विपत्ति के दिनो मे पजाबी ओवरसियर जालिमसिंह और उसकी स्त्री बहुत काम आई। जालिमसिंह ने दफ्तर से नागा करके अर्थी उठाने के लिए लोगो के प्रबन्ध के लिए बगाली टोले मे काफी चक्कर लगाया। खबर पाकर रामकृष्ण मिशन के कुछ स्वय सेवक भी आ गए।

मणिकर्णिका घाट मे दाह-सस्कार करने के बाद सध्या समय अपू ने स्नान किया और ठडी पछवा मे थरथर कापते हुए सीढ़ी चढने लगा। रामकृष्ण मिशन का एक स्वय सेवक और नन्द बाबू उसे अशौच-सूचक उत्तरीय वस्त्र पहना रहे थे। दिन काफी ढल चुका था। अस्ता-यमान सूर्य की किरणें पत्थर के मन्दिर के कगूरो पर कुछ-कुछ चमचमा रही थी। दिन-भर की घटनाओ से खोए-खोए-से अपू को ऐसा लगा कि उसके पिता के परिचितकठ मे उत्सुक श्रोताओ के समक्ष कोई जैसे आवृत्ति कर रहा है—काले वर्षतु पर्जन्य पृथिवी शस्यशालिनी···

जिस पिताजी को आज सबने मिलकर यहा लाकर मणिकर्णिका घाट पर दाह किया था, रोग तथा जीवन-सग्राम मे पराजित उसका पिता उसके लिए स्वप्न-मात्र है, वह उसे न जानता है, न पहचानता है, उसके निकट तो उसके पिता बराबर एक ऐसे व्यक्ति है जिनपर पूरा भरोसा किया जा सकता है। वे सुपरिचित हसमुख पिता उसके बच-पन से ही सहज-सुकण्ठ मे रोज की तरह कही बैठकर उदास पूरवी के सुर मे आर्शीवाद दे रहे है

काले वर्षतु पर्जन्य पृथिवी शस्यशालिनी
लोका. सन्तु निरामया.················

किसी तरह एक महीना निकल गया। इस एक महीने के अन्दर सर्वजया ने तरह-तरह की बातें सोची है पर कोई भी ढग की नही जचती। दो-एक बार बगाल के अपने घर मे लौटने की बात उसके मन मे नही आई, ऐसी बात नही है, पर जब भी वह बात उसके मन मे उठी, वह उसे दबा जाती थी।

पहली बात तो यह थी कि अपने देहात मे एक घर के अलावा बाकी सभी कुछ कर्ज चुकाने के लिए बेच दिया गया था, अब जमीन वगैरा कुछ भी नही रह गई थी। दूसरी बात यह है कि वहा से बिदाई लेने के पहले जहा भी गाव की जो कोई बहू-बेटी मिलती थी, उसके सामने वह भविष्य का बहुत उज्ज्वल चित्र दर्शा चुकी थी। उसने ऐसा कहा था कि निश्चिन्दिपुर की मिट्टी छोडे कि बस! इस मनहूस जगह मे उसके विद्वान पति की कद्र किसीने नही की, पर वह जहा जा रही थी वहा उसे सब हाथो-हाथ ले लेंगे। किस्मत के पलटा खाने मे एक साल भी नही लगेगा, इत्यादि बातें सर्वजया हाथ-मुह हिलाकर तरह-तरह से उन लोगो को समझा चुकी थी। अब अंत लगा था, साल-भर भी पूरा नही हुआ। इसी बीच वह इस तरह अस-हाय और गई-बीती हालत मे पहुच गई, तिसपर विधवा भी हो गई, अब वह वहा लौटकर सबके सामने किस मुह से खडी होगी, यह सोच-कर वह लज्जा और सकोच से गडी जा रही थी। जो होना हो यही हो जाए। वह लडके का हाथ पकडकर काशीजी की सडक पर भीख मागते हुए उसे पालेगी, यहा भला उसे कौन देखने आता है?

महीने-भर बाद एक मौका और मिला। केदार घाट के एक भद्र पुरुष ने रामकृष्ण मिशन के दफ्तर मे खबर दी कि उनके परिचित एक धनी परिवार को एक ब्राह्मणी की जरूरत है। वह घर मे रहेगी और काम-काज मे हाथ बटाएगी। मिशन ऐसी किसी स्त्री का पता दे सकता है या नही?—अन्त तक मिशन के प्रभाव के कारण वे भद्र पुरुष अपू और उसकी मा को वहा भेजने पर राजी हो गए। सर्वजया

को जैसे अथाह समुद्र मे तिनके का सहारा मिला। दो दिन बाद उस भद्र पुरुष ने खबर भेजी कि ये लोग काशी का बूदोवास उठाने के लिए तैयार हो जाए, क्योकि उस धनी गृहस्थी का घर कही और है, वे तो काशीजी मे घूमने-भर आए हैं, लौटते समय साथ ले जाएगे।

पीले रग की बहुत बडी हवेली थी। काशीजी मे जैसे बडे-बड़े मकान हैं, इसी तरह बहुत बडी हवेली। सबके पीछे-पीछे सर्वजया लडके को साथ मे लेकर सिमटी हुई मकान के अन्दर दाखिल हुई।

भीतर महल मे पैर रखते ही स्वागत के लिए एक हल्ला हुआ, पर यह स्वागत सर्वजया के लिए नही बल्कि काशी से जो दल अभी लौटा था उसके लिए था।

भीड और गडबड कुछ घटने पर मकान की मालकिन सर्वजया के सामने आई। अच्छी गोल-मटोल थी। पता लगता है कि कभी सुन्दरी रही होगी, उम्र पचास से ऊपर है। मालकिन को प्रणाम करते ही वह बोली : 'रहने दो रहने दो, आओ—आओ, हाय इतनी कम उम्र मे ही···यह लडका है ? अच्छा लडका है। इसका नाम क्या है ?'

किसी और ने कहा· 'घर काशी मे ही है ? नही ? तो शायद···'

सबकी कौतूहल-भरी दृष्टि के कारण सर्वजया को बहुत लज्जा और बेचैनी मालूम हो रही थी। जब मालकिन के हुक्म पर नौकरानी उसे उसके लिए निर्दिष्ट कमरे मे ले गई, तभी उसके दम मे दम आया।

अगले दिन से सर्वजया करार के अनुसार रसोई मे लग गई। रसोई बनानेवाली वह अकेली नही थी, चार-पाच रसोई करनेवाली थी। तीन-चार रसोईघर थे। मछली-गोश्त के अलग, वैष्णव भोजन के लिए अलग, इसके अलावा दूध का कमरा, रोटी का कमरा, अतिथि-अभ्यागतो के लिए रसोईघर था। नौकर-चाकर अनगिनत थे। रसोईघर वाला हिस्सा अन्त पुर मे होने पर भी उससे कुछ अलग था। उधर तो जैसे नौकर-चाकर और रसोइयो का राज था। घर की स्त्रिया काम-काज बता तथा समझा जाती थी। विशेष कारण न होने पर वे इधर नही रहती थी।

इस बात पर विचार हुआ कि सर्वजया क्या पकाए। सर्वजया को बराबर यह विश्वास था कि वह बहुत अच्छा पकाती है। उसने कहा कि वैष्णव तरकारियो को पकाने का भार उसे दिया जाए। इसपर रसोई बनानेवाली ब्राह्मणी मोक्षदा मुस्कराकर बोली· 'तुम बाबुओ की रसोई करोगी ? तुमने रसोई की तो बस ग्रटा चित हो गया'—कहकर उसने पची नौकरानी को पुकारकर कहा : 'अरे पची, सुन रही है, काशी से यह जो आई हैं, कह रही हैं कि यह बाबुओं की तरकारी पकाएगी ! तुम्हारा नाम क्या है जी ? मैं बडी भुलक्कड हू।'

उस दिन मोक्षदा की व्यग-भरी हसी सर्वजया को बहुत खटकी थी, और वह सकुचित हो गई थी, पर वह दो-एक दिन ही मे समझ गई कि उसके गाव-गवईवाली कोई रसोई यहा चल नही सकती। उसने यह पहली बार सुना कि रसे मे इतनी चीनी डाली जाती है या करमकल्ले की फ्रिटर्स नाम की कोई तरकारी होती है।

मालकिन ने दो-एक महीने सर्वजया की अच्छी देखभाल की, जैसे हल्का काम देना, खबर आदि लेते रहना। पर थोडे दिनो मे वह बाकी लोगो मे विलीन हो गई। दिन के दो बजे तक काम करने के बाद वह पहले-पहल बहुत हार-थक जाती थी, इस तरह लगातार आग के सामने रहने का अभ्यास उसे कभी नही था। इतनी देर मे भूख भी मर जाती थी। रसोई करनेवाली दूसरी स्त्रिया अपने लिए मछली, तरकारी आदि छिपाकर रख लेती थीं, कुछ खाती थी और कुछ बाकी पता नही कहा ले जाती थी। पर वह तो नाम-मात्र के लिए खाने को बैठती थी।

रसोई का यह विराट रूप देखकर सर्वजया दातों तले उगली दबाकर रह जाती थी। उसे स्वप्न मे भी इतने विशाल प्रबध की धारणा नही थी। वह मन ही मन सोचा करती थी कि रोज दो जून मे तीन सेर तो तेल ही खर्च हो जाता है। यहा रोज एक भोज के लायक तेल-घी खर्च होता है ! गाव-गवई की गरीब घर की छोटी गृहस्थी का अनुभव लेकर वह इन सारी बातो को समझ नही पाती थी।

एक दिन महीन चावलवाली बडी देगची उतारते समय उसने

मोक्षदा ब्राह्मणी को पुकारकर कहा : 'मौसीजी, ज़रा देगी तो उतरवा दो।'

पर मोक्षदा ने सुनी-अनसुनी कर दी।

इधर चावल नीचे लगने जा रहा था, यह देखकर उसने भारी देगची खुद ही उतार ली. पर उतारते समय वह कुछ टेढी हो गई और पैरो पर माड पड़ जाने के कारण तुरन्त ही फफोले पड गए। मालकिन ने उसी दिन उसे रोटीवाले रसोईघर मे भेज दिया, पैर अच्छा न होने तक उसकी छुट्टी-सी हो गई।

सर्वजया लडके के साथ नीचे के एक कमरे मे रहती थी। कमरा पश्चिम के दालान के पास था। पर वह इतना नीचा था और उसका फर्श इतना सीला हुआ था कि कमरे से हर समय एक बास-सी आती रहती थी, इसके मुकाबले मे तो काशी वाला कमरा अच्छा था। दीवार के नीचे की ओर रेह लग गई थी। इधर-उधर पीक के दाग थे। हर बार कमरे मे घुसकर ही अपू कहता था 'मा, तुम देखती हो काहे की बदबू आती है, हू-ब-हू पुराने चावल या पता नही किस चीज़ की बू है।'

मालिको ने इन कमरो को मनुष्यो के रहने लायक बनाया ही नही था, इनमे नौकर-चाकर रसोइए जो रहते थे!

अपू ने ऊपर के सब कमरो को घूम-घामकर देखा है, बडे-बडे जगले हैं और दरवाजे है, जगलो पर काच लगा है। हर कमरे मे गद्दीदार कुर्सिया, साफ-सुथरी मेजें थी, इतनी साफ कि उनमे चेहरा देख लो। अपू के घर मे कारपेट का पुराना एक आसन था, वैसे ही पर उससे बहुत मोटा, अच्छा और नया कारपेट ज़मीन पर बिछा था। दीवार पर आईने लगे हुए थे, वे इतने बडे थे कि अपू का कद्दे-आदम चेहरा उसमे दिखाई पडता था। वह मन ही मन हैरान होता था कि इतने बड़े-बडे काच मिलते कहा से हैं, शायद जोड़कर बनाया हो।

दूसरी मंज़िल के बरामदे मे एक बहुत बडा गोल कमरा है, वह अक्सर बद रहता है. पर नौकर-चाकर उसकी हवा साफ करने के लिए कभी-कभी उसे खोलते हैं, उसमे क्या है, यह जानने के लिए अपू

को बहुत उत्सुकता रहती है। एक दिन उस कमरे का दरवाज़ा खुला पाकर वह उस कमरे मे घुस गया। अरे बाप रे ! कितनी बड़ी-बड़ी तस्वीरें हैं ! और पत्थर के गुड्डे, गद्दीदार कुर्सिया, आईने······

उसने घूम-घूमकर सारी चीजें देखी। इतने मे छोटू खानसामे ने उसे कमरे के अन्दर देखकर नाराज होते हुए कहा . 'कौन वा ? तुम काहे इसमे घुसा ?'

शायद उस दिन मार पड़ती, पर एक नौकरानी ने दालान से उसे देखते हुए कहा 'अरे छोटू, जाने दे, उसकी मा यही काम करती है।'

जब सब लोग खा-पी चुकते थे, तब सर्वजया अढाई बजे अपनी कोठरी मे आकर कुछ देर सोती थी। दिन-भर मे यही समय है, जब मां के साथ दिल खोलकर बात होती है, इसीलिए अपू इस समय कोठरी मे रहता है। मा उसे दिन मे एक बार अपने पास चाहती है। इस घर मे आने के बाद अपू जैसे कुछ गैर हो गया है। दिन-भर, खटो और खटो, लडके से भी गैर हो जाना पडा है। जब वह बहुत रात होने पर काम खत्म करके आती है तो अपू सो चुका होता है। इसलिए वह दोपहर के लिए लालायित रहती है।

दरवाज़े पर पैर की आहट हुई। सर्वजया बोली : 'कौन, अपू, आ जा···' अपू मा से सटकर बैठ गया। उसकी मा ने स्नेह के साथ उसकी ठुड्डी पर हाथ रखकर कहा : 'दोपहर के समय कहां रहता है ?'

अपू ने हंसकर कहा · 'ऊपर की बैठक मे ग्रामोफून बजता है, सो बरामदे से सुना करता हू ·····

सर्वजया खुश हुई।

—बाबुओ के लड़को के साथ तेरी जान-पहचान नही हुई ? तुझे बुलाकर बिठाते नही ?

—क्यो नही ? ब-हु-त !······

अपू ने बिलकुल झूठ कहा। उसे बुलाकर कोई नही बैठाता था। ऊपर की बैठक मे जब ग्रामोफून बजता है, तो वह कुछ उधेड़-बुन के बाद डरते-डरते ऊपर चला जाता है और बैठक के दरवाज़े के पास चुपचाप

खडा होकर गाना सुनता है। प्रतिक्षण उसे यही डर लगा रहता है कि कही वे उसे नीचे जाने के लिए न कह दे। गाने खत्म होने पर नीचे उतरते समय वह सोचता है—किसीने कुछ कहा तो नही, भला कहेगे क्यो ? मैं तो वाहर खडे-खडे गाना सुना करता हूं, मैं वावुओ के कमरे के अन्दर नही जाता। ये लोग वहुत अच्छे आदमी हैं।

इस घर के लडके-वच्चो के साथ भी उसका मेल-जोल नही वढा। वे उसे विलकुल पास फटकने नहीं देते थे। उस दिन रमेन्द्र, टेवू, समीर, सन्तू, ये लोग एक चौरस पीढे की तरह एक चीज को बिछाकर उसपर लडकी की काली गोटो से एक खेल खेल रहे थे जिसका नाम कैरम है। वह कुछ दूर खडा होकर खेल देख रहा था, इससे तो अपने देहात का वैंगनवोआ खेल कही अच्छा है।

वैसाख के आरम्भ मे वडे वावू की लडकी की शादी के उपलक्ष्य मे मकान मे वहुत भीड हो गई। गया, मुगेर, कलकत्ता, काशी विभिन्न स्थानो से कुटुम्वो के लोग आने लगे। सव वडे घर की लडकियां और वहुए थी, हरएक के साथ अपने-अपने नौकर तथा नौकरानिया थी। अव रात मे नीचे की मजिल के दालान और बरामदे पर भी उन्हीका दौरदौरा रहता था। लगभग सारी रात हल्लागुल्ला रहता था।

मवेरे सर्वजया को मालकिन ने वुलाकर कहा : 'अपूर्व की मा, तुम एक काम करो। अव दो-चार दिन के लिए तुम रसोई से छुट्टी ले लो। जगह-जगह से सौगातें आ रही हैं। तुम और छोटी मोक्षदा आई हुई खाने-पीने की चीजो को रोटीघर के भडार मे रखती जाओ। मिठाइया वही रखो। जो सडने लायक फल-फुलेरी आए, उसे सदू नौकरानी के हाथ भेज देना, नही तो रख देना। नाश्ते के समय ब्राह्मणी मौसी ले आएगी।'

सवेरे से शाम तक नौकरानी और वैरो के सिर पर जाने कितनी जगहो से कितनी सौगातें आने लगी, जिन्हें सर्वजया गिन भी नही पाती थी। मिठाई इतनी आती रही कि जगह कम पडने लगी। चन्दन रखने की चादी की कटोरिया पन्द्रह-सोलह हो गईं। अभी तक आम नही लगे थे, फिर भी आमो से ही एक वडा टोकरा भर गया।

सर्वजया ब्राह्मणी मौसी के हाथ मे खाना देती हुई सोचती है कि

इतनी अच्छी चीजें आ रही हैं, पर उस लड़के के लिए कुछ नही है। वह तो चपरासियो के खाने के कमरे मे एक कोने मे बैठकर झेंपते हुए पेट भर लेता है, न तो मैं उसे मछली के दो अच्छे कत्तल दे पाती हू, और न अच्छी तरकारी और न एक कलछुल दूध। दू तो यह नदू हरामजादी फौरन चुगली करेगी।

शादी के दिन बहुत भीड हुई। दुल्हा और उसके साथी सवेरे की तरफ आकर शहर के किसी मकान मे ठहरे हुए थे। बरात सध्या के कुछ पहले जुलूस बनाकर ठाटबाट के साथ आ गई।

बाहर का आगन निमन्त्रित मेहमानो से भर गया। सारे आगन मे दरी बिछी हुई थी। उसके एक कोने पर लाल मखमल से बना हुआ आसन था। उसके किनारे चौडी जरी के थे। जरी की ही झालर लगी हुई थी और शामियाना नीले सैटन का था। दुल्हे के बैठने के लिए जो स्थान था, उसके दोनो बगल मे बढ़िया मलमल के तकिये थे। शामियाने के हर मेहराब पर बेला की तीन बडी-बडी मालाए लटकी हुई थी। चारो तरफ बरातियो के लिए गद्देदार कुर्सिया और काउच थे। विलायती सैन्ट और गुलाबजल की पिचकारिया छूट रही थी।

अपू ने यह सब अच्छी तरह नही देखा था, वह सो गया था। वह घर के अन्दर एक ही बार गया था, उस समय स्त्रिया कोई रस्म अदा कर रही थी। रात बहुत हो गई थी। मा कही दिखाई नही पडी। उत्सव की भीड मे पता नही कहा किस काम मे लगी हुई थी। कीमती बनारसी साडी पहने हुए स्त्रियो की भीड के मारे आगन मे कही खडे होने का स्थान भी नही था। छोटे बाबू की लडकी अरुणा किसीको बुलाकर बाहर की बैठक से बडा आरगन घर के अन्दर लाने के लिए कह रही थी। शादी के दो दिन बाद शौकिया नाटक-अभिनय के उपलक्ष्य मे फिर बहुत शोर-गुल रहा। आंगन के एक कोने पर मच तैयार हुआ था और उसे गुलाब तथा आर्किडों से बहुत अच्छी तरह सजाया गया था। पाच सौ शाखाओवाले बडे झाड को स्टेज के बीच मे टागा गया। इन दिनो जो कुछ हुआ था, उससे अपू योंही चौंधिया गया था, पर आज कैसा नाटक होनेवाला है, उसके सम्बन्ध मे उसे कुछ भी ज्ञान नही था। आग्रह और कौतूहल के साथ वह पहले से

ही अपनी अच्छी जगह लेने के लिए ऐन सध्या समय से मंच के सामने डटा रहा।

धीरे-धीरे निमन्त्रित भद्र पुरुष आने लगे। चारो तरफ रोशनी जल उठी। घर के दरवान जरी की कामदार वरदी पहनकर दरवाज़े पर तथा वाहर डट गए। मुशीजी इधर-उधर दौड़कर काम की देख-भाल कर रहे थे। कान्सर्ट शुरू हुआ। जव पर्दा उठने को हुआ तो घर के गुमाश्ते गिरीश सरकार ने उसे पास से देखते हुए कहा · 'अरे, कौन है रे ?'

अपू ने मुह उठाकर उसे देखा पर झेंपू होने के कारण उससे कोई वात कहते नही वनी। उसे उत्तर देने का मौका न देकर गिरीश सरकार वोला · 'उठ-उठ, यहा वावू लोग वैठेंगे।'

गिरीश सरकार ने अन्दाज़न उसे पहचाना था।

अपू ने पीछे की ओर देखकर पहाडा घोखने के ढग से गिड़गिडाकर कहा : 'मैं सही साझ से यहा वैठा हू, पीछे तो सव भर गया है, कहा जाऊ ?'

उसकी वात अभी खत्म भी नही हुई थी कि गिरीश सरकार ने उसे हाथ से पकडकर जोर से झटका देते हुए कहा . 'तेरी ऐसी की तैसी। वकवासी कही का, समझता नही है कि यह वावुओ के वैठने की जगह है और तू रसोइये का वेटा होकर यहा वैठना चाहता है। यह भी मुझे ही वताना पडेगा कि तू कहा जाएगा ? छोटे मुह वडी वात। चल यहा से। कही खम्भे-ओम्भे के पास जाकर वैठ जा।'.

पीछे से दो-एक आयोजको ने कहा . 'गिरीश, क्या मामला है ? काहे का शोर है ? यह कौन है ?'

—देखिए न मैनेजर साहव, यह वडबोला लडका वावुओ मे आकर वैठा है। एकदम सामने वैठा है। उधर चन्दन नगर के वावू लोग आए है, उन्हे वैठने को जगह नही मिल रही है, सो मैं कह रहा हू तो यह मुझसे उलझने पर आमादा है।

मैनेजर वावू वोले 'दो थप्पड लगा दो न।'

अपू गुडमुडी होकर किसी तरफ न ताककर अभिभूत की तरह महफिल के वाहर चला गया। उसे एकाएक लगा कि मजलिस के सारे

लोगो की आख उसपर लगी हुई हैं और सभी कौतूहल के साथ उसकी ओर देख रहे हैं। उसने पहले तो सोचा कि वह दौड़ लगाकर इन लोगो की आखो से बचकर कही भाग जाए। इसके बाद वह एक खम्भे की आड़ मे जाकर खड़ा हो गया। वह थर-थर काप रहा था। भय, अपमान, लज्जा के कारण उसकी सूक्ष्म अनुभूति के तन्तुओ पर बुरी तरह धक्के पर धक्के लगे थे। उसने कुछ संभलकर खम्भे की आड से झाककर देखा······चारो तरफ नौकर-चाकर थे, ऊपर के बरामदे मे टीन की आड मे स्त्रिया थी, नौकरानी और रसोई बनाने-वाली स्त्रिया भी नीचे के बरामदे मे खडी थी। वे सब ही इस घटना को देख रहे हैं, पता नही ये लोग क्या सोच रहे हैं! अपने अनजान मे उसने क्या मुसीबत मोल ले ली! उसे यह क्या मालूम था कि यह बाबुओ की जगह है। वह बार-बार अपने मन को समझाने लगा कि उसको शायद किसीने नही पहचाना। न जाने बाहर से कितने लोग आए हैं, वे उसे भला क्या जानें।

इसके बाद नाटक शुरू हुआ। उधर उसका ध्यान नही रहा। सामने यह अपार भीड, बन्द हवा, रोशनियो का जमघट, दरबान और नौकरो का शोर-गुल, किसी तरफ उसका ध्यान नही था। छोटू खानसामा चादी के हसवाले पानदान से मेहमानो मे पान बाट रहा था, उधर की तरफ देखकर अपू के मन मे जाने कैसी भावना आई। उसने ऊपर के बरामदे की तरफ देखकर सोचा कि ऊधर मा तो नही है? यदि मा को यह बात मालूम हो जाए! पर अपू की शका अकारण थी क्योंकि उसकी मा उस इलाके मे नही थी और यह बात उसके कान मे नही गई।

१९

दूसरे के घर मे बिलकुल परतन्त्र होकर चोर की तरह दबके रहना सर्वजया के जीवन मे यह पहली ही बार हुआ था। चाहे सुख मे रही हो या दुःख मे वह अपने घर की मालकिन हुआ करती थी। वह गरीब घर की रानी थी। वहां उसका हुक्म उसी प्रकार से चलता था

जैसे यहां मालकिन और बहुओ का हुक्म चला करता है। यहा तो हर समय दबकर रहना पडता है, हर समय किसी न किसी की दिलजोई करनी पडती है, किसी ओर का मुह ताककर चलना पड़ता है कि कही छोटी-सी भी त्रुटि न हो जाए। वह यहा सबसे जो छोटे थे, उनसे भी छोटी थी। यह उसके लिए असहनीय हो रहा था। मेहनत के मारे खून थूकने की नौबत आती है, पर यहा खटने की कोई कीमत नही है। जान खपा दो पर यहा कोई पूछनेवाला नही है। ये लोग जब देते हैं तो गरूर के साथ चीज को फेंक मारते हैं। ऐसे नही देते कि खटने का दाम दे रहे हो। बराबरी का दावा बिलकुल नही है। तुम्हे जो कुछ लेना है, घुटना टेककर लेना पड़ेगा।

यह स्थिति उसके लिए असहनीय होती जा रही थी, पर छुटकारा कहा था ? बाहर जाने की सुविधा कहा थी ? कौन आश्रय देगा ? वह कहा खड़ी होगी ?

क्या मरते दिन तक ऐसे ही कटेगी ? उसी ब्राह्मणी मौसी की तरह ?

अभी तक शादी के उत्सव का जोर खत्म नही हुआ था। आज स्त्रियो का भोज था। सध्या के बाद से ही निमन्त्रित महिलाओ की गाडिया पीछे के फाटक से आने लगी। भीतर का बडा दरवाजा पार करने के बाद अन्दर महल के दूसरी मजिल के बरामदे मे जाने के लिए जो चौडी सगमरमर की सीढी है, उसपर नीले फूल बना हुआ कार्पेट बिछा हुआ था। बरामदे और सीढी मे गैस जल रही थी। दूसरी मजिल के बरामदे के सिर पर गैस का बडा झाड़ जल रहा था। दो बहुए और घर की स्त्रिया स्वागत करके सबको ऊपर भेज रही थी। निमन्त्रित स्त्रियो मे से कोई मुस्कराकर, कोई हसी की हिलोरें जारी कर, कोई धीर, कोई क्षिप्र, कोई सुन्दर, अपूर्व रग-ढग से सीढी पार कर रही थी।

अपू बडी देर से नीचे के बरामदे के खम्भे की आड मे खडा होकर देख रहा था। उसने इस तरह का दृश्य जिन्दगी मे पहले-पहल देखा था। शादी की रात को वह सो गया था, इसलिए वह विशेष कुछ नही देख पाया था। उसे इस घर की लडकी सुजाता सबसे अच्छी

लग रही थी। वह कार्पेट बिछी हुई सगमर्मर की सीढी से कई बार नीचे आ रही थी और किसी मेहमान को देखकर मुस्कराती हुई कह रही थी : 'वाह, मणि दीदी, तुमने एकदम रात के आठ बजा दिए ? बकुल बगान की भाभीजी नही आई ? क्या बात है ?'

इसपर सम्बोधित सुन्दरी ने मुस्कराकर कहा . 'छ बजे से गाडी तैयार करके बैठी हू । निकलना कोई हसी-खेल थोडे ही है, तैयार होने मे देर तो लगती ही है···'

सुजाता काचन फूल के रग के कीमती चीनी क्रेप की हथकटी कुर्ती के अन्दर से सफेद गोल-मटोल हाथो से निमन्त्रित को पीछे से आलिगन-सी करती हुई उसके दाहिने कधे पर मुह रखकर एकसाथ सीढी चढने लगी। वह कह रही थी 'मा कह रही थी कि बकुल बगान की भाभी अगले महीने कलकत्ता जाएगी, मा बुधवार के दिन गई थी न ? कुछ ठीक हुआ ?'

सीढी के ऊपरी हिस्से मे मझली बहू रानी दिखाई पडी, उम्र कुछ अधिक है, शायद तीस से कुछ अधिक हो, पर अपूर्व सुन्दरी है । उसके कपडे-लत्ते बहुत सादे है, उसने फीके चम्पई रग की चौडी लाल किनारेवाली रेशमी साडी पहन रखी है, जिसका एक सिरा सिर के बालो के साथ हीरे के क्लिप से अटकाया हुआ है । सीढीवाले बडे झाड की रोशनी मे गले की पतली सोने की चैन चमाचमा रही थी । चेहरा-मोहरा सुन्दर है, साथ ही धीर-गभीर है । इस उम्र मे भी रग ऐसा है, जैसे दूध और आलता मिलाने पर बनता है । एक महीने पहले बहू के योग्य भाई का देहान्त हो गया इसलिए चेहरे पर विषाद की छाया आ गई, पर इससे उसके सौन्दर्य मे एक सयम आ गया है ।

मणि दीदी सीढी पर चढते-चढते मझली बहूरानी को सामने देखकर ठिठककर खडी हो गई, बोली : मझली दीदी, तुम्हारी तबियत कैसी है ? बराबर सोचती हू कि आऊगी-आऊगी, पर आ नही पाती। कल वे लोग इटावा से आ गए, इसलिए बडी रात तक···'

अपू को यह मालूम नही था कि लोग इतने सुन्दर भी हो सकते है । अपू ने पहले-पहल मझली बहू को देखा था क्योकि वह अब तक

यहां नही थी। भाई की मृत्यु के बाद कुछ दिन पहले मायके से आई है। अपू मुग्ध नेत्रो से बिना पलक मारे विस्मय के साथ यह सब देख रहा था। इतनी रोशनी, चारो तरफ सुन्दरियो का मेला, कीमती इत्रो की भीनी-भीनी मोहक महक, वीणा की झंकार की तरह कंठस्वर और हसी। उसपर जैसे कुछ नशा-सा छा गया। यही हर समय चले तो।

मझली वहू वडी देर से देख रही थी कि सीढी के कोने पर कोई अपरिचित लड़का खडा है। वह सवको नही जानती थी, वात यह है कि उसका पिता भी वहुत धनी है, इसलिए वह अक्सर मायके में रहती है। वह दो सीढी उतरकर महीन आवाज से पुकारकर बोली: 'लडके इधर आओ। तुम खडे क्यो हो? तुम कहां से आए हो?'

अपू दूसरी तरफ कुछ नये मेहमानो को देख रहा था। उसने जब अकस्मात् लौटकर देखा कि मझली वहू उसे पुकार रही है, तो उसे बहुत आश्चर्य हुआ। वह करीब-करीब अपनी आख पर विश्वास नही कर पाया। तुरन्त ही उसपर सारी दुनिया की झेंप सवार हो गई और वह सहसा यह निर्णय नही कर सका कि ऊपर जाए या दौड़कर भाग जाए। इतने मे मझली वहू रानी स्वय नीचे उतर आई और पास आकर बोली . 'तुम कहा से आए हो बेटा?'

वडी मुश्किल से, वडे प्रयास के वाद अपू के मुह से निकला: 'मैं···मैं·· वह···मेरी मा इसी मकान मे रहती है।'

साथ ही उसे वहुत डर हुआ कि वह रसोई करनेवाली का लडका होकर यहा क्यो खडा है, कही मझली वहू सारी वात सुनकर किसीको पुकारकर यह न कहे कि 'इसे कान पकडकर यहां से अभी निकाल दो।'

पर मझली वहूरानी ने ऐसा कुछ भी नही किया। वह आश्चय के साथ बोली: 'तुम्हारी मा यहा रहती है? कौन है, क्या काम करती है? तुम लोग यहा कितने दिन से आए हो?'

अपू ने टूटे-फूटे शब्दो मे किसी तरह सारी वात वताई। मझली वहूरानी ने शायद इन लोगो की वात अवके ही आकर सुनी थी, वोली . 'अच्छा तुम लोग काशीजी से आए हो? तुम्हारा क्या नाम है?'

उसकी सुन्दर-सरल आखो की तरफ देखकर उनके मन मे शायद करुणा उमड़ पड़ी हो, बोली . 'ऊपर आओ न। यहा क्यो खड़े हो ? ऊपर आओ।'

अपू चोर की तरह दबे-दबे बहूरानी के पीछे-पीछे ऊपर गया और एक कोने मे जाकर खड़ा हो गया।

ऊपर स्त्रियो की बड़ी भारी मजलिस जुटी थी। सारे बरामदे मे कार्पेट बिछा हुआ था, यत्र तत्र बड़े-बड़े चीनी मिट्टी के गमलो मे गुलाब तथा एरिका पाम लगे हुए थे। एक कोने पर बैठकवाला आरगन बाजा रखा हुआ था। थोड़ी देर खुशामद कराने के बाद एक महिला आरगन के सामने रखे हुए छोटे-से गद्दीदार स्टूल पर बैठ गई और दो-एक बार हलके हाथो से उसपर उगली चलाने के बाद चुप रहकर फिर मुस्कराती हुई एक गीत गाने लगी। लड़की कोई सुन्दरी नही थी। रग भी सावला ही था, पर गला बहुत अच्छा था। इसके बाद एक और महिला ने गाना गाया। यह महिला देखने मे उतनी अच्छी नही थी। मझली बहूरानी की लड़की लीला ने सिर हिलाते हुए एक हास्य-रस की कविता सुनाते हुए सबको खूब हसाया। बहुत सुन्दर लड़की है, मा की ही तरह सुन्दर! और उसकी हसी कितनी मीठी थी।

अपू सोच रहा था कि इस समय उसकी मा ने एक बार ऊपर आकर यह सब देखा क्यो नही। पर मा तो बिचारी रसोईघर मे मर रही होगी, वह भला यह सब देख पाती?

आज सर्वजया को सबेरे से दम मारने की भी फुर्सत नही मिली थी। लगभग दो मन मछली तलने का भार अकेले उसीपर था। सवेरे आठ बजे से वह मछली तलने मे लगी हुई थी। शोर सुनकर उसने कमरे से बाहर आकर देखा कि आगन मे एक भीड़ जमा है और भीड़ के अन्दर एक दुबले-पतले सावले रग के, मैले-कुचैले कपड़े पहने हुए ब्राह्मण के लड़के को दो-तीन जने मिलकर लात, घूसा, थप्पड़ मार रहे हैं। यह आरजी तौर पर आज के लिए काम पर आया था, कहा जाता है कि उसने हुक्के के नारियल मे घी चुराया था।

उसका वह हुक्का एक तरफ को गिरा हुआ था और घी आगन मे फैला हुआ था। मार के कारण उसकी लाग खुल गई थी। वह आदमी मुसीवत मे पडकर कुछ उलटी-सीधी सफाई देने की कोशिश कर रहा था जिसका आशय शायद यह था कि हुक्के के अन्दर घी पाया जाना एक बहुत ही स्वाभाविक और रोजमर्रे की घटना है, इसके लिए इतनी तूल-तवील की कोई जरूरत नही है। वह इन्ही शब्दो मे उन्मत्त जनता को शान्त करने की चेष्टा कर रहा था। पर उसकी वात खतम भी नही हुई थी कि दरवान शम्भुनाथ ने उसे इतने जोर से एक धक्का मारा कि वह अस्फुट स्वर मे 'वाप रे' कहकर सहन के कोने की तरफ चक्कर खाता हुआ गिर पडा और उसका सिर शायद खम्भे के सिर से टकरा गया जिसके कारण सिर से खून आने लगा।

सर्वजया ने खेमी नौकरानी से पूछ-ताछ के वाद कहा 'खेमी मौसी, वात क्या है ? अरे ऐसे थोड़े ही मारा जाता है ? आखिर ब्राह्मण का लडका है।'

खेमी बोली 'मारेगा नही तो क्या पूजा करेगा ? इसकी तो हड्डी-पसली एक कर देनी चाहिए। अभी मार पडी कहा है ? इसे तो पुलिस मे दिया जाएगा। इस तरह दीये तले अधेरा !'

खेमी नौकरानी की वात मुह मे ही रह गई।

वात यह है कि उसने जो ऊपर जाने की सीढी की तरफ आख दौडाई तो वह हक्की-वक्की-सी रह गई। सर्वजया ने देखा कि एक साठ-पैसठ साल की वृद्धा सीढी से उतर रही थी, उनके आसपास मालकिन और पीछे-पीछे वहूरानिया और इस घर की लडकिया अरुण और सुजाता थी। सव नौकर-चाकर नीचे के वरामदे मे एक कतार मे सिमटकर खडे हो गए और एक दूसरे की पीठ से झाककर देखने लगे कि क्या होता है। सर्वजया ने खेमी से चुपके से पूछा 'खेमी मौसी, यह कौन है ?'

खेमी ने मुस्कराकर कहा 'कही की रानी है।'

सर्वजया को अच्छी तरह सुनाई नही पडा, पर उसे ऐसा लगा कि इस चेहरे का व्यक्ति उसने कही पहले देखा है। मालकिन ने किसीसे कहा कि पीछे के फाटक पर इनकी पालकी लगी है या नही,

देख आओ। वृद्धा के साथ भी अपनी दो-तीन नौकरानियां थीं, जो पीछे-पीछे चल रही थीं। विदाई के समय तरह-तरह की बातें हुईं और मालकिन तथा इस घर की स्त्रियां नम्रता के साथ हंसती रहीं। एकाएक इस घर के सब नौकर-चाकर साष्टाङ्ग दण्डवत् करने लगे और कुछ देर तक मिट्टी में उठे ही नहीं। सर्वजया ने मन ही मन सोचा कि ये लोग स्वयं इतने धनी हैं, जब ये लोग इस मेहमान की इतनी खातिर कर रहे हैं तो यह जरूर कोई बहुत प्रतिष्ठित घराने की स्त्री होगी। वृद्धा के सोलह कहारों वाली बड़ी भारी पालकी फाटक पर ही थी।

वृद्धा पालकी पर सवार हो गईं और उनके दरबान पालकी के आगे-पीछे हो गए। उन्हें इस प्रकार विदा करके मालकिन तथा दूसरी स्त्रियां ऊपर चली गईं।

मौसी ने रोटीघर में जाकर धीरे से कहा: 'सब पैसों की माया है। देख लिया ना पैसे की कितनी कद्र होती है! यह बहुत बड़े ताल्लुके की मालिक हैं, पूर्वी बंगाल के किसी कालेज के लिए दो लाख रुपये दिए हैं। पैसों की ही कद्र है। मैं भी तो इनकी कुछ लगती हूं, पर यहां कोई टके सेर भी नहीं पूछता।'

पर सर्वजया का ध्यान उस तरफ नहीं था। उसे अभी-अभी वह बात याद आई जिसको वह इतनी देर से याद करने की चेष्टा कर रही थी। लगभग यही चेहरा और यही उम्र थी उसकी बूढ़ी ननद इन्दिरा पुरखिन की। वह फटे कपड़ों में गांठ लगाकर पहनती थी, टूटी हुई पथरी में आमड़े का भरता और भात खाती थी। एक मामूली जंगली शरीफे के लिए उसका जाने कितना अपमान हुआ। न कोई पूछता था न मानता था। भरी दोपहरी में घर से निकाली गई, और रास्ते में गिरकर उस करुण ढंग से मरी.....

सर्वजया की आंखों में बरबस आंसू आ गए।

मनुष्य की आन्तरिक संवेदना मृत्यु के उस पार पहुंचती है या नहीं यह सर्वजया को नहीं मालूम, फिर भी उसने आज बार-बार मन ही मन क्षमा मांगकर कम उम्र में किए गए अपराध का प्रायश्चित्त करना चाहा।

कई एक दिन बाद अपू आगन से जा रहा था, ऊपर की सीढी से मझली बहूरानी की लडकी लीला उतर रही थी। उसे देखकर बोली 'ठहरो। तुम्हारा नाम क्या है ? अपू है न ?'

अपू बोला · 'मा अपू नाम से पुकारती है, पर मेरा अच्छा नाम श्री अपूर्व कुमार राय है।'

वह कुछ आश्चर्य मे पड गया। इस घर के लडके-लडकियो ने कभी उससे बात नही की थी। लीला पास आकर खडी हो गई। कितना सुन्दर चेहरा है। रानी दीदी, अतसी दीदी, अमला दीदी, सभी अच्छी हैं, और उस जमाने मे उसने उन लोगो से अच्छी कोई लडकी नही देखी थी। पर इस घर मे आकर उसकी पहले की धारणा बिलकुल बदल गई थी, विशेषकर मझली बहूरानी की तरह कोई स्त्री सुन्दर हो सकती है इसकी वह कल्पना भी नही कर सकता था।

लीला भी मां की तरह सुन्दरी है। उस दिन जब लीला स्त्रियो की मजलिस मे हास्यरस की कविता सुना रही थी, तब अपू इकटक उसके चेहरे की तरफ देख रहा था। उसने कौन-सी कविता सुनाई, इसपर उसने विशेष ध्यान नही दिया था।

लीला बोली · 'तुम लोग हमारे घर पर कब आए ? उस बार जब मैं आई थी, तब तो नही थे ?'

—हम लोग फागुन मे आए।

—तुम लोग कहा से आए ?

—काशी से। वही हमारे पिताजी का देहान्त हो गया न, इसीलिए···

अपू को विश्वास नही हो रहा था। सारी घटना इतनी अवास्तविक और असम्भव मालूम हो रही थी। लीला, मझली बहूरानी की लडकी लीला उसे बुलाकर अपने से बात कर रही थी। खुशी के मारे उसके सारे शरीर मे जाने कैसी अनुभूति होने लगी।

लीला बोली : 'चलो, मेरे पढने के कमरे मे चलकर बैठें। मास्टर साहब के आने का समय हुआ है। आओ चलो।'

अपू ने पूछा : 'मैं भी चलू ?'

लीला ने हसकर कहा · 'वाह मैं कह रही हू चलो। तुम तो बड़े झेंपू हो जी। आओ, तुमने मेरे पढने का कमरा नही देखा ? पश्चिम के सहन के किनारे है।'

कमरा कोई बडा नहीं था, पर अच्छा सजा हुआ था। संगमर्मर की छोटी-सी मेज के सामने दो चमडे की गद्दीवाली कुर्सियां थी। एक बडी तस्वीरवाला कलेंडर था। हरी चीनी मिट्टी के केस मे एक छोटी-सी टाइमपीस घडी थी। पुस्तकें रखने का एक छोटा-सा दराज था। दीवारो से चार-पांच बघे हुए फोटोग्राफ थे। लीला ने एक चमडे का अटैंची केस खोलकर कहा : 'यह देखो भिगोकर छापनेवाली तस्वीर है। मास्टर साहब ने खरीद दी है। जो मैं भाग लगाना सीख जाऊगी, तो वह और भी देंगे। तुम यह तस्वीर छापना जानते हो ?'

अपू बोला : 'तुम भाग लगाना नही जानती हो ?'

—तुम जानते हो ? तुमने भाग लगाया है ?

अपू ने अपनी शान दिखाते हुए मुंह विचकाकर कहा · 'मैंने कब का ही सीख लिया !'

मुह विचकाने पर अपू का सुन्दर चेहरा और भी सुन्दर मालूम हुआ। लीला हसती हुई बोली : 'तुम तो बहुत मजेदार ढंग से बात करते हो।'

बाद मे उसने अपू की ठोडी मे हाथ लगाते हुए कहा : यह क्या है ? तिल है ? तुम्हारे चेहरे पर तिल अच्छा लगता है। तुम्हारी उम्र कितनी है ? तेरह ? मेरी ग्यारह है। मैं तुमसे दो साल छोटी हूं।'

अपू बोला : 'तुमने उस दिन वह हास्यरस की कविता मुंह-जबानी सुनाई थी, मुझे बहुत अच्छी लगी।'

—तुम्हे कोई कविता याद है ?

—हा, पिताजी की एक पुस्तक से मैंने सीखी है।

—सुनाओ तो।

लीला की आवाज बहुत मीठी है। उसने किसी लडकी की इतनी मीठी आवाज नही सुनी थी। अपू ने कन्धे हिलाकर कहा :

जे जनेर खड पेते खेजुर चेटाय घूमिए काल काटे।
ताके खाट-पालक खासा मशारि खाटिए दिले कि खाटे।[1]

आवृत्ति के अन्त मे उसने प्रश्नसूचक ढग से सिर हिलाया। बोला · 'दाशूराय की पाचाली की कविता है, मेरे पास वह पुस्तक है।'

लीला हसकर लोट-पोट हो गई। बोली : 'वाह, तुम्हें तो बडी अच्छी-अच्छी बातें याद हैं।'

लीला के मुह से अपनी प्रशसा सुनकर अपू फूला नही समाया। उसने उत्साह के साथ कहा . 'और एक कविता सुनाऊ ?'—कहकर उसने शहतीर की तरफ देखकर कुछ सोचकर फिर पहले की तरह कन्धे हिलाकर कहने लगा।

मुनिर चिन्ता चिन्तामणि नाई अन्य आशा,
निष्कर्मा लोकेर चिन्ता तास आर पाशा।
धनीर चिन्ता धन आर निरेनब्बई एर धाक्का,
योगीर जिन्ता जगन्नाथ, फकिरेर चिन्ता मक्का।
गृहस्थेर चिन्ता बजाय राखते चारि चालेर ठाट्टा,
शिशुर चिन्ता सदाई माके, पशुर चिन्ता पेट्टा।[2]

लीला इन सब बातो का अर्थ नही समझ पाई, पर वह फिर से हसकर लोट-पोट होने लगी। बोली · 'लाओ, लिख लू।'

लीला ने अटैचीकेस से एक कलम निकालते हुए कहा 'मैं लिखती हू, बोलो।'

---

१ जो फूल बिछाकर खजूर की चटाई पर लेटने का आदी है, उसे पलग लगाकर मसहरी के अन्दर सुला दो तो, उसे वह क्या भाता है?

२. मुनी जी जब कभी चिन्ता करते है तो ईश्वर की चिन्ता करते हैं, और उन्हें किसीकी आस नहीं है। ठलुआ आदमी ताश और पाशे के विषय में सोचता है। धनी धन की चिन्ता करता है और निन्यानवे के फेर में पडा रहता है। योगी जगन्नाथ की और फकीर मक्के की चिन्ता करता है। गृहस्थी किसी तरह अपने ठाठ बनाए रखने की बात सोचता है, शिशु मा की चिन्ता करता है और पशु पेट भरने की फिक्र में रहता है।

अपू ने फिर से कविता सुनाई। थोड़ी देर बाद आश्चर्य के साथ बोला . 'तुमने स्याही नहीं ली, फिर लिख कैसे रही हो ?'

लीला ने अपू के हाथ मे कलम दे दी, और बोली 'यह फाउण्टेन-पेन है, इसमे स्याही भरी रहती है, क्या तुमने अभी तक फाउण्टेनपेन नही देखा ?'

अपू ने कलम को उलट-पुलटकर कहा · 'यह तो अच्छी चीज है, स्याही मे नही डूबानी पड़ती है।'

—इसमे स्याही भरी जो रहती है, देखो, दिखाती हू

—वाह बहुत अच्छी चीज है, देखू ?

लीला ने अपू के हाथ मे कलम देते हुए हसकर कहा 'लो मैं यह कलम तुम्हे हमेशा के लिए दे देती हू।'

अपू ने अवाक् होकर लीला की तरफ देखा, फिर लज्जित होकर बोला 'नही, मैं नही लूगा।'

लीला बोली 'क्यो ?'

—ऐसे ही।

—क्यो ?

—नही।

लीला कुछ दुखी हुई, बोली . 'ले न लो। मैं पिताजी से दूसरी माग लूगी। लो हाथ दिखलाओ। यह रही कलम, बस ! तुम्हारी हो गई।'

यह मामला अपू को बिलकुल अद्भुत मालूम हुआ, उसने कहा 'पर तुम्हे कोई डाटे तो।'

लीला बोली . 'फाउण्टेनपेन देने के लिए ? नही, कोई नही डाटेगा। मैं मा से कह दूगी कि मैंने अपूर्व को दे दिया। पिताजी से और एक माग लूगी। पिताजी का फोटो देखोगे ? वह कलैण्डर के बगल मे टगा है, ठहरो अभी उतारती हू।'

इसके बाद लीला ने कई फोटो उतारे और दिखाए। इसके बाद आल-मारी से कुछ किताबे निकालकर कहा · 'मास्टर साहब ने खरीद दी हैं, तुम किस स्कूल मे पढते हो ?'

अपू काशी मे कुछ दिनो तक स्कूल मे पढा था, फिर उसने छोड़

मौका नही लगा था। बोला . 'काशी मे पढता था, अब नही पढता हू।'

अन्तिम बात कहने मे सकोच हो रहा था। इसलिए उसने ऐसे कहा मानो न पढना कोई बडा भारी पुरुषार्थ हो। एक पुस्तक मे बहुत-सी तस्वीरें थी। अपू ने कहा ' मुझे एक बार पढने के लिए दोगी ?'

लीला बोली 'ले लो, मेरे पास ऐसी बहुत-सी तस्वीरवाली किताबें हैं। तीन साल के 'मुकुल' की जिल्दें हैं। मा के कमरे की अलमारी मे हैं, तुम पढो तो मैं ला दू।'

अपू बोला : 'मेरे पास भी किताबें हैं, लाऊ ?'

लीला बोली · 'चलो तुम लोगो के कमरे मे चलें।'

पर लीला को अपनी कोठरी मे ले जाने मे अपू को लज्जा मालूम हो रही थी। वहा कोई सामान नही था। तकिए के गिलाफ फटे हुए थे, अरगनी पर ओढने की कथडी लटकी हुई थी। लीला फिर भी गई। अपू ने अपने टीन का बक्स खोलकर मुस्कराते हुए एक पुस्तक निकाल ली और गर्व के साथ कहा। 'इसमे मेरा लेख है, देखो, छापे के हरफो मे मेरा नाम लिखा हुआ है।'

लीला ने जल्दी से उसे लेते हुए कहा : 'देखू।'

यह काशी के स्कूल की वह मैगजीन थी। हरिहर अपने लडके की लिखी हुई कहानी छपी हुई देखकर नही गए। लीला पढने लगी और अपू उसकी बगल मे बैठकर उसकी दृष्टि का अनुसरण करता हुआ उसकी पढी हुई पक्तियो को पढने लगा। उसने उसे समाप्त कर प्रशसा की दृष्टि से अपू को देखा और थोडी देर देखने के बाद बोली 'अच्छी तो है, मैं इसे ले जाती हू, मा को दिखाऊगी कि यह तुम्हारी लिखी हुई है।'

अपू को बहुत लज्जा मालूम हुई। बोला : 'नही !'

पर लीला नही मानी। वह पत्रिका ले गई। बोली 'इसमे निश्चिन्दिपुर लिखा है, निश्चिन्दिपुर कहा है ?'

— निश्चिन्दिपुर हमारे गाव का नाम है। वही हमारा असली घर है। हम काशीजी मे तो केवल एक साल रहे।

इतने मे छोटी मोक्षदा दरवाजे के पास आकर झाकती हुई बोली :

'दीदीजी, तुम यहा हो और मैं उधर परेशान हो रही हू। मास्टर साहब भी बैठे बैठे थक गए। मैंने भी ऊपर-नीचे सारे कमरे खोज डाले, किसे पता था कि तुम इस सडी कोठरी मे बैठी होगी। चलो…'

लीला बोली 'तू जा मैं आऊगी।'

छोटी मोक्षदा बोली 'यह कोई बैठने की जगह है? यहा हम ही लोग का सिर दर्द करने लगता है, वहा तुम कैसे बैठोगी? अस्तबल के ये पछाही सईस कभी घोडो की जगह पर न तो झाडू लगाते हैं और न धोते है। दीदीजी, यह तो बहुत बुरी बास आ रही है, चलो, यहा से जल्द निकलो। और एक मिनट नही।'

लीला बोली 'चल मैं नहीं जाती। मैं आज नही पढूगी। जाकर कह दे कि मैं नही पढती। तुझे यहा पर किसने बकवास करने के लिए कहा है? चल, माताजी से जाकर कह दे कि मैं ऐसा कह रही हू।'

छोटी मोक्षदा पाव पटकती हुई चली गई। अपू बोला. 'तुम्हारी मा नाराज तो नही होगी? तुम उससे उस तरह क्यो पेश आई?'

अगले दिन दोपहर को अपू अपने कमरे मे सो रहा था। किसीके धक्के से नीद टूट जाने पर उसने देखा कि लीला बिस्तरे के पास मौजूद है और मुस्करा रही है। अपू फर्श पर चटाई बिछाकर सो रहा था। लीला ने घुटने के बल बैठकर उसे धक्का दिया था। अब भी वह उसी ढग से घुटनो के बल खडी-खडी कौतुक भरी हुई बडी-बडी आखो से उसे देख रही थी। उसने हंसकर कहा: 'वाह, यह अच्छा रहा! दोपहर को भी कोई इस तरह सोता है? मैंने बाहर से पुकारा तो देखा कि यहा तो खर्राटे भरे जा रहे हैं।'

अपू धोती के किनारे से अपना मुह पोछते-पोंछते जल्दी से उठ बैठा, बोला सवेरे पढने नही आई? मैं तो पढने का कमरा और दूसरे सारे कमरे देख गया, पर कही तुम्हारा पता नही लगा।'

लीला ने अपू के स्कूल की वह पत्रिका अपू के हाथ मे दे दी और बोली 'मैंने कल रात को तुम्हारी कहानी मा को पढकर सुनाई। मा ने स्वय भी पढी। उन्हे बहुत अच्छी लगी।'

अपू की बाछें खिल गई। साथ ही उसे बहुत लज्जा और सकोच

का अनुभव हुआ। तो मझली बहूरानी ने उसकी कहानी पढी है ?

लीला बोली . 'मेरे पढने के कमरे मे चलो, वहा मैंने तुम्हारे लिए मखा-माथी' की जिल्दे रख दी हैं।'

अपू ने अरगनी की तरफ देखा। उसकी अच्छी धोती अभी तक सूखी नही थी। इस समय वह जो धोती पहने था, उसे पहनकर वाहर नही जाया जा मकता। बोला . 'अभी नही जाऊगा।'

लीला ने विस्मय के साथ कहा . 'क्यो ?'

अपू ने होठ दबाकर कौतुक-भरी हसी हस दी। उसे नही मालूम था कि इस तरह उसका चेहरा कितना सुन्दर दिखता था। लीला ने फिर प्रार्थना के स्वर मे कहा · 'चलो, चलो।'

अपू ने फिर उसी तरह मुस्करा दिया।

— तुम बडे जिद्दी लडके हो जी। एकदफे 'नही' कह दिया तो फिर 'हा' नही कहने का ? यही बात है न ! अच्छा ठहरो, यहा पुस्तक

अपू से हसी रोकी नही गई और वह फिर खिलखिलाकर हस पडा। लीला बोली · 'बात क्या है ? इनना क्यो हस रहे हो ! नही, नही, क्या बात है ? बताओ। बताना ही पडेगा।'

अपू ने अरगनी की तरफ देखकर हसी-भरी आखो से इशारा-भर किया, कुछ कहा नही।

अबकी बार लीला समझ गई। अरगनी के पास जाकर धोती छूकर बोली : 'अभी कब सूखी है, तुम बैठो, मैं किताब ले आती हू। तुमने फाउण्टेनपेन से लिखा है ? क्यो अच्छा लिखता है न ?'

इसके बाद लीला की लाई हुई पुस्तक दोनो देर तक देखते रहे। पुस्तक को चटाई पर रखकर दोनो अगल-बगल घुटनो के बल औधा लेटकर देख रहे थे। लीला के रेशम की तरह चिकने नरम बाल अपू के खुले हुए बदन से लग रहे थे, जिससे उसे कैसा-कैसा मालूम हो रहा था। एकाएक लीला ने पुस्तक से मुह उठाकर कहा 'तुम गाना जानते हो ?'

अपू ने सिर हिलाकर हामी भरी।

—तो एक गा दो।

—तुम जानती हो ?

—जरा-जरा, शादी के दिन नही सुना ?

छोटी मोक्षदा कमरे मे झाककर बोली : 'यह रही दीदीजी। मैंने सोचा जो ऊपर नही है पढने के कमरे मे नही हैं तो जरूर यहा होगी। इधर आओ, दूध पी लो, ठडा हो गया, हाथ मे लेकर तबसे मारी-मारी फिर रही हू।'

चादी के छोटे गिलास मे एक गिलास दूध था।

लीला बोली : 'रख जा, आकर बाद को गिलास ले जाना।'

नौकरानी चली गई। थोडी देर तक तस्वीर देखना जारी रहा। बीच मे लीला दूध का गिलास हाथ मे लेकर बोली : 'तुम आधा पी लो।'

अपू ने लज्जित होकर कहा : 'नही।'

—तुम्हे हर बात के लिए खुशामद क्यो करनी पडती है। हमारी मुलतानी गाय का दूध है, बिलकुल खीर की तरह है, मेरे अच्छे अपू।

अपू ने आख नचाते हुए कहा : 'अच्छे अपू। बडी आई है!'

लीला ने दूध का गिलास अपू के मुह से लगाकर सिर हिलाते हुए कहा : 'बहुत शरमा-शरमी हो गई, लो मैं आख मूद लेती हू, तुम पी लो।'

अपू ने एक घूट मे थोडा-सा दूध पीकर मुह हटा लिया और जल्दी से धोती के किनारे से मुह पर लगे हुए दूध का दाग पोछ लिया।

लीला ने गिलास मे मुह लगाकर बाकी दूध पी लिया, बाद को वह भी खिलखिलाकर हसने लगी।

—अच्छा मीठा दूध है न ?

—तुमने मेरा जूठा क्यो पिया ? दूसरे का जूठा खाया जाता है ?

—मेरी खुशी—कहकर वह कुछ रुककर बोली : 'तुमने कहा कि तुम तस्वीर छापना जानते हो या तुम खाक जानते हो। आज मेरी कुछ तस्वीरे छाप तो दो। तब जानू।'

२१

जेठ के बीचोबीच सर्वजया ने माग-जाचकर किसी तरह अपू के जनेऊ की व्यवस्था की। दूसरे का घर था, इसलिए ठाकुरजी के सामनेवाले सहन के किनारे डरते-डरते अनुष्ठान समाप्त हुआ। ब्राह्मणी मौसी ने लड्डू बनाने मे सहायता दी। दो-एक महाराज न्योता जीमने के लिए बुलाए गए। बाहर के सम्भ्रान्त व्यक्तियो मे वीरू गुमाश्ता और दीनू खजाची थे। जनेऊ का अनुष्ठान समाप्त हो जाने के कुछ दिनो बाद अपू अपनी कोठरी मे बैठकर लीला की दी हुई 'मुकुल' की एक जिल्द पढ रहा था। इतने मे खुले दरवाजे से किसीने प्रवेश किया। अपू अपनी आखो पर तो विश्वास ही नही कर सका। बोला 'वाह, तुम कब आई ?'

लीला कौतुक और हसी-भरी आखो से खडी थी। अपू बोला · 'वाह, तुम तो अच्छी रही। कह गई कि कलकत्ते से सोमवार को आऊगी, पर कितने ही सोमवार निकल गए, लौटने का नाम नही लिया ··'

लीला हसकर फर्श पर बैठ गई। बोली . आऊ तो कैसे, स्कूल मे भर्ती हो गई हू, पिताजी ने भर्ती करा दी, पिताजी की तबियत खराब है। अब हम लोग कलकत्ते मे ही रहेगे। कुछ दिनो की छुट्टी, है, इसलिए मा के साथ आई। फिर बुधवार को चली जाऊगी।'

अपू के चेहरे से हसी गायब हो गई। बोला 'इसके माने यह हुए कि अब तुम लोग यहा नही रहोगी।'

लीला बोली · 'पिताजी की तबियत अच्छी हो जाए तो फिर आऊगी।'

उसने बाद मे फिर मुस्कराकर कहा 'जरा आख तो बद किए रहो।'

अपू बोला : 'क्यो ?

—करो ना।

अपू ने आखे बन्द कर ली और साथ ही साथ उसके हाथ मे कोई एक भारी चीज आ गई। अपू के आख खोलते ही लीला खिल-खिलाकर हस पडी। एक कार्ड-बोर्ड का बक्स उसकी गोद मे रखा

हुआ था। लीला ने बक्स खोलकर दिखाया कि धोती-चादर का अच्छा-सा देसी जोड़ा और रेशम का एक कुर्ता है। लीला ने हँसकर कहा: 'मा ने तुम्हारे जनेऊ के लिए दिया है, अच्छा है न? तुम्हे पसन्द है?'

धोती और चादर खास करके कुर्ता कीमती था। ऐसी चीज़ काम में लाने की बात तो दूर रही, इस घर मे पैर रखने से पहले अपू ने ऐसी चीज़ें देखी भी नही थी।

लीला ने अपू के चेहरे की ओर देखकर कहा: 'महीने-भर के अन्दर तुम्हारा चेहरा बदल गया है। और भी बड़े दिख रहे हो। नये बाम्हन का जनेऊ जरा देखू। कान छेदने मे लगा तो नही? मेरे छोटे ममेरे भाई का भी जनेऊ हाल ही मे हुआ है, वह तो रो पड़ा था।'

एकाएक अपू ने 'मुकुल' की एक जिल्द दिखाकर कहा 'तुमने यह कहानी पढ़ी है?

लीला बोली 'कौन-सी? देखू।'

अपू ने पढ़कर सुनाई। दो-तीन सौ वर्ष पहले स्पेन देश का एक जहाज, जो धन तथा रत्नो से पूर्ण था, कही डूब गया। बहुतो ने उसकी तलाश की, पर कोई यह पता नही पा सका कि कहा वह जहाज डूबा था। अपू ने अभी-अभी यह कहानी पढ़कर बहुत आनन्द उठाया था।

बोला 'कोई उसका पता नही लगा सका। जानती हो उसमे कितने रुपये हैं? इकाई, दहाई, सैकड़ा, हजार, दस हजार, लाख, उसमे पचास लाख पाउड की सोना-चादी थी। एक पाउड तेरह रुपये का होता है, अब गुणा लगाकर देखो।' कहकर उसने खुद ही गुणा लगाया और जिस कागज़ पर गुणा लगाया था उसे दिखाते हुए कहा: 'यह देखो इतने रुपये हुए।'

उसने इससे पहले भी यह हिसाब लगाया था। उसका चेहरा एकाएक चमक उठा, बोला. 'मैं जब बड़ा हो जाऊगा, तो मैं उसकी तलाश मे जाऊगा और देख लेना मैं उसका पता लगाकर ही दम लूगा।'

लीला ने कुछ सदेह के साथ कहा. 'तुम जाओगे? भला तुम

कैसे पता पाओगे कि जहाज कहा पर है ? यह तो बताओ ।'

—यह देखो लिखा है 'पोर्तोप्लाता के पास के समुद्र-गर्भ मे । मैं जरूर निकाल लूगा ।

यह कहानी पढकर उसने सोचा था कि यह अच्छा ही हुआ कि अभी तक कोई इस जहाज का पता नही लगा पाया । जो सब लोग सब चीज खोज लेंगे तो उसके लिए फिर क्या रह जाएगा ? फिर वह बडा होकर क्या करेगा । कही उसके बड़े होने तक कोई उसका पता न लगा ले ।

लीला कम उम्र होने पर भी बडी बुद्धिमती है । उसने सोच-साचकर कहा 'तुम्हे उनकी तरह जहाज कहा मिलने लगा ? तुम्हे एक जहाज की जरूरत होगी, उतने ही बडे जहाज की '

—वह मिल जाएगा, मैं खरीद लूगा, बडे होने पर मेरे पास रुपये नही होगे क्या ?

अबकी बार शायद लीला को कुछ हद तक विश्वास हो गया । उसने अब इस विषय पर कोई तर्क नही छेडा । थोडी देर बाद बोली 'क्या तुम कभी कलकत्ता गए हो ?'

अपू ने सिर हिलाकर कहा . 'नही, मैंने नही देखा । क्या बहुत बडा शहर है ? इससे भी बडा ?' .

लीला हसकर बोली 'कहा राजा भोज, कहा भुजुआ तेली ?'

—काशी से भी बड़ा ?

—मैंने काशी नही देखी ।

इसके बाद वह अपू को अपने पढाई के कमरे मे ले गई । एक कापी दिखाकर बोली : 'देखो तो कैसा फूल का पौधा बनाया है, ड्राइग कैसी है ?'

अपू थोडी देर बाद बोला : 'मैं जाकर लेटता हू । मेरा सिर बहुत दुख रहा है ।'

लीला बोली . 'ठहरो । मैं सिरदर्द मिटाने का एक मन्त्र जानती

के लिए एक पहलवान है। उसीसे मैंने यह सीखा है। बहुत अच्छा है न ? ठीक हो गया ?'

थोड़े दिनो बाद लीला और उसकी मा फिर कलकत्ता चली गई।

अपू मा से कहकर एक छोटे स्कूल मे जाने लगा। जिस बडी सड़क के किनारे इनका घर था, उससे कुछ दूर चलकर बाई तरफ छोटी-सी गली मे एक एकमजिले मकान मे स्कूल लगता था। पाचेक मास्टर थे, टूटी हुई बेंचें तथा हत्थे टूटी हुई कुर्सिया और कालिख उड़े हुए ब्लैक-बोर्ड थे। कुछ पुराने मानचित्र थे। स्कूल का बस इतना ही सामान था। स्कूल के सामने ही खुली नाली चलती थी, अपू की श्रेणी से खिडकी से झाकने पर बगल के मकान की पलस्तर उडी हुई दीवारें दीख पडती थी। वह स्कूल जाते समय देखता था कि भगी नाली की सफाई करके बीच-बीच मे गदगी का ढेर नाली से ऊपर उठाकर रखता जा रहा है। दिन-भर स्कूल के अन्दर हवा रुकी-सी रहती थी। पास ही एक पछाही भडभूजा कच्चा कोयला जलाकर दोपहर के बाद भाड सुलगाता था, इसलिए कच्चे कोयले के धुए की पतली-सी महक वातावरण मे बनी रहती थी। अपू के सिर मे जाने कैसा दर्द होता था, जो स्कूल के बाहर आने पर भी ठीक नही होता था।

सवेरे का समय था। अपू ने फाटक पर आकर देखा कि बच्चो की गाडी लेकर लडके खेल रहे हैं, यह अभी-अभी तैयार होकर आई है, डडा लगी हुई लोहे की कुर्सी है, चमड़े की गद्दी है, बडे-बडे पहिये हैं, देखने मे सुन्दर चमचम है। वह पास ही खडा देख रहा था कि रमेन बोला : 'अरे आकर जरा धक्का तो लगा।'

जब से यह गाडी आई तब से मन ही मन अपू को लोभ था, वह खुश होकर बोला : 'मैं ढकेल रहा हू पर मुझे एक बार चढने तो दोगे न ?'

रमेन बोला : 'अच्छा-अच्छा, देखा जाएगा, अभी जोर से धक्के तो लगा।'

थोडी देर तक खेलने के बाद एकाएक रमेन ने कहा : 'अच्छा,

अब खत्म करो, फिर होगा।'

इसके बाद वे लोग गाडी लेकर चले जाने लगे, यह देखकर अपू बोला : 'मैं ज़रा चढूंगा नही ?'

रमेन बोला : 'चल-चल, इस जून चढ़ना नही हो सकता। ज्यादा चढ़ने से गाड़ी टूट जाएगी। चल देखेंगे। उस जून देखा जाएगा।'

क्षोभ के मारे अपू की आंखो मे आंसू आ गए। वह इतनी देर इस आशा मे धक्के लगाता रहा कि चढने में उसकी बारी आएगी।

बोला : 'वाह, आपने तो वादा किया था कि मुझे मेरी बारी में चढने देंगे। मैंने सबकी बारी पर गाड़ी ढकेली, उस दिन भी आप लोगों ने ऐसा ही किया। यह कोई अच्छी बात है ?'

रमेन बोला 'तो कौन तेरे पैरो मे पड़ने गया था कि गाड़ी ढकेल। तुझे किसने गाडी चढ़ाने को कहा ? गाड़ी खरीदने में पैसा नही लगता ?'

अपू बोला : 'आपने कहा, सन्तू ने कहा, धक्के लगाते-लगाते मेरे हाथ में फफोले पड गए, और आपने बिलकुल वादाखिलाफी की, यह अच्छा रहा !'

रमेन तैश मे आकर बोला : 'चल, मैंने नही कहा।'

सन्तू बोला : 'उ र्रं र्रं र्रं र्रं ! यह जुज्झू देखा है ?'—कहकर उसने हाथ से जुज्झू बनाया।

अचानक बडे बाबू के लड़के टेबू ने उसके गले मे हाथ डालकर धक्का देते हुए कहा : 'चल, चल, नही चढाएगे, हमारी खुशी, तू अपनी कोठरी की तरफ जा। यहां क्यो खेलने आता है ?'

टेबू अपू से कमउम्र था, इसलिए सम्भव है उसके द्वारा किए हुए अरमान के कारण या बाकी लोगों के व्यंगों के कारण अपू का दिमाग काबू में नहीं रहा और उसने झटके देकर गला छुडाते हुए टेबू को एक धक्का मारा, नतीजा यह हुआ कि टेबू चक्कर खाता हुआ दीवार से जाकर टकराया। उसका माथा दीवार से लग गया और साथ ही साथ कुछ खून भी आ गया और वह चीखकर रोने लगा।

नौकर-चाकर दौडते हुए आए। खानसामा, दरबान दौड़े, ऊपर की बैठक मे बड़े बाबू सवेरे-सवेरे कचहरी कर रहे थे, वे भी दलबल-

सहित नीचे उतर आए। हर तरफ से दस आदमी पानी का लोटा, पखा, पट्टी लेकर दौड़ पडे। कुहराम मच गया।

जरा गडबड कम होने पर बडे बाबू ने कहा : 'देखू किसने मारा है ? वह कहा है ?'

रामनिहोरासिंह दरबान ने ढकेलते हुए अपू को बडे बाबू के सामने कर दिया। बडे बाबू बोले : 'यह कौन है? यह वही काशी से आई हुई महाराजिन का लडका है न ?'

गिरीश सरकार आगे बढते हुए बोला : 'बहुत बुरा लड़का है, और बदतमीज इतना है कि उस दिन जब ठेठर हो रहा था, तो यह जाकर सबके सामने बाबूओ की जगह पर डट गया था। मैंने हट जाने के लिए कहा तो लगा मुझसे उलझने। फिर उस दिन देखा कि सेठो के मकान के मोड पर यह एक लाल कुर्त्ता पहनकर बडंसाई पीते हुए आ रहा है, इसी उम्र मे एकदम सारे गुण आ गए हैं।'

बडे बाबू ने रमेन से कहा · 'आज सवेरे तुम लोगो का मास्टर नहीं आया ? पढना-लिखना चूल्हे मे गया और यह हो रहा है ? चलो कोई मेरा बेंत तो ले आओ। इसके साथ खेलने के लिए किसने तुम लोगों से कहा ?'

रमेन रुआसा होकर बोला : 'वही हम लोगो के साथ खेलने आता है, हम लोग कब उससे खेलते हैं, बल्कि सन्तू से पूछिए। यह आपकी वह तस्वीरवाली अंग्रेजी मैगजीन की तस्वीरें देखना चाहता है, बड़ी बैठक मे घुसकर चीजो को उलट-पुलटकर देखता है।'

अब अपू की बारी थी। बड़े बाबू ने कहा : 'इधर आओ। तुमने टेबू को क्यों मारा ?'

डरके मारे इसके पहले ही अपू की घिग्घी-सी बंध गई थी, उसने क्रोध में आकर टेबू को धक्का जरूर दिया था पर वह क्या जानता था कि बात इतनी बढ जाएगी। उसने किसी तरह लड़खड़ाती हुई जबान से कहा : 'टेबू ने पहले मुझे···मुझे·······'

बड़े बाबू गरजते हुए बोले : 'स्टुपिड, छोटे मुह बड़ी बात करता है, किसने तुझे इन लोगो से मिलने-जुलने को कहा है ? ए ! जरा बेंत तो लाओ, आगे बढकर आओ, भागो नही तो······'

लप्प से एक वेंत उसपर पडा तो उसने विस्मय के साथ बड़े वावू और उनके फिर से उठे वेत की तरफ देखा। इससे पहले उसपर कभी मार नही पडी थी, यहां तक कि उसके पिताजी ने भी कभी उसपर हाथ नही छोडा था। उसका विभ्रान्त मन जैसे पहले-पहल मार खाने के सत्य को ग्रहण कर पाया, वाद मे उसने अपने अनजान में मार रोकने के लिए हाथ उठा दिए। पर इससे मार नही रुकी और वेंत पडती रही। लप्प-लप्प की आवाज़ सुनकर टेबू को भी माथे का दर्द भूलकर इधर देखना पडा। महाराजिन का लडका फिर कही सिर पर न चढे, इस दृष्टि से वडे वावू ने उसे अच्छी शिक्षा दी। दूसरी वेंत होती तो टूट जाती पर यह वेत शायद वहुत ही कीमती थी।

बडे बावू कुछ मुस्ताकर वोले 'आवारा छोकरा, आज मैं तुझे चेतावनी दिए देता हू कि फिर मैंने सुना कि तुम इस घर के किसी लडके के साथ मिले हो तो मैं फौरन कान पकडकर बाहर निकाल दूगा'—कहकर किसीकी तरफ देखते हुए वोले 'देखिए धीरेन वावू मा विधवा है, मैनेजर सतीश वावू काशी से ले आए, सोचा कि अपनी बिरादरी की औरत है, पडी रहे; पर मा तो रसोई करती है और यह रगीन कुर्ता पहनकर चुरट पीता फिरता है।'

धीरेन वावू वोले 'यह सब ऐसे ही होता है, इसके बाद कोकीन खाएगा, मा का बक्स तोडेगा, यही नियम है, फिर ठहरा भी बनारस का······'

घर के अन्दर सब वातें नही पहुचती, पर सर्वजया को अपू पर मार पड़ने की वात मालूम हो गई। लोगो ने ज़रा नमक-मिर्च लगाकर कहा। मालकिन वोली: 'जो इस तरह गुडा हो तो भई फिर क्या किया जाए ?···' इत्यादि।

सर्वजया ने रोटीघर से आकर देखा कि अपू स्कूल चला गया है, मां से कुछ नही वोला। वह मा को कभी यह सब बातें नही बताता। क्रोध, दु ख तथा क्षोभ के मारे सर्वजया को गश-सा आने लगा। सारे शरीर से जैसे अगारे छूटने लगे, वह कोठरी मे न रह पाकर बाहर के सकरे बरामदे मे आकर खड़ी हो गई।

उसके अपू के बदन पर हाथ उठाना ! वह तो अभी तक कहता

रहता है—मा जब तुम रसोईघर से सीढ़ी चढ़कर आओगी तो मैं एक दिन रात को तुम्हे डर दिखलाऊगा। भला इन अपू को अक्ल ही कितनी है। पता नही कितनी लगी थी। वहा किसने उसको तसल्ली दी होगी, किसने उसका रोना सुना होगा ?

सर्वजया के अन्दर से दु ख फूट पडने लगा।

रात अधेरी थी। आसमान मे कुछ तारे चमक रहे थे। अन्नदन की छत के पास आवले के पेड की डालो पर हवा टकरा रही थी। सहन के कोने मे बने हुए लोहे के फूटे हौज के पास बैठकर रोने के मारे उसका सारा शरीर कापने लगा।

—ठाकुरजी, हे ठाकुरजी, वह मेरे बडे दुलार की वस्तु है। तुम जानते हो कि वह एक घडी के लिए भी आख से ओझल हो जाए तो मैं बेचैन हो जाती हू, जो कुछ सजा देनी है, वह मुझे ही देना, उसे कुछ न कहना। मेरा दिल फटा जा रहा है, मैं सह नही सकूगी।

आज कुछ जल्दी अपू के स्कूल की छुट्टी हो गई। श्रेणी के लडको ने कहा कि अपू को उनके फुटबाल मे रैफरी बनना पडेगा। अपू बहुत खुश हुआ। इस शहर मे आने से पहले उसने कभी फुटबाल देखी भी नहीं थी, वह अच्छा खिलाड़ी भी नही है, फिर भी श्रेणी के लड़के उसीको सबसे ज्यादा पसन्द करते हैं और अक्सर उसे रैफरी रहने के लिए कहते हैं।

उसने कहा : 'मैं घर से वह बड़ी सीटी ले आऊ, बक्स मे रखी है, मैं ठीक चार बजे खेल के मैदान मे पहुच जाऊगा।'

रास्ते मे चलते-चलते अपू को सवेरे की बात याद आई। आज दिन-भर वह यही बात सोचता रहा। इसमे सन्देह नही कि बर्डसाई पीते-पीते वह गिरीश सरकार से टकरा गया था, पर वह रोज बर्ड-साई थोडे ही पीता है ? उस दिन मझली बहूरानी का दिया हुआ लाल कुर्ता पहनकर स्कूल से लौटते हुए उसके दिमाग मे यह बात आई थी कि बाबू लोग इस तरह का कुर्ता पहनकर बर्डसाई पीते हैं, इसलिए वह भी पीएगा। इसलिए उसने नाश्ते के पैसे से बर्डसाई खरीद ली थी, पर निश्चिन्दिपुर मे जिस दिन उसने चोरी से चुरुट पीया था, तब भी उसे चुरुट पसन्द नही आया था, और उस दिन भी

नही आया। उसके मन मे यह बात आई थी कि इससे तो एक पैसे के चने ले लेता तो पेट तो भरता। बर्डसाई कोई खरीदकर पीने की चीज़ है ? गिरीश सरकार को यह सब कुछ नही मालूम, फिर भी उलटा-सीधा बक गया।

खैरियत यह है कि लीला यहां नही है। होती तो बडी लज्जा की बात होती। शायद मा को भी पता नही लगा। मां को पता न लग जाए इसलिए जल्दी से वह स्कूल चला आया था।

लीला कितने दिनो से यहां नही आई। परसाल गई तब से नही आई। अब आएगी भी तो वे उससे बात करने थोड़े ही देंगे।

घर लौटते समय फाटक के पास आकर उसने सुना कि ऊपर की बैठक में ग्रामोफ़ून बज रहा है। यह आवाज़ कान मे जाते ही वह खुशी-भरे उत्सुक नेत्रो से दो मंजिले के जंगले के नीचे वाली सड़क पर खड़ा हो गया। रास्ते से गाने के सारे शब्द अच्छी तरह सनाई नहीं पडते थे। पर सुर बडा मोहक था। सुनते-सुनते वह स्कूल, खेल रैफरीगीरी, उस जून की मार, सारी बातें एकदम भूल गया। गाने सुनते ही उसका मन जाने कहा की उड़ान भरने लगता है। जब वह निश्चिन्दिपुर मे नदी के किनारे टहलने जाया करता था तो कई बार देखता था कि उस पार के सरपत के मैदान में सेमर के पेड छोटे लाल फूलो से भरे हुए हैं। उनके पीछे न जाने कितनी दूर तक नीला आकाश एक चित्र-सा फैला हुआ है। फूस के मैदान जैसे चित्र पर अंकित हैं। यहा तक कि लाल फूल, सेमर का पेड, सूखी डाल पर बैठा हुआ अशांत पंछी सब तूलिका से बने हुए लग रहे थे। उन सबके पीछे कही पर वह देश, बहुत दूर वाला देश, उसे पता नही कौन-सा देश है, जो उसके लिए केवल उसी समय इंद्रियग्राह्य होता था जब वह खुश होता था।

कोई जैसे उसे पुकारता है। न जाने कितनी दूर से कोई उच्छ्वसित आनन्द में परिचित स्वर मे पुकारता है—अपू···उ-उ-उ-उ !

इसपर मन खुशी के मारे कह उठता है—आ-आ-आ-आ-आ-ता हूं।

जब वह अपनी कोठरी में लौटा तो मां ने पूछा : 'क्या बात है ? आज तू रोज़ से कुछ जल्दी आया है ?'

अपू बोला : 'ऊपर की श्रेणी के लड़कों ने गेंद-दलने के खेल में जय पाई है, इसलिए हाफ स्कूल रहा।'

मा बोली : 'आ इधर बैठ।'

उसके बाद कुछ देर तक बेटे के शरीर पर हाथ फेरने के बाद वह हिचकिचाहट के साथ बोली : 'मैंने सुना कि उन लोगों ने तुम्हें बुलाकर किसी बात पर डाटा था।'

—टेबू को कुछ लगा था, इसलिए बड़े बाबू ने बुलाकर क्या नाम है···

—डाटा-वाटा तो नहीं ?

—नहीं।

मा कुछ देर तक चुप रहकर बोली . 'एक बात सोच रही हूं, यहां से चल क्यों न दिया जाए ?'

उसने आश्चर्य के साथ मा के चेहरे की तरफ देखा, फिर एक-एक खुश होकर बोला कहां चलोगी मा, निश्चिन्दिपुर ? अच्छी बात तो है। मैं वहां पुरोहिती करूंगा, अब श्लोक तो हो ही चुका है। अपनी जन्मभूमि है। बहुत अच्छा रहेगा। अब यहां नहीं रहूंगा।'

सर्वजया बोली 'दो साल से यही बात सोच रही हूं। कह तो रहा है कि वहां चलूंगा, पर वहां अब क्या रह गया है ? घर है तो उसपर से तीन वर्षाएं निकल गई हैं, अब उनमें से [illegible] पीछे ही होगा। बाबा आदम के जमाने का मकान है। [illegible] धानवाली जमीन थी, पर वह भी तो ·· । नोटू तो पता नहीं होगी भी और जगह नहीं मिलेगी। वहां जाना माने दुश्मनों को [illegible] का मौका देना है।'

थोड़ी देर चुप रहने के बाद बोली 'अच्छा [illegible] दिया जाए। चल हम लोग काशी चलें।'

कोई खास फैसला न हो सका। अभी तक मा ने खाना नहीं खाया था। वह नहाकर फिर रसोईघर में चली गई। [illegible] मा के [illegible] बात आई कि उसका गला अच्छा है। दीदी भी कहती थी और नौकरी के दोस्त लोग भी ऐसा ही बताते थे। जो [illegible] किसी नौटंकी के [illegible] में शामिल हो जाए तो उसे ले लेंगे [illegible]

है। वह यहा से मा को ले जाएगा।

कितनी तेज गर्मी है! रसोईघर की चिमनी से घूम-घूमकर धुआ ऊपर को उठ रहा है। कार्निस पर धूप वनी है। अभी से कोठरी के अन्दर अधेरा हो गया है। अस्तवल मे महताव सईस हिन्दी मे कुछ बड़बड़ा रहा है। पत्थर वाले फर्श पर घोडो के खुरो के टाप से खटपट आवाज आ रही है। नाली की वही महक! उसके सिर मे इतना दर्द है कि मानो सिर फटा जा रहा है। उसने सोचा जरा सो लू, इसके वाद उठकर खेल के मैदान मे चलूगा। अभी तो सिर्फ तीन वजे है। धूप वडी तेज है।

विस्तरे पर लेटे-लेटे एक वात वरावर उसके मन मे आने लगी। अव तक उसने इस वात को इस रूप मे सोचा नही था। इतने दिनो तक उसके मन के किसी अस्पष्ट कोने में यह विचार वरावर स्पष्ट रूप से बना रहता था कि कुछ भी न होगा तो वे गाव मे लौट सकते हैं। यद्यपि जव वहा से चले थे तब लौटने का न तो कोई विचार था और न ही कोई वातचीत थी, फिर भी वह मोह वरावर किसी न किसी रूप मे वना ही रहा।

पर आज की सारी वातो से विशेषकर मा और बड़े वाबू की वात से उसकी निराश्रयता तथा गृहहीनता की वात स्पष्ट हो गई है। क्या वह कभी फिर गाव लौट सकता है? कभी भी नही? कभी भी नही?

यह प्रवास, यह गिरीश सरकार, इस प्रकार चोर की तरह हर समय दुवककर रहना! इससे तो अच्छा है कि मा और वेटा एक-दूसरे का हाथ पकडकर रास्ते मे निकल पड़ें। जीवन मे सव कुछ गया, पर क्या यही लोग चिरस्थायी रहेगे?

अस्तवल मे दो सईसो मे झगडा हो रहा था। रसोईघर की छत पर भात के लोभ मे कौओ के झुड इकट्ठे थे। थोडी देर वाद उसके मन मे यह वात आई कि वह एक ही वात को वडी देर से सोच रहा है। अस्तवल मे घोड़ो के खुरो की टपटप वन्द नही हुई थी। ऐसा लग रहा था जैसे वह मिट्टी के अन्दर कही समा रहा है ··मिट्टी के वहुत नीचे। ऐसा लग रहा था कि कोई नीचे से खीच रहा है।

अच्छा आराम मिल रहा था । सिर का दर्द जाता रहा था । इतना आराम था ।

ओह, कैसी चिलचिलाती हुई धूप है । दीदी भी अजीब लड़की है । इतनी धूप में कहीं वनभोजन होता है ? उसने कहा : 'दीदी मेंटल ! कहीं इतनी धूप में वनभोजन होता है ?'

रानी दीदी पास ही बैठकर जाने क्या-क्या कह रही हैं । रानी दीदी की बड़बड़ाती हुई बड़ी-बड़ी आँखें अभिमान से भरी हुई हैं । वह क्या करे ? निश्चिन्दिपुर में उनकी गुजर तो नहीं होती । यह रानी दीदी है या लीला है ?

हारान चाचा बाँस की बाँसुरी बेचने के लिए आए हैं । बहुत अच्छी बजाते हैं । उसने पिताजी से कहा : 'पिताजी मैं बाँसुरी खरीदूँगा, एक पैसा दो न ।'

उसके पिता उसके बड़े-बड़े बालों को हाथ पर से हटाते हुए दुलार के साथ बोले : 'तेरी कहानी अच्छी बनी है, छपने पर मुझे दिखाना बेटा ।'

उसने कहा : 'पिताजी कोकीन क्या है ? सिरीश मज़ूमदार ने कहा है कि मैं कोकीन खाऊँगा ।'

पिताजी के गले में कमलगट्टे की माला है । बिलकुल कथावाचक महोदय की तरह ।

उनके स्टेशन का नाम है, माझेरपाड़ा । लकड़ी की बड़ी-सी तख्ती पर लिखा है—मा-झे-र-पा-ड़ा । भारी पोटली पीठ में लटका-कर आगे-आगे चल रहा है, माँ उसके पीछे है । उसने लाल कुर्ता पहन रखा है । रास्ते में हर जगह सुन्दर छाया है । आकाश में सन्ध्या तारा का उदय हुआ है । हवा में बरगद के पके पत्ते की महक फैल रही है ।

निश्चिन्दिपुर का रास्ता खत्म होने में नहीं आ रहा है । वह चला जा रहा है, चला जा रहा है, चला जा रहा है । वह और उसकी माँ । इस रास्ते में वह अकेले कभी नहीं आया । यह रास्ता पहचान नहीं पा रहा है । 'ओ, दराती वाले चाचा, जरा निश्चिन्दिपुर का रास्ता तो बता दो । उसका निश्चिन्दिपुर, बेतवनी के उस पार है न ?'

उसकी मा ने कोठरी मे प्रवेश करते हुए कहा : 'अरे, अपू उठ। दिन बिल्कुल ढल गया। तूने कहा था कि कही खेलने जाऊंगा। उठ, उठ।'

मा की पुकार पर हड़बडाकर बिस्तरे पर उठ बैठा और चारो तरफ ताककर बोला : 'दिन एक दम ढल गया है। धूप बहुत ऊचे पहुंच गई है।' मां बोली : 'तूने कहा कि कही खेलने जाना है, तो गया नही ? बे-टेम कितनी देर तक सो गया। दू, तेरी वह सीटी निकाल दू ?'

मां ने बक्स से निकालकर सीटी रख दी, पर उसने रैफरीगीरी करने का कोई उत्साह नही दिखलाया। कोठरी के अन्दर तो अधेरा हो गया था। वह उठकर जंगले के पास अन्यमनस्क होकर चुपचाप खड़ा बाहर की तरफ देखता रहा। दिन बिल्कुल नहीं रह गया था। कितनी असहनीय उमस है ! अस्तबल की नाली की बदबू जैसे और भी बढ़ गई थी। फाटक से पास घटे मे टनटन से छ बजे।

अस्तबल के ऊपर जो आकाश है उसके पार पूरब की तरफ उसका प्रिय निश्चिन्दिपुर है।

निश्चिन्दिपुर देखे हुए कितने दिन हो गए।

ती—न साल।

वह जानता है कि निश्चिन्दिपुर उसे दिन-रात हर समय पुकारता है, शखारी तालाब उसे पुकारता है, बांस की झाडी उसे पुकारती है, सोनाडागा का मैदान उसे पुकारता है, कदम्ब तल्ले का साहब घाट उसे पुकारता है, देवी विशालाक्षी उसे पुकारती है।

जली हुई ज़मीन पर के नीबू के फूल की मीठी महक मे, सहजन की छाया मे फिर वह कब फिरेगा ? फिर कब वह उनके मकान के किनारे के शिरीष और सप्तपर्ण के जगल मे चहचहाना सुनेगा ?

इन दिनो उसकी प्यारी इछामती मे वर्षा का पानी आने लगा होगा। पनघट के रास्ते से सेमर के नीचे पानी आ गया होगा। झाड़ियो में नाटा काटा और जगली करेमा के फूल लगे होगे। जंगली अपराजिता के नीले फूलो से जगल का ऊपरी हिस्सा भर गया होगा। शायद उनके गांव के घाट पर कूच की झाड़ियो के बगल में राज

चाचा, जैसीकि उनकी आदत है, इस समय बेखबर नहाने आए होंगे। चालता पोता के मोड पर नये कनाढ के जंगल के किनारे-किनारे अक्रूर मल्लाह मछली पकडने के लिए डोंगा तैयार कर रहा होगा। आज वहा हाट का दिन है। ननद तालाब के उस बरगद के पीछे क्षितिज की गोद मे रंगीन आग के भाग की तरह सूर्य भगवान अस्ता-चल को जा रहे हैं और उसीके नीचे की पगडंडी से गाव के लडके पटू, नीलू, तीनू, भोला सब हाट से सौदा लेकर लौट रहे होंगे। इतनी देर मे उन लोगो के जंगल से घिरे मकान के आगन मे घनी छाया पड रही होगी, चिडिया चहचहा रही होगी। वह मीठा, नीरव, शान्त शाम का समय। वह पीली चिडिया आज भी दीवार पर की कचनार की डाल पर उसी तरह बैठी होगी। शायद मा के लगाए हुए नीबू के पौधे मे अब नीबू लग रहे होंगे।

थोडी देर बाद घरघूरे पर सन्ध्या का अन्धकार छाएगा, पर सन्ध्या हो जाने पर भी कोई दीया नही जलाएगा, घूम-घूमकर हर कमरे मे दीया नही दिखाएगा, कहानिया नही कहेगा, सुनसान घरघूरे के आगन में जो काले बादल की तरह जंगल छा गया होगा, उसमें झींगुर बोलेगा। रात अधिक होने पर पीछे के घने जंगल मे गूलर के पेड पर खूसट की बोली सुनाई पडेगी…कोई भूलकर भी कभी उस तरफ नही जाएगा। मा का लगाया हुआ वह नीबू का पौधा गहरे जंगल मे खो जाएगा। कोई उसकी बात नही जानेगा। करेला के फूल लगकर फिर अपने ही आप झड जाएंगे। बेर और पपीता धरती मे पडेंगे। पीले पंखोवाली चिडिया रो-रोकर फिरेगी।

जंगल के किनारे वह अपूर्व गाथा से भरी शाम हमेशा के लिए झूठ-मूठ आती-जाती रहेगी।

उस जून इतने लोगो के सामने वह बिना किसी कसूर के मारा गया था फिर भी उसकी आखो से एक बूद आसू भी नही आया था पर अब निर्जन कोठरी के जंगल पर अकेले खडे रहकर वह बुरी तरह रोने लगा। जब उसके उमडते हुए आसू उसके सुन्दर कपोलो पर से होते हुए बहने लगे, तब उसने आहें भरते हुए हाथ उठाकर व्याकुल स्वर मे कहा 'हे भगवान, तुम ऐसा करना कि हम लोग

फिर से निश्चिन्दिपुर लौट जाए। नही तो हम जी नहीं सकते। हे भगवान, हम तुम्हारे पैरों पड़ते हैं।'

पथ के देवता प्रसन्न होकर हसते हुए बोले—मूर्ख लड़के, तेरे पथ का अभी तेरे गांव के बांस की झाड़ी मे, डाकुओ वाले बरगद के नीचे या धलचीते के खेवा घाट मे अन्त कहा हुआ ? सोनाडागा मैदान से आगे, इछामती पार करके कमल के फूलो से भरे मधुखाली वाले गढे को बगल में रखकर बेत्रवती के खेवे से आगे चलकर तेरा रास्ता आगे की ओर सिर्फ आगे की ओर चला गया है। वह देश छोड़कर देशान्तर में, सूर्योदय को छोडकर सूर्यास्त की दिशा में ज्ञात के दायरे से अज्ञात के दायरे मे चला गया है।

—दिन-रात पार करते हुए, जन्म-मृत्यु पार करते हुए, महीना, वर्ष, मन्वन्तर, महायुग पार होकर रास्ता चला गया है...। तुम्हारे सुन्दर जीवन-स्वप्न पर सेवार और फफूंद लग जाते हैं फिर भी रास्ते का कभी अन्त नही होता, वह आगे ही चलता जाता है। उसकी शाश्वत वीणा की रागिणी को केवल अनन्त काल और अनन्त आकाश सुनते हैं।

—उसी रास्ते की विचित्र आनन्द-यात्रा का अदृश्य तिलक तेरे माथे पर लगाकर ही तो हमने तेरा घर छुड़ा दिया। चलो आगे चलें।

○ ○ ○

मुद्रक . शिक्षा भारती प्रेस, शाहदरा, दिल्ली-३२